Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योग और साधना

श्यामदेव खण्डेलवाल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योग और साधना

लेखक

श्यामदेव खण्डेलवाल

योगायतन फाउन्डेशन

33/बी गिर्राज नगर कौलोनी

किले के अन्दर, भरतपुर (राज०)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

योग और साधना

योग एवं आध्यात्मिक साधना
की
सरल एवं सहज विधियों का
वर्णन

लेखक
श्यामदेव खण्डेलवाल

प्रकाशक :
भारती पुस्तक मन्दिर
भरतपुर-321001 (राजस्थान)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकाशक—
भारती पुस्तक मन्दिर,
जनरल अस्पताल मार्ग, भरतपुर (राज.)

□

© सर्वाधिकार लेखक के आधीन हैं।

□

प्रथम संस्करण—
१४ जनवरी १९८६
मकर संक्रान्ति सं० २०४२ वि०

□

मूल्य—120·00 रुपये

□

मुद्रक—
प्रेम प्रकाशन, सिलैण्डर प्रिंटिंग प्रेस
बी-नारायण दरवाजा,
भरतपुर (राज०)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समर्पण

परम पूज्य पर-प्रकाश गुरुवर

श्री-श्री नवल किशोर गोस्वामी जी के

श्री चरणों में

तथा

परम पूज्य स्वर्गीय श्री मोतीलाल जी भगत

की पुण्य स्मृति में

जिनकी प्रेरणा से मुझे गुरु चरणों में आश्रय

एवं ज्ञान का आलोक मिला

–श्यामदेव खण्डेलवाल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुरु-संदेश

-* श्री हरि *-

"शिवमस्तु सर्व जगत:"

शिवालय आश्रम
ग्राम-लाखना
सांगानेर, जयपुर

भगवान के स्मरण मात्र से दु:ख दारिद्र मिट जाते हैं, मन गुरू कृपा का दास है सदाँ सद्गुरु से डरता रहता है, गुरु चरणों के पास मन रहे तो साधक को सन्तोष मिलता रहता है।

भगवद् भजन के द्वारा प्राणी भव बन्धन से उसी भाँति मुक्ति प्राप्त कर लेता है जैसे सर्प केंचुली छोड़ देता है।

इस कृति के द्वारा पाठकों का सात्विक मनोरंजन हो, मेरी यही एक मात्र इच्छा है, तथा श्याम देव को भक्ति भाव पूर्ण सुलेखन के लिए आशीर्वाद तथा बधाई।

शुभेच्छु

केशवाचार्यवंशोद्भवः — नवल किशोर गोस्वामी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संदेश

14, कृष्णा नगर
गोल बाग रोड,
भरतपुर

श्री श्यामदेव खण्डेलवाल द्वारा रचित "योग और साधना" आध्यात्मिक योग साधना का एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है। सरल भाषा और सुबोध शैली में रचित यह ग्रन्थ सामान्य पाठकों एवं साधकों के लिए हित कर होगा। इसमें आसन आदि योग के बहिरंग साधनों का वर्णन नहीं है। यह ग्रन्थ योग के अन्तरंग साधनों को अधिक महत्व देता है।

ग्रन्थ की शैली सरल, सुगम और रोचक है। जहाँ कथाओं आदि के सम्पुट ने इस ग्रन्थ की रोचकता बढ़ा दी है वहीं उदाहरणों से विषय भी अधिक स्पष्ट होता है।

सद्गुरूओं के सत्संग से ही अध्यात्म-साधना का मार्ग प्रशस्त होता है तथा अनुभव में ही अध्यात्म का मर्म प्रकाशित होता है। लेखक को गुरू कृपा और अनुभव दोनों का ही सौभाग्य प्राप्त है, इस द्विगुणित सौभाग्य से यह ग्रन्थ दुगना मार्मिक उपयोगी और महत्वपूर्ण बन गया है।

आशा है यह रोचक ग्रन्थ पाठकों में योग और अध्यात्म के प्रति रुचि जागरित करेगा।

डा० रामानन्द तिवारी
'भारतीनन्दन'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय सूची

अध्याय

1.	मृत्यु को स्वीकार करना ही सत्य को स्वीकार करना	17
2.	साधना में सत्य का प्रभाव	25
3.	मन से ही प्रेम और मन से ही भक्ति	30
4.	भक्ति ही चैतन्यता का स्रोत	36
5.	चेतन मन से अचेतन मन पर पहुँचने का फल ही सिद्धियाँ	48
6.	त्रिगुणातीत अवस्था का बोध	58
7.	गुरु वह है जो होश जगाये, जागृति लाये, मार्ग दिखाये	78
8.	साधन से सिद्धियों की प्राप्ति	98
9.	कुण्डलिनी का स्थान	131
10.	जीव की संरचना	139
11.	इड़ा-पिंघला और सुषमणा नाड़ियों का अस्तित्व तथा प्रभाव	146
12.	सात चक्र	179
13.	कुण्डलिनी जागरण ही समाधि	185
14.	समप्रज्ञात के चार भेदों के बाद असमप्रज्ञात की झलक	212
15.	साकार हमारा चिन्तन-निराकार हमारा मार्ग	220
16.	साधकों के हितार्थ कुछ खास बातें	238

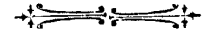

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूमिका

पुस्तक का लेखन पूर्ण हो जाने के पश्चात् चमत्कारिक रूप से परम पूज्य श्री गुरूजी श्री श्री नवल किशोर जी गोस्वामी जी महाराज से मेरी मुलाकात गुरु पूर्मिणा के पर्व पर श्री कृष्णचन्द्र जी माथुर टोंक फाटक, जयपुर के मकान पर हो गयी थी। सत्रह वर्ष के लम्बे अन्तराल के बाद के मिलन में क्या कुछ था वर्णन नहीं कर सकता हूँ। "बस: गिरा अनयन नयन बिनु बाणी। जब थोड़ा मैं संयत हुआ तब प्रसंग वश मैंने अपनी इस अप्रकाशित पुस्तक को उनके सामने प्रकाशित करवाने की आज्ञा लेने हेतु उनसे विनती की।

गुरूजी महाराज ने कृपा करके अध्ययन हेतु इस पुस्तक की पाण्डुलिपि अपने पास मंगाली। मकर संक्रान्ति के पावन दिवस दिनांक 14-1-85 को श्री गुरुजी का अमूल्य प्रेरणामय आर्शीवाद के साथ एक विशेष पत्र मिला उसके ही साथ पाँच सौ रुपये का एक चैक भी मुझे मिला। उन्हीं की कृपा आर्शीवाद एवं प्रेरणा का फल था कि अपने पास किसी पुस्तक को प्रकाशित करवाने का कोई भी पूर्वानुभव नहीं होते हुये भी मैं इस पुस्तक को प्रकाशित कराने में सफल हो सका ।

पण्डित द्वारका प्रसाद जी भारती पुस्तक मन्दिर वालों से मेरा पुराना नजदीकी परिचय था। गुरु स्मरण करके मैंने वह गुरुजी का आदेश तथा पुस्तक को विषय सूची उन्हें दिखाई, पता नहीं क्या हुआ कि उन्होंने पहली नजर में ही पुस्तक को छपवाने की हाँ कह दी। दैव योग से भारतीनन्दन डा० रामानन्द जी तिवारी जिनकी पुस्तकें भी भारती पुस्तक मन्दिर वालों के ही प्रकाशन में प्रकाशित होती हैं अचानक वहीं पर आ गये। पं० द्वारका प्रसाद जी ने प्रसंग चला कर श्री तिवारी जी से इस पुस्तक के बारे में कहा, मेरे मन में बड़ी बैचेनी थी कि इतने बड़े विद्वान की नजरों में मेरी लेखनी कहाँ तक स्वीकार होगी, लेकिन मैं उस समय हतप्रभ रह गया जब उन्होंने पुस्तक की विषय सूची का अवलोकन करके इसे उत्तम बताया। तथा पूर्ण रूप से गहन अध्ययन करके स्वयं ही इसका शीर्षक "योग और साधना" प्रदत्त किया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डा० रामानन्द जी तिवारी हमारे देश के ही नहीं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के महान मनीषी, चिन्तक एवं तत्त्वदर्शी हैं, जिनकी अनगिनत कृतियों ने दर्शन विषय को नये नये आयाम छूने को बाध्य किया है, ऐसे उदारमना, वीतरागी, दर्शन शास्त्री एवं अनगिनत शैक्षणिक योग्यताओं के धनी श्री तिवारी जी का इस पुस्तक को प्रकाशित होने में सहयोग प्रदान करने के लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

मेरे द्वारा इस पुस्तक को लिखे जाते समय मुझे कदम-कदम पर यही लगता रहा कि मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू तो कर दिया है लेकिन यह कार्य अपनी पूर्णता को कैसे प्राप्त होगा, कई बार तो भाषाई ज्ञान बहुत ही कमजोर होने के कारण से मुझे बड़ी हताशा का भी सामना करना पड़ा लेकिन अपनी साधना के दौरान किये गये अनुभवों ने बार-बार किसी भी तरह से लिखते रहने के लिए मुझे उत्साहित किये रखा, यही कारण था कि अपने हाथ से लिखी पाण्डुलिपि में कई-कई बार मुझे सुधार करना पड़ा जिस कारण से अनावश्यक विलम्ब भी हुआ मेरे अनन्य मित्र श्री गोपालाचार्य जी ने पं० रामकुमार जी से मेरी घसीट लिखाई को सुलेख में परिवर्तन कराने का काम नाम मात्र के पारश्रमिक में करवा दिया था। उनके इस सहयोग के लिए मैं स्वयं तथा वो पाठक गण जो इसको पढ़ तथा समझकर साधना लाभ उठायेंगे उनकी तरफ से भी मैंश्री गोपालाचार्य का हृदय से आभारी हूँ। तथा उन्हें कोटिशः धन्यवाद देता हूँ।

आज इस पुस्तक के छप जाने के पश्चात् भी मेरा मन तथा मस्तिष्क यही कल्पना करता है कि हो न हो मेरे दिवंगत अन्धे ताऊजी स्वर्गीय श्री मोती लाल जी भक्त जिन्होंने मेरी साधना के सोपानों को पूरा करते समय भी कई तरह से मुझे सहयोग दिया था उन्होंने ही इस पुस्तक को लेखनी बद्ध किये जाने में भी मेरा दिग्दर्शन किया होगा। मेरे ताऊजी जो मुझे बचपन से ही बहुत ज्यादा चाहते थे। मैं उनके पास रहकर खोह गाँव के स्कूल में ही नहीं पढ़ा बल्कि उनके गाँव से डीग आने के पश्चात् भी मुझे उनके सान्निध्य में रहने का तथा उनके ज्ञान के दर्शन का श्रुति लाभ मिलता रहा था यही कारण है कि तब और आज भी उनकी पवित्र आत्मा मेरी प्रेरणा की स्रोत बनी हुई है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यहाँ इन पंक्तियों को लिखते समय मैं सुश्री सुषमा शर्मा के योगदान को भी नहीं भूल सकता हूँ जिनकी बजह से ही मैं इस पुस्तक को लिपि बद्ध करने को उद्यत हुआ था। विदुषी सुषमा जी ने ही उस समय मेरे समक्ष इतने जटिल प्रश्न रखे थे तथा उनके वाक्य चातुर्य के कारण उस समय उनके प्रश्नों का उत्तर देना मुझे सम्भव नहीं हुआ था लेकिन अपने अनुभवों के साक्षात हो जाने के कारण से उनके प्रश्नों से थक कर चुप हो जाना भी मुझे सम्भव नहीं था उनके प्रश्नों के उत्तर देने के लिए ही शुरू में मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया था।

मेरी परिवारिक आध्यात्मिक विरासत ने मेरे साधना काल में मेरे समक्ष बड़े महत्वपूर्ण रूप से अपनी भूमिका निभाई थी जिसके कारण से मेरा बहुत सारा समय व्यर्थ की चीजों में बर्बाद होने से बच सका था बचपन से लेकर आज तक भी हर समय कदम-कदम पर मेरा मार्ग दर्शन होता रहा है, मेरे पूज्य पिता श्री प्रभूदयाल जी वैद्य जिन्होंने अपने जीवन काल में सैंकड़ों की संख्या में योगासनों के शिविर लगाए हैं उनका तथा अपने बड़े भाई श्री रामदेव जी, छोटे भाई विष्णु देव एवं बचपन के मित्र श्री रमेशचन्द जी लोहिया जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व मुझे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मेरे मन में आयी परेशानियों का निराकरण करने में अपना अमूल्य सहयोग दिया, उनकी वात्सल्यपूर्ण प्रेरणाओं व शुभकामनाओं को हर्गिज नहीं भुला सकता हूँ।

इसी अवसर पर मैं मेरे गुरु भाई श्री बाबू लाल जी गुप्ता एवं मित्र श्री देवेन्द्र नाथ जी गुप्ता एडवोकेट का भी हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने कदम-कदम पर आई आर्थिक परेशानियों को हल कराके इस पुस्तक के प्रकाशन कार्य को पूर्णता प्रदान करने में अपूर्व योगदान किया।

अन्त में मैं पाठकों से भी क्षमा याचना करके यह निवेदन करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि वे मेरी भाषा की कमजोरी, शब्दों की अशुद्धता एवं धारावाहिक लेखन शैली की कमी को विचार न करके मेरे द्वारा की गई साधना के आधार पर अपनी शैली में जो कुछ मैंने लेख बद्ध किया है उसका स्वाध्याय करके लाभान्वित होंगे एवं इस सम्बन्ध में जो भी शंकाएँ एवं प्रश्न होगें उनसे मुझे निःसंकोच अवगत कराने का कष्ट करेगें।

हालांकि मेरी अपनी इच्छा का कोई खास औचित्य मैं सिद्ध नहीं कर पा रहा हूँ लेकिन फिर भी शायद बहुत गहरे में अपनी इसी भावना के तहत मैं यह लिखने को उद्यत हो रहा हूँ कि साधक शुरू में अध्यात्म के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गूढ़ रहस्यों को खोल कर साधना करने से पहले ज्ञान अर्जित करने का उद्देश्य सर्वथा ही त्याग दे, बल्कि वह तो ज्ञान रूपी मरुस्थल को छोड़कर साधना रूपी सागर में उतर जावे उसका साधना में उतरना ही उसके अपने ज्ञान, दर्शन, चिन्तन या अनुभव का कारण बनेगा।

विश्वास है कि इस प्रथम प्रयास में मैं जो कुछ आप पाठक गणों को अर्पित कर रहा हूँ उसे अर्पित करने में सफल होऊँगा।

इन्हीं शुभ आकांक्षाओं के साथ—

श्यामदेव खन्डेलवाल

देव फोटो स्टूडियो
सर्राफा, भरतपुर (राज०)
फोन : 2833

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १

मृत्यु को स्वीकार करना ही सत्य को स्वीकार करना

अभी हाल ही में एक घटना हमारे देश में ही घटी है। जिसके अनुसार हमारे देश में कई एक प्रख्यात ज्योतिषियों ने बिना किसी का नाम लिए ही यह भविष्यवाणी की थी, कि १५ नवम्बर १९८२ को पांच या सात ग्रह एक ही राशि में इकट्ठे हो रहे हैं, जिनके प्रभाव के कारण हमारा देश किसी न किसी महान विभूति अथवा किसी विशिष्ट व्यक्तित्व से हाथ धो बैठेगा। अखबार में यह समाचार मैंने भी दीपावली यानी कि १५ नवम्बर ८२ से दो तीन महीने पहिले ही पढ़ लिया था। इसे पढ़कर कुछ लोगों के मन में श्रीमती इन्दिरा गांधी के बारे में आशंकायें पैदा हो गई थी। लेकिन जैसे ही दीपावली से ७ दिन पूर्व मुझे पता चला कि कि "आचार्य विनोबा भावे" को दिल का दौरा पड़ा है तथा उन्होंने अन्न जल ग्रहण तथा किसी भी प्रकार की डाक्टरी सहायता लेने से इन्कार कर दिया है, मैं समझ गया था कि, उस भविष्य वाणी के अनुसार परमात्मा हमारे बीच में से शायद विनोबा जी को ही उठाने वाला है। तब तक दीपावली में पूरे सात दिन बकाया थे, लेकिन ज्योतिषियों की भविष्यवाणी के अनुसार ही विनोबा ठीक दीपावली के दिन ही निर्वाण को प्राप्त हुये।

यहाँ इस घटना को लिखने का मेरा आशय सिर्फ इतना ही है कि हम मानव हैं एवं इस प्रकृति के चक्र के खिलाफ हमारा अपना कोई भी प्रयत्न कारगर नहीं हो सकता हैं। फिर भी यदि हम अपने से चेष्टा करते हैं तो वे चेष्टायें, चेष्टाएँ न रहकर हमारी कुचेष्टायें ही कालान्तर में सिद्ध होती है।

एक तरीके से तो हम पशु की तरह भी जी सकते हैं जिसे भविष्य के दर्शन या कल क्या होने वाला है इसको जानने की आकांक्षा ही नहीं होती। उन्हें जन्म मिल गया तो जी लिए, यदि मृत्यु आगई तो मर गये। लेकिन दूसरे प्रकार से जीते समय हम पशु की तरह नहीं जीते बल्कि मनुष्य की तरह से जीते हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिसमें हमने अपने ज्ञान का इस्तेमाल करके यह पता लगा लिया है कि **जब हमने इस दुनियां में जन्म लिया है तो हमारी अपनी मृत्यु भी निश्चत ही है।** लेकिन इसके साथ ही हमें अपनी सुनिश्चित मृत्यु का पता चलते ही, कि वह हर पल और क्षण के बाद हमारे नजदीक और नजदीक आती जा रही है, हम उससे अपने हर आपको बचाने के लिए अनेक उपाय अपनी बुद्धि से करने लगते हैं। जैसे हमने किसी से सुन रक्खा है कि हमारे जीवन के स्वासों की संख्या निश्चित है इसलिए जितनी हम कम साँसें लेगें हमारी मृत्यु हमसे उतनी ही ज्यादा दूर चली जावेगी और इसकी पूर्ति के लिए हम अपनी साँस को रोककर प्राणायाम करने लगते हैं यदि अन्य किसी से हमने यह सुन लिया है कि जितना दाना पानी हमारी किस्मत में खाना लिखा है उतना तो हमें यहाँ रहकर खाना ही पड़ेगा। बस हम अन्न छोड़ देते हैं, व्रत रखते हैं, लम्बे-लम्बे उपवास रखते हैं, और कुछ नहीं तो दिन में जहाँ हम दो समय भोजन करते थे वहाँ हम अब एक समय ही भोजन करते हैं।

इसी संदर्भ में मैंने एक पण्डित जी की कथा सुनी है जो कि इतने भारी विद्वान थे, अथवा इतने बड़े साधक थे कि उन्हें यमराज साक्षात रुप से दिखाई देते थे जो कि इस पृथ्वी पर मृत्यु को प्राप्त हुये लोगों को लेने आते थे। एक बार यमराज से पण्डित जी ने पूछा;

"आप सभी को लेने आते हैं किसी न किसी दिन मुझे भी लेने आयेंगे ही, तो कृपया मुझे यह बतायें कि मेरी मृत्यु किस प्रकार से होगी ?" यमराज ने उसकी भलाई सोचते हुये कहा कि—

"यह प्रश्न दुबारा मुझसे नहीं करना अन्यथा तुझे बहुत ही मुश्किलें उठानी पड़ेगी"

लेकिन पण्डित नहीं माना और कहने लगा "आप मुझे बताना नहीं चाह रहे हैं इसलिए मुझसे इसका बहाना बना रहे हैं"

यमराज बोला "मुझे तुझसे डर थोड़े ही लगता है जिसके कारण से मैं तुझसे बहाना करूँगा। खैर, यदि तू नहीं मानता है तो मैं बताये देता हूँ तेरी मृत्यु गंगा में मगरमच्छ के खाने से होगी।" इतना कह कर यमराज चले गये।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपनी मृत्यु के बारे में यमराज से जानकर पण्डित बड़ा प्रसन्न हुआ कि मैं गंगा के पास कभी जाऊगाँ ही नहीं तो मरूगाँ कैसे ? उसने उसी दिन से अपनी मौत को जानकर गंगा की धारा से दूर जाने की गरज से यात्रा शुरू कर दी। जैसे गंगा यदि देश के उत्तर दिशा की ओर बहती है तो वह दक्षिण की दिशा को जाने लगा। जबउसे यात्रा करते-करते महीनों व्यतीत हो गये तब वह निर्जन और घनघोर जंगल में जहाँ आदमी की छाया भी दिखाई नहीं देती थी रुक गया। भूख और प्यास की तो उसे चिन्ता थी ही नहीं, क्योंकि उसे पता था भूख प्यास या अन्य किसी प्रकार का कोई जंगली जानवर उसकी मृत्यु का कारण नहीं बन सकता है। यह सुबह से ही ध्यान में बैठ गया, दोपहर को उधर से वहाँ का राजा शिकार पर निकला तो उसे ध्यान में बैठा वह पण्डित दिखाई पड़ा। ऐसे बियावान जंगल में जहाँ खाने पीने का कोई भी साधन न हो, राजा यह सोचकर कि यह कोई पहुँचा हुआ सिद्ध महात्मा है वहीं पर रूक कर इन्तजार करने लगा। घन्टे दो घन्टे में जब पण्डित की आँखें खुली तो उन्होंने अपने सामने राजा सरीखे व्यक्ति को दण्डवत प्रणाम करते हुये पाया। पहिले तो उसे बहुत ही आश्चर्य हुआ। लेकिन थोड़ा सा संयत होने के पश्चात उन्होंने राजा से प्रश्न किया—

"क्या बात है और यहाँ क्यों आये हो ?"

राजा बोला— शिकार करने जा रहा था रास्ते में आपको देखकर यहीं रुक गया कि आप जैसे महान योगी हमारे राज्य की सीमा में है, क्यों न आप राजमहल पधारें, मैं आपको अपने राजमहल ले चलने के लिए ही यहाँ रुक गया था।

इस बात को सुनने के पश्चात पण्डित बोला "राजन् यह तुम्हारा भ्रम ही है कि हम इस स्थान से हटकर और कहीं जायेगें।'

'कोई बात नहीं है मैं आपसे आकर यही मिल लिया करूंगा। केवल आपके खाने पीने का इन्तजाम मेरे द्वारा स्वीकार कर लीजिये।" ऐसे शब्द राजा ने कहे।

यह बात पण्डित ने मान ली समय गुजरता गया। और राज्य के अन्न जल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से पण्डित जी का जीवन यापन होता रहा। उन्हीं दिनों राजकुमार जो अब ५ साल का हो गया था, नित्य प्रति पण्डित जी के पास विद्या अध्ययन के लिये आता था। इस प्रकार पढ़ते-पढ़ते जब काफी समय गुजर गया और राजकुमार वयस्क हो गया तो एक दिन पढ़ाई के दौरान पण्डित जी उसे बता रहे थे कि हमारे देश में जो गंगा नदी है, उसमें अपने सम्पूर्ण परिवार एवं गुरुजन सहित स्नान करने से राजा भगीरथ की तरह अपने पिछले जन्मों के सभी पापों से वह व्यक्ति मुक्त होकर स्वर्ग को जाता है। इस बात को सुनकर वह राजकुमार भी अपने गुरुजी को जिन्हें वह प्राणों से भी ज्यादा प्यार करता था, बोला—

"अगर ऐसा है तो फिर गुरुजी हमें भी अपने साथ गंगा स्नान कराइये।"

इतना सुनते ही गुरुजी पर तो जैसे बिजली ही टूट पड़ी और बोले "हमतो गंगा जी की तरफ जा भी नहीं सकते"।

इस पर राजकुमार ने प्रश्न किया। "ऐसा क्यों ? आपने जो अभी हमें बताया था क्या वह असत्य था ?"

पण्डित जी बड़े भारी संकट में पड़ गये क्योंकि कारण कुछ भी नहीं बता सकते थे और जा भी नहीं सकते थे। बात जब और आगे बढ़ी तो राजा के कानों में भी पहुँच गयी। वह भी राजकुमार की बातों से सहमत थे। अन्त में पण्डित जी को राजा के लिए यमराज वाली तमाम बातें बतानी पड़ी। इतना सुनते ही के पश्चात् राजा हाथ जोड़कर पण्डित जी से बोला—

"आप हमारे पूरे राज्य के पिता तुल्य, हैं हम आपको क्यों खोना चाहेंगे, जिस दिन से आपने हमारी राज्य की सीमा में कदम रक्खा है, सम्पूर्ण राज्य में सुख और शान्ति का निवास हो रहा है और रही बात मगरमच्छ की, मैं वहाँ जालियों का ऐसा इन्तजाम करुंगा कि मगरमच्छ तो क्या वहां गंगा के पानी के अलावा एक तिनका भी नहीं आ सकेगा"

या तो पण्डित की मति मारी गई थी या राजा के अन्न जल का प्रभाव था,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसने गंगा स्नान के कार्यक्रम को अपनी मंजूरी दे दी। वहाँ जाकर जब पण्डित जी ने देखा कि गंगा की धारा में जितना इन्तजाम राजा ने पूर्व में करने को कहा था उससे भी दस गुना अधिक है। कम से कम एक हजार व्यक्ति तो एक दूसरे का हाथ पकड़ कर खड़े हैं। उनके बाद में बड़ी जाली का घेरा, फिर बिल्कुल बारीक जाली का घेरा था जिसमें जीव-जन्तु तो क्या गंगाजल भी छन-छन कर आ रहा था और तब उस घेरे में केवल घुटने-घुटने पानी के अन्दर राजा और राजकुमार खड़े होकर पण्डित जी को बुला रहे थे। पण्डित जी स्नान को सहर्ष तैयार हो गये। उन्होंने भी सोचा, एक डुबकी ही तो लगानी है जैसे ही पण्डित जी ने राजकुमार का हाथ पकड़ कर गंगा में डुबकी लगाई, तो वे क्या देखते हैं कि राजा तो यमराज के रूप में बदल गया है और राजकुमार मगरमच्छ बन गया है जिसने उनको आधा अपने मुंह में ले रक्खा है तथा वह राजा रूपी यमराज खड़ा २ हंस रहा है। अन्य किसी का कहीं भी दूर-दूर तक पता नहीं है।

यहां इस कथा से मेरा केवल इतना ही तात्पर्य है, कि हमें यह बात अच्छी तरह से समझ लेनी है कि **हम इस दुनियां में जन्म लेकर, मृत्यु से अपनी बुद्धि के किसी भी क्रिया कलाप के द्वारा बच नहीं सकते। उल्टे हम स्वयं ही उस पण्डित की तरह से परेशानियां और बढ़ा लेते हैं। यही इतनी सी बात हमारे जीवन की प्रत्येक अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों पर ज्यों की त्यों खरी उतरती है।** तो मैंने दो प्रकार की मानसिकताओं के बारे में यहां लिखा है। पहली तो वह पशु तुल्य स्थिति है, जबकि दूसरी पण्डित जैसे ज्ञानी की है। लेकिन मेरे देखते यह दोनों ही स्थितियां दुखदाई है। क्योंकि पहली स्थिति में तो हम गहन अंधकार में होते हैं, जहां अभी ज्ञान के अंकुर फूटे नहीं हैं, जबकि दूसरी स्थिति में हमने इस गहन अंधकार में अपने विवेक से प्रकाश की किरण खोज निकाली है। लेकिन इस प्रकाश की किरण को देखते ही तथा उसके स्वरूप को समझे बिना हम उस प्रकाश के साथ आने वाले ताप से डर गये हैं। इसी बात को जरासा पलट कर देखने की चेष्टा इस तरह से भी करें, जैसे दो भूखे व्यक्ति हमारे सामने मौजूद हैं। इनमें से एक व्यक्ति के पास एक रुपये का सिक्का है, जबकि दूसरे के पास वह भी नहीं है, जिसके पास कुछ नहीं है वह तो भूख से व्याकुल है ही, लेकिन जिसके पास वह रुपया है वह भी भूख से व्याकुल ही है। तथा साथ में व्यथित भी है, कि मेरे पास तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रुपया भी है फिर भी मेरी भूख नहीं मिटती। अब आप ही सोचें कहीं केवल रुपया अपने पास होने मात्र से किसी के पेट की भूख मिट सकती है पेट की भूख तो इस दुनियां में रुपये का उपयोग सीख कर भोजन प्राप्त करने के पश्चात ही मिट पायेगी। इसलिये ही मैंने लिखा है कि दोनों ही स्थितियां दुखदाई हैं। एक में हमें मृत्यु का पता नहीं है जबकि दूसरी जगह हमारे सामने मृत्यु रूपी सत्य प्रकट हो गया है। लेकिन उसे हम स्वीकार नहीं कर पाये हैं। इसलिए डर गये हैं और **हमेशा इस दुनियां में ऐसा ही होता है कि जिन चीजों को हम आत्मसात या स्वीकार नहीं कर पाते अथवा उनसे साक्षात करने की हम हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं उनसे हम डर जाते हैं। लेकिन यदि हमें इन दोनों दुखदाई स्थितियों से उभरना है तो सर्वप्रथम हमें मृत्यु रूपी सत्य को स्वीकार करके चलना होगा। अन्यथा वह मृत्यु जब आयेगी तब तो आयेगी ही, उससे पहले भी जब तक हम जीवित हैं उस मृत्यु के डर से उत्पन्न स्थिति के कारण अपनी बाकी जिन्दगी को जी नहीं पाते हैं।**

अब जरा गौर पूर्वक इसको समझने की चेष्टा करें। शुरू में ही यदि मैं आपसे मृत्यु को स्वीकार करने के लिए कहूँ तो आप उसे कैसे स्वीकार कर पायेगें। इसलिए उस भयभीत करने वाली मृत्यु को स्वीकार करनेसे पहले हमें अपने जीवन में कुछ हल्की और आसान मृत्युओं पर विजय प्राप्त करने की आदत डालनी होगी। तब ही अन्त में हम विनोबा की तरह, गांधी की तरह, ईसा मसीह की तरह और बुद्ध की तरह से ही होश पूर्वक अपनी मृत्यु को स्वीकार कर पायेगें। अन्यथा मरते तो सभी हैं। लेकिन बेहोशी में।

आप कह सकते हैं कि मृत्यु के रूप में हमारा हमसे सब कुछ छूटा जा रहा है और आप उस कठिन समय पर भी हमसे आँखें खोलने की कह रहे हैं या होश पूर्वक उसे देखने की कह रहे हैं। आपकी शंका इस संसार को देखते हुए ठीक भी लगती है। क्योंकि अभी तो हम अपनी खुली आँखों के सामने अपने शरीर में डाक्टर को मात्र दवा की इंजेक्शन चुभोते भी नहीं देख सकते। और अपना उस तरफ से मुंह फेर लेते हैं फिर हम मृत्यु के समय कैसे अपना होश रख सकते हैं। लेकिन विद्वानों का कहना है कि **"अन्त मता सो गता"** यानि मरते समय जैसी भी हमारे मन की स्थिति होती है वैसी ही नियति हमारे भविष्य में होने वाले जन्मों की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होती है। लेकिन बेहोशी की अवस्था में हमारी आकांक्षा ही जागरूक नहीं रह सकती है। तब फिर हम अगले जन्मों की नियति को किस प्रकार से निश्चित कर सकते हैं। जिस प्रकार से हम बेहोशी में मरते हैं ठीक उसी प्रकार को बेहोशी में हमारा अन्धकार पूर्ण दुःखों से भरा हुआ अगला जन्म हो जाता है।

आपने महाभारत की कथा में यह तो अवश्य ही पढ़ा होगा कि उस धर्मयुद्ध में बहुत से राजा सिर्फ इसलिये ही शामिल हुए थे कि इसमें शामिल होने के पश्चात और मृत्यु का वरण करने के बाद उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी। कैसे होती है स्वर्ग का प्राप्ति ? आगे के सोपानों को समझने के लिए इस बात की गहराई को समझ लेना बहुत ही जरुरी है। मृत्यु तो सभी की होती है लेकिन कुछ तो मृत्यु के आने से ४ दिन पहले ही बेहोश हो जाते हैं, जबकि दूसरे प्रकार के लोग मृत्यु का वरण स्वयं अपने होश में हिम्मत के साथ करते हैं। और सुकरात की तरह भी जहर पीकर मरते समय भी आखिरी सांस तक मृत्यु के भय से पीड़ित होते नहीं दिखाई देते हैं। सुकरात के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने अपनी जिन्दगी में इतना कीमती सन्देश नहीं दिया था जितना कि उन्होंने अपनी मृत्यु के द्वार पर खड़े होकर दिया था। जिसके कारण ऐसा लगता है कि वे अपनी मृत्यु का कितनी बेसब्री से इन्तजार कर रहेथे। महात्मा गांधी के धड़ में तीन गोलियां लग चुकी थी। उनके पास तो सुकरात से भी कम समय था। उस थोड़े से समय में भी वे अपनी

> सुकरात का संदेश—उनका कहना था कि मृत्यु से डरने की कतई जरुरत नहीं है, क्योंकि मैं अपनी मृत्यु को इस समय पर देख रहा हूँ कि यह तो केवल मेरा शरीर ही छीन रही है। आज तक मैं इस शरीर को ही मैं, स्वयं समझता रहा था लेकिन आज यह गलत हो गया है क्योंकि यह शरीर तो मेरे देखते-देखते मिट रहा है लेकिन मैं तो फिर भी वैसा ही ठीक हूँ जैसा कि पहले था।

उस अवश्यम्भावी मृत्यु से घबड़ाये नही और अपने आपको पूर्ण रूपेण होश में बनाकर रखते हुए तथा साथ ही अपनी जीवन भर की साधना को पूर्णता प्रदान करते हुये "हे राम" कह कर विदा ली। विनोबा को दिल का दौरा पड़ा था। चिकित्सक उनकी चिकित्सा करके उनके जीवन का बचाव करना चाहते थे। लेकिन उन्होंने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसा करने से मना कर दिया, तथा साथ ही आने वाली सम्भावित मृत्यु के लिए अपनी तरफ से खाना पीना छोड़कर उसे खुला आमन्त्रण और दे डाला। क्या कोई मृत्यु से भयभीत व्यक्ति ऐसा कर सकता है? **साधक के निर्वाण का उसकी मृत्यु के समय ही पता चलता है। इसी प्रकार की मृत्यु को ही हम होश पूर्वक अपने आप से उसे स्वीकार की हुई मृत्यु कहते हैं।**

इसलिये ध्यान रखने की बात यहां यही है कि, जब हम होश में मरते हैं तो हम स्वतः ही होशपूर्वक जन्म लेने के अधिकारी भी हो जाते हैं। **क्योंकि जब हमारे होश को मृत्यु भी विचलित नहीं कर सकी तब फिर जन्म लेने के समय हम बेहोश क्यों कर हो जावेगें।** और जब हम अपना जन्म होश पूर्वक ही ले रहे हैं तब हम इस दुनियां में आते समय इस प्रकार के गर्भ का चुनाव क्यों करेगें जिसकी नियति हमें नरक के समान दुखों की ओर ले जावेगी। हम तो फिर इस प्रकार के गर्भ में उतरने के लिए कोशिश करेगें जो हमें हमारे मन के अनुरूप स्वार्गिक ऐश्वर्यता की ओर ले जाकर आनन्दित करे। इसीलिये ध्यान रखें यदि हमें होशपूर्वक जन्म इस दुनियां में लेना है तो होशपूर्वक मरना भी सीखना ही होगा। मृत्यु के स्तर का होश जगाने का एक मात्र साधन यदि हमारी भारतीय संस्कृति में है तो वह यही है जिसके अन्तर्गत भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिपुटी है। भक्ति के द्वारा हमें इस साधना के लिए आपेक्षित श्रद्धा तथा भावना की प्राप्ति होती है। ज्ञान के द्वारा हमें अपनी श्रद्धामय भावना के लिए दृढ़ता की प्राप्ति होती है और तब ही कर्म के द्वारा हम अपनी साधना में उतरने के लिए की जाने वाली तपस्या में पारंगत या सिद्ध होते हैं।

मैंने पूर्व में लिखा है कि उस विराट मृत्यु से पहले हमें छोटी-छोटी और सहन शील मृत्युओं को स्वीकार करके अपनी क्षमताओं में वृद्धि करनी होती है। **इस संसार में जिस बात से भी हमारे मानसिक या शारीरिक सुखों में व्यवधान आता है वहीं हमारी इन लघु मृत्युओं का कारण बनता है इसलिए ही हमारी हिन्दू संस्कृति के धुरन्धर चिन्तकों ने, मनीषियों ने, योगियों ने तथा आध्यात्म के शिक्षकों ने इस साधना पद्धति के प्रत्येक स्तर पर तपस्या करने के लिए ही इतने सोपान जोड़े हैं, जिनके बिना हम अपनी साधना के मूल तत्व से विमुख ही रहेगें।** अथवा दूसरे शब्दों में जब हम आध्यात्मिक साधना पद्धति के इन द्वारों से गुजरते हैं तभी हम अपनी जागृति का स्वयं अनुभव करके अपनी, प्रार्थना का उदय हुआ पाते हैं। × × ×

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय २

साधना में सत्य का प्रभाव

हमारी संस्कृति का स्वरूप जिन ग्रन्थों से पता चलता है या हमारी संस्कृति के उत्तराधिकारी के रूप में जितने भी युग पुरुष इस धरती पर पैदा हुये हैं उन सभी ने इस मार्ग पर लगे हुये साधक को सर्वप्रथम सत्य बोलने पर विशेष जोर दिया है।

इस संसार का प्रत्येक मानव चाहें वह स्त्री हो या पुरुष अपने मन के अन्दर अलग २ रुप से व्यक्तिगत होता है। उसके मानसिक स्तर पर अलग होने का कारण मात्र इतना है कि **वह इस ब्रह्माण्ड के सत्य में से कितने प्रतिशत सत्य को स्वीकार कर पाया है। अथवा कितने प्रतिशत मायावी झूंठ को उसने अपने ऊपर ओढ़ रखा है** जितना हम सत्य के नजदीक होते हैं। उतना ही हम इस संसार में व्याप्त माया के जाल से अपने आपको मुक्त हुआ पाते हैं, और उसके ठीक विपरीत जितना हम झूंठ के अन्दर होते हैं उतना ही हम अपने आपको इस सांसारिक मायाजाल में फंसा हुआ पाते हैं।

जैसे कोई बालक अपने माता-पिता से पहली बार झूठ बोलता है। उस एक मात्र झूठ बोलने के पश्चात से ही वह अपने मन में उसके खुल जाने के बाद पैदा होने वाली स्थिति से भय ग्रस्त हो जाता है, और जिस कारण से अपने प्रथम झूठ को छिपाने के लिए अपने मन में अन्य दूसरी झूठों की जन्म देता है और फिर उनकी पुष्टि के लिए अनेक झूठे प्रमाण तैयार करता है। ठीक इसी प्रकार हम देखते है कि बालक केवल एक मात्र झूठ बोलकर अपने मन में एक अन्तहीन झूठ की श्रृंखला तैयार कर लेता है। **यही श्रृंखला बाद में उसकी आदत बन जाती है, और फिर यही झूठ उसको आदतों को सीढ़ी बनकर उसके कर्मों में पहूंच जाती है। कर्मों से संस्कारों में, संस्कारों से भाग्य में अवतरित हो जाती है। जो लोग सत्य नहीं बोलते उनके कर्म, संस्कार एवं उनका भाग्य भी उनकी आध्यात्म**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की साधना में तरह-तरह के अवरोध खड़े करता है, उनकी साधना में विघ्न उपस्थित होते हैं जिनके कारण उन्हें अपनी साधना अधूरी ही छोड़ देनी पड़ती है।

साधक को यह बात हमेशा ध्यान में रख लेनी चाहिये कि यह अध्यात्म का मार्ग अथवा ब्रह्म को जानने का मार्ग केवल उन लोगों के लिए है जो अपने जीवन से अपनी तमाम झूठों को तिरोहित करने के लिए राजी हो गये है। अथवा जो अपनी झूठी जिन्दगी की मृत्यु को स्वीकार करने को राजी हो गये है। सत्य बोलना मृत्यु को स्वीकार कर लिए जाने के ही समान है। इसीलिए ही यह हमारी साधना में की जाने वाली तापश्चर्या का प्रथम तथा महत्वपूर्ण अंग है।

सच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।

जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप ॥

इन दो लाइनों में ही कवि ने अपने मन की पूरी बात कह दी है। इस दुनिया में सत्य बोलने के बराबर अन्य कोई तप नहीं है। क्योंकि सत्य के द्वारा ही हमारा मन हमेशा शांत और निर्मल बना रहता है। जबकि झूठ इतना बड़ा पाप है जो हमें इस अपनी आत्मिक साधना से दूर और दूर ले जाता है। **इस बात को अपने विवेक से जानकर जो साधक सत्य को अपने मन मन्दिर में स्थापित कर लेता है उसी आत्मवान पुरुष में परमात्मा भी आकर ब्रह्म स्वरुप बिराजमान हो ही जाता है।**

यह माना कि आदमी की गलती करना उसकी एक मात्र कमजोरी है लेकिन यह भी कहां की समझदारी है कि हम अपनी की हुई एक गलती को अमरबेल की तरह बढ़ने में उसे सहयोग देते ही जायें। और अपनी उस एक मात्र शुरू की गलती को अपने ऊपर छा जाने दे। जिसका फल हम इस जन्म में तो भोगे ही उसी के द्वारा अपने आगे आने वाले जन्मों को भी बिगाड़ लें। इससे बचने का एक मात्र उपाय यदि कोई इस दुनिया में है तो वह यह है कि, हम इस **झूठ रूपी दैत्य को उसकी शैशव अवस्था में ही सत्य द्वारा स्वीकार करके मार गिरायें।** कुछ लोग यहां यह शंका करने लगते है कि यदि हमसे एक गलती हो गई है और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह अभी तक दुनिया या समाज के सामने अप्रकट है तो क्या उसे अपने आप से प्रकट कर देना चाहिए ? इस बारे में मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि जब आप स्वयं को यह पता है कि आपसे गलती हो गई है तो इसका सीधा सा साफ मतलब यही है कि, वह अभी कैंसर के रोगाणु की तरह आपके मन के भीतर विद्यमान है। जो एक न एक दिन बड़ा घाव बनकर या फोड़ा बनकर प्रकट हो ही जावेगा। इसमें जरा सा भी संशय रखने की आवश्यकता मुझे महसूस नहीं होती है। मैं जब बहुत पहले अपने बचपन में साईकिल चलाना सीख रहा था, मुझे खूब अच्छी तरह याद है दूर से जिस गड्ढे में साईकिल चलाते समय गिरने से मैं अपनेको रोकना चाहा करता था, पास पहुँचकर अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद भी उसी गड्ढे में जाकर गिर जाता था। **ठीक इसी प्रकार का हमारा मन है। ना चाहते हुए भी हम उन्ही बातों को प्रकट कर जाते हैं जिन्हें हमें छिपाना था।**

इस प्रकार जब वे छिपायी हुई गलत बातें अवसर पाकर प्रकट होती है तब जो गलती शुरू में अकेली थी अब वह दुगनी होकर प्रकट होती है। क्योंकि अब तक उसमें अपराध को छिपाने का एक और दूसरा अपराध जुड़ चुका होता है। यदि यहां तक भी व्यक्ति अपनी गलती को स्वीकार कर लेता है तब भी वह झूठ कार्मिक अवस्था तक न पहुँचकर अंकुर अवस्था से थोड़ा और ऊपर उठकर पौधे की अवस्था में ही मुर्झा जाता है। और उस झूठ रूपी पौधे की जड़े वही पर कट जाती है और तब इस प्रकार की भावनाओं से ग्रस्त व्यक्ति थोड़े से अन्तराल के पश्चात पुनः अपने मानसिक तनाव से मुक्ति पाकर निर्मल मन हो जाता है। इस प्रकार से अपनी गलतियों को या झूंठ को स्वीकार करने से उसमें नई शक्ति का संचार होता है। उसमें अपने प्रति हिम्मत जागृत होती है। जिसके कारण उसकी अपनी आत्मिक शक्ति का उत्थान होता है। इसलिए, **जिस व्यक्ति को अपने मन के अंधेरों को नष्ट करना है उसे अपने जीवन की खेती में झूठ के बीजों को बुवाई बन्द कर देनी चाहिये। इसके साथ ही यदि कहीं उसे एक बार सत्य का स्वाद लग गया तो यह बात पक्की तरह से समझ लेनी चाहिये कि उसके जीवन से बाकी बची हुई झूठें भी अपने आप किनारा कर ही जायेंगी है।** क्योंकि सत्य के नजदीक ही हमें उस मजबूत आधार का पता चलता है जिसकी तुलना में अन्य कोई भी तर्क

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

झूठ के समर्थन में ठहर नहीं पाता है और तब ही साधक सत्य के मर्म की जान पाते हैं।

इस प्रकार के लोगों के सम्बन्ध किसी दूसरे के साथ बनते हैं या बिगड़ते हैं समाज में उनका सम्मान होता है या अपमान इन फिजूल की बातों के द्वारा उनका दिल और दिमाग बेअसर बना रहता है। **दूसरे शब्दों में सत्य को सिद्धांत रुप में स्वीकार करके इन्हें अपने इस मार्ग पर कभी मन की, कभी विचारों की, कभी भावनाओं की, कभी सम्बन्धों की, कभी मान की, कभी मर्यादा की बलि देनी ही पड़ती है। और सबसे बड़ी मजे की बात यह है कि इस सबके लिए ये सहर्ष तैयार हो जाते हैं किसी के प्रति नफरत पैदा करके नहीं या किसी को तुच्छ समझकर नहीं बल्कि यह समझकर कि:—**

सत मत छोड़े सूरमा, सत छोड़े पत जाय।
सत की बांदी लक्ष्मी, फेरि मिलेगी आय॥

मैंने तो आज तक जितना और जो कुछ भी जाना है वह इससे ज्यादा कुछ भी नहीं जाना है कि जो भी सम्बन्ध झूठ पर टिके हैं वे टिकाऊ हो ही नहीं सकते। हां थोड़ी देर के लिये हम एक दूसरे को धोखा अवश्य ही दे सकते हैं, क्योंकि इस दुनिया में किसी का भी और किसी भी स्तर का झूठ बिना खुले नहीं रहता है। आजकल युवक, युवतियों में प्रेम का चलन खूब हो गया है जिसके फल स्वरुप प्रेम-विवाह खूब जोरों पर हमारे समाज में विद्यमान है लेकिन प्रेम विवाह भी केवल वे ही सफल होते हैं जिन युवक, युवतियों ने अपने प्रेम की नींव यथार्थ पर रखी है। इस प्रकार से हम देखते हैं कि, जिस व्यक्ति ने असत्य की व्यर्थता को जान लिया है वह अपनी महत्वाकांक्षा के लिये भी असत्य नहीं बोलना चाहता है।

यह ठीक है कि समाज में रहते हुये सौ फीसदी सत्य बोलना एक बड़ा ही दुष्कर कार्य है। इसलिए ही ज्यादा तर साधकों ने असत्य बोलने की अपेक्षा समाज से दूर रहना ही उचित समझा है। क्योंकि यहां समाज में रहकर बार-बार उनकी साधना के अर्न्तगत बिघ्न उपस्थित होते हैं। जिनके कारण बार-बार मन व्यथित होताहै

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और इस प्रकार से होता ही रहेगा जब तक साधक के मन में जरा सी भी ललक है, दूसरों के साथ सम्बन्ध बनाने की। तो देखा आपने ? एक सत्य हमारे कितने प्रकार के मायावी असत्यों को दूर करना शुरू कर देता है। यदि हमें साधना में उतरना है तो, हमें सत्य का प्रभाव किस तरह से हमारी यात्रा को निष्कंटक बनाता है यह हमें अच्छी तरह से समझ कर जान ही लेना है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ३

मन से ही प्रेम और मन से ही भक्ति

सत्य को अंगीकार करने के पश्चात हमारे मन के सांसारिक मायावी सम्बन्ध जब शुरू-शुरू में छूटने लगते हैं तो मन बड़ा ही क्लांत होता है। लेकिन थोड़े से अन्तराल के बाद ही हम जान जाते हैं कि, यह संसार माया रूपी झूठ पर ही टिका है और इसलिए ही इसमें दुःख ही दुःख हैं। **आज हमारे सामने जो दुःख हैं, वे दुःख तो हमारे समक्ष हैं ही, लेकिन जिस सुख को आज हम भोग रहे हैं वह भी भविष्य में अपने पीछे हमारे पास दुःख ही छोड़कर जाने वाला है।** यह ठीक है कि आज हमें थोड़ी बहुत परेशानी हो सकती है, क्योंकि यदि हम कीचड़ में रहने लगे तो थोड़े समय पश्चात हमें अपनी उस कीचड़ से भी लगाव हो जाता है। जिसके कारण बाद में उसके बिना भी हमें बड़ी बेचैनी होती है।

इस संदर्भ में मुझे दो सहेलियों की आपबीती याद आती है जिनमें एक धंधे से मालिन थी जो रोजाना अपनी बगिया से फूल तोड़कर बाजार में बेचकर अपना गुजारा चलाती थी जबकि दूसरी मछयारिन थी जो अपनी डलिया में मछली भरकर बाजार ले जाती थी और जो कुछ भी उसको उन मछलियों को बेचकर मिलता उससे अपने घर का गुजारा करती थी। ये दोनों कुछ देर रोजाना रास्ते में साथ-साथ होती थी। बगीचे से थोड़ा आगे चलकर वह मछयारिन अपनी मछलियां लेने चली जाती थी। इसी प्रकार न जाने कितने सालों से दोनों की मित्रता चली आ रही थी। एक दिन बहुत तेज तूफान आया, आकाश में बड़ी तेज २ हवायें चल रही थी, थोड़ी देर में मूसलाधार वर्षा भी होने लगी। ये दोनों सहेलियां बड़ी मुश्किल से मालिन के घर तक ही पहुँची। मछयारिन का घर तो और अभी एक मील दूर था रात काफी हो चली थी इसलिये मछयारिन अपनी मालिन सहेली के यहां ही रात को ठहर गई। मालिन ने अपनी सहेली को खूब अच्छा खाना खिलाया। रात को नरम बिस्तर भी बिछाकर सोने को दिया। लेकिन उसकी सहेली को फिर भी नींद नहीं आई। जब काफी रात ऐसे ही करवटें बदलते बदलते निकल गई तब उसने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपनी मालिन सहेली को जगाया और कहा कि—

"तेरे घर में रखे इन फूलों की बास मुझे सोने नहीं दे रही है, एक काम कर मेरी मछली वाली टोकरी जिसे तूने बाहर रख दिया है उसे यहां मेरे पास ला दे, तभी मुझे नींद आयेगी।"

उस मालिन को उसकी बुद्धि पर बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन फिर भी अपनी सहेली की खातिर अपने मुंह पर कपड़ा रखकर उसने वह मछली वाली डलिया अपनी सहेली को सौंप दी। चन्द मिनटों बाद उसे और भी ज्यादा आश्चर्य तब हुआ जब उसने अपनी सहेली को खर्राटे भरते हुये सुना। लेकिन उसके बाद बेचारी उस मालिन को रात भर मछली की बदबू के कारण नींद नहीं आई।

इसलिये यह बात अच्छी तरह से हम समझ लें कि हमारा मन जिस प्रकार की भी परिस्थियों से अपना सामंजस्य बैठा लेता है चाहें वे अच्छी हों या बुरी हों बाद में उनके बिना हमें बेचैनी महसूस होती है।

कुछ लोग केवल दुःखों से ही अपना पीछा छुड़ाना चाहते हैं, और सोचते हैं कि, दुःखों के हमारे जीवन से चले जाने के पश्चात हम सुख पूर्वक रह सकते हैं उन्हें इसमें तो कोई उलझन भी नहीं दिखाई देती है। लेकिन मेरे देखते बात कुछ संभलती भी नहीं दिखाई देती, यदि हम केवल दुःखों से ही बचना चाहते हैं। क्योंकि **जिस प्रकार के सुख को हम अपने लिए बचाना चाह रहे हैं जैसे ही भविष्य में हमें हमारे जीवन में उस सुख का अभाव होगा, वैसे ही उस सुख की रिक्तता ही हमें दुःखों के सागर में ले डूबेगी क्योंकि दुःख तो हम उसे ही कहते हैं जिसके द्वारा हमारे मन की आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं होती है। यदि हमें दुःखों से वास्तव में पीछा छुड़ाना है तो, मेरे विचार से हमें अपने मन से सुखों की कामना करने का भाव भी त्यागना ही होगा।** और केवल तभी हम दुःखों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। हमारे मन या चित्त को सुख और दुःख दोनों ही चँचलायमान रखते हैं और जब तक हम स्वयं ही अस्थिर हैं या चंचल हैं तब तक हम अपनी साधना के दौरान एकाग्र होकर स्थिर कैसे हो सकेगें। महर्षि पंतजलि अपने योग दर्शन को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुरू करते समय लिखते हैं।

"योगश्चित्त वृतिनिरोधः"।

अर्थात जिसने अपनी चित्त की वृतियों पर काबू पा लिया है केवल वही योगी है या योग साधता है अन्य दूसरा कोई नहीं।

लेकिन यहां यह भी अवश्य अपने ख्याल में ले लें कि इस संसार में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है, जिसके ऊपर कभी दुखों की मार नहीं पड़ी हो। इसका मतलब यह नहीं लगा लेना चाहिये कि, इस संसार में एक भी व्यक्ति योगी नहीं है। जबकि योगी तो वह होता है जो सुख और दुःखों से ऊपर उठकर अपने मन पर संयम करता है। यानी वह अब सुख और दुःख किसी भी प्रकार की परिस्थितियों का सामना करते हुए विचलित नहीं होता है। ऐसा प्रत्येक व्यक्ति योगियों की श्रेणी में आता है। भगवान महावीर के कानों में लोगों ने कीलें ठोक दी, मंसूर को सूली पर चढ़ा दिया, ईसा मसीह को क्रास पर लटका दिया लेकिन कभी भी इस प्रकार के व्यक्तियों को उनके स्वयं के ऊपर महान संकट आते हुये उन्हें अपनी दार्शनिकता से विचलित होते हुये किसी ने देखा ? और लोगों की बातों को जाने दे, महात्मा गांधी तो अभी-अभी हमारे सामने से ही गुजरे हैं। मैंने सुना है, मरते २ भी उन्होंने अपने हत्यारे को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया था। अपने शरीर में गोलियों के लगने के पश्चात वे भी साधारण आदमी की तरहसे क्रोधित हो सकते थे लेकिन प्रत्यक्ष दर्शियों का कहना है कि उन्होंने अपने अन्तिम क्षण कितनी शान्ति के साथ व्यतीत किये।

जिस व्यक्ति के मन से सुख और दुःख की व्यर्थता चली गई, ध्यान रखना उसका कोई शत्रु भी नहीं हो सकता, जिस प्रकार से उसका कोई मित्र नहीं होता। गांधी इस बात के लिए हमारे सामने प्रमाण हैं। उन्होंने मरते समय गौडसे को अपना शत्रु नहीं माना था, हां यह हो सकता है कि गौड़से अपनी नासमझी में गांधी को अपना शत्रु समझ बैठा हो जिसके कारण वह घटना घटी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस संसार में हम देखते हैं कि प्रेमी आपस में एक दूसरे से उतना ही प्रेम करते है जितना कि दूसरा उससे। कहावत भी है मैं तुम्हें उतना ही चाहता हूँ जितना कि तुम मुझे "यहाँ सभी एक दूसरे से सशर्त ही मिलते हैं। यदि तुम मेरी इज्जत करते हो तो मैं भी आपकी शान में पलकें बिछाकर स्वागत करता हूँ। इस प्रकार का प्रेम शुद्ध व्यापारिक ही तो है। **इस प्रकार की भावनाओं की व्यवस्था दो इन्सानों के बीच तो चल सकती है लेकिन हमें हमारी परमात्मा के प्रति प्रार्थना में यह व्यापारिकता बाधा बनती है** क्योंकि वहां हम इस शर्त को लगाकर परमात्मा के प्रति प्रेम में नहीं पड़ सकते हैं, कि हम तेरा नाम पुकारते हैं या भजते हैं तो तुझे भी हमें भजना ही पड़ेगा। इसलिये प्रार्थना का आधार यहां यह तथाकथित प्रेम नहीं हो सकता। प्रार्थना का आधार तो ऐसा आधार हो सकता है जिसमें कोई भी और किसी भी शर्त की व्यवस्था नहीं हो, यानी बेशर्त हो। तथा निस्वार्थ भी हो। **और जिस प्रकार से प्रेम में भावना आधार होती है उसी प्रकार इसका आधार निश्चल श्रद्धा होती है। इस प्रकार की श्रद्धा ही जब किसी साधक की प्रार्थना का आधार बनती है तब उसी को हम भक्ति कहते हैं।**

मन की भावनाओं के द्वारा जब हम शरीर की प्रार्थना करते हैं, उसे हम प्रेम कहते हैं, लेकिन जब हमें उन्ही भावनाओं की श्रद्धा के द्वारा अशरीरी की प्रार्थना करते हैं, उसे हम भक्ति कहते हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य दूसरे शरीर के साथ भक्ति के रूप में रहना चाहे तब भी वह नहीं रह पाता है, क्योंकि, हमारे इस भौतिक शरीर के कुछ कर्म तो जड़ता लिये ही होते हैं, जबकि भक्ति शुद्ध चैतन्य भाव है। यही कारण है कि आप किसी के प्रेम में अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा को भी लगा दें या उसे आप परमात्मा तुल्य समझकर भी उसके आगे समर्पित हो जायें लेकिन फिर भी कही न कहीं भक्ति की तरफ जाते-जाते भी आप अपने आपको प्रेम की तरफ लौटता हुआ पायेंगे। इसमें जरा सा भी संशय रखने की जरूरत मैं नहीं समझता हूँ।

जहां घर में केवल प्रेम होता है वहां तो पत्नी कहती है मैं तुमसे प्रेम करती हूँ लेकिन कमाकर लाओ नहीं तो मैं चली कही और किसी दूसरे के पास। केवल प्रेम से ही पेट नहीं भरता। लेकिन जहां श्रद्धा होती है वहां पत्नी कहती है जो भी है और जैसा भी है यही है मेरा पति परमेश्वर और वहां पति कहता है "बट में में आ गया सो भीड़ी"। यही है हमारी भक्ति का सिद्धान्त। भक्ति में कभी भक्त और भगवान के बीच दो प्रेमियों की तरह झगड़ा नहीं होता। श्रद्धा से जो सम्बन्ध

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बनते हैं उन्हें हम सम्बन्ध नहीं कहते। क्योंकि सम्बन्ध में तो दो होते हैं जबकि भक्ति करते समय भक्त मिट जाता है और केवल वही बचता है जिसके प्रति वह भक्ति से समर्पित है इस प्रकार के सम्बन्धों को ही भक्ति के नाम से जानते हैं। इस उस परमात्मा के प्रति अपनी असीम श्रद्धा को लगाये हुये यदि कोई साधक इस संसार में अपने परिवार के साथ रहता है तो भी उसकी श्रद्धा में पारिवारिक उलझनों से उसकी भक्ति में कोई अन्तर नहीं पड़ता है।

कुछ समय पूर्व मैंने एक बड़ी ही हृदय स्पर्शी कथा पढ़ी थी एक सद्गृहस्थ जिसके केवल एक ही लड़का था और जो अब युवा हो चला था। इस लड़के के अलावा अन्य कोई सन्तान उनके नहीं थी। अब तो दोनों पति-पत्नि भी बूढ़े हो चले थे। अकस्मात एक दिन उनका वह इकलौता लड़का, जो इनके बुढ़ापे की लाठी था चल बसा। उसकी पत्नी तो बहुत रोई, लेकिन वह बूढ़ा ऐसा लगा जैसे उस पर अपने एक मात्र लड़के की मृत्यु का कुछ भी असर नहीं हुआ था। जब उसकी पत्नी के आंसू कुछ थमे। तब उसने बड़ी हिम्मत करके अपने पति से कहा—"लगता है तुम्हें अपने बेटे की मृत्यु का दुःख नहीं हुआ, तुम्हारी आंख में एक भी आंसू मैंने आते हुये नहीं देखा।"

वह आदमी बोला "जिसके बुढ़ापे का सहारा छिन जाये और उसे दुख न हो ऐसा तो असम्भव है, एक बार तो मेरे मन में यह भी विचार आया था, कि अब इस दुनिया में मेरे जीने के लिए क्या रखा है। इसलिये क्यों न मैं अपनी आत्म-हत्या कर लूं। लेकिन तभी परमात्मा की तरफ से एक विचार मेरे मस्तिक में आया, कि जब पहले शुरू में वह बेटा मेरे नहीं था तब भी तो मैं जिन्दा था बीच के दिनों में वह हमारे साथ रहा, अब आगे भी नहीं रहेगा। इसलिए अब इसमें आत्म हत्या की जरूरत क्यों आ पड़ी। बस इतनी सी बात ने मुझे उसी समय सर्वत कर दिया था।"

यह ठीक है यदि हम फूलों के पास रहेंगे तो हमें खुशबू का मजा मिलेगा ही, लेकिन इस संसार को देखते हुये ऐसा हमेशा ही तो रहने वाला नहीं है। या तो हमें फूलों को छोड़ना पड़ेगा अन्यथा फूल हमें मुरझाकर छोड़ जायेगें। **इसी प्रकार के मिलन और बिछोह का नाम संसार है।** ये सब अनुभव हमें अपने जीवन में करने ही पड़ते हैं। ऐसा प्रत्येक फूल जो हमें हमारे मन को आकर्षक या सुन्दर लगता है उसे ही तो हम अपने कोट के कालर पर टांके हुये सदा नहीं रख सकते। इन अनु-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भवों के दौरान हमें अच्छा भी लगेगा और बुरा भी । यही इस संसार का नियम है। इस दुनिया के सम्बन्ध सदा शाश्वत नहीं रहते। जब हम इनको स्थिर मान लेते हैं, बस तभी हम गलती कर जाते हैं। हम इनमें स्थिरता लाने का कितना ही प्रयास क्यों न करें, लेकिन इस संसार में प्रत्येक क्षण निरन्तर बदलाव आता रहता है इसलिये हम हमेशा असफल ही होते रहेंगे और इसलिए हमें इसके साथ उस बदलाव को सहन करने के लिए हर समय तैयार रहना ही पड़ेगा। पता नहीं कल कौन सी परिस्थिति बदल जावेगी। परिस्थितियों के बदल जाने से हममें बदलाव नहीं आये ऐसी ही योग्यता हमें अपने भीतर जागृत करनी है। यही से ही हमारी अपनी और सच्ची प्रार्थना का उदय होता है।

—※—

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ४

भक्ति ही चैतन्यता का स्रोत

भारतीय आध्यात्मिक सिद्धांत जिसे हम अब तक जान पाये हैं वह यही है, जिसके तहत हम मृत्यु से दूर नहीं भागते अपितु उसे अपने चारों तरफ अपने ज्ञान से पाकर स्वीकार करते हैं। इसी एक मात्र सिद्धांत की सिद्धहस्तता प्राप्त करने के लिए हमें, न जाने कितनी प्रकार की साधनाओं में से अनन्य तरीकों से गुजरना पड़ता है। और हमें इस सिद्धांत की समर्थता का पता वास्तव में केवल तब ही लगता है। अन्यथा हमें भी ये उपरोक्त शब्द केवल शाब्दिक जाल से ज्यादा कुछ भी नहीं लगते हैं। इस सिद्धांत को हमें सिद्ध करके यदि अपने अनुभव में लेना है तो, जैसा कि मैंने पहले लिखा है कि सर्वप्रथम सत्य को अपने अन्दर सत्य के ही भाव से स्वीकार करके हमें इस संसार के मायावी सम्बन्धों की यथार्थता का पता चलाना होगा। अब इसके साथ ही यहाँ मैं जागृति के द्वारा मन की भ्रान्तियों से हमारा कैसे पीछा छूट जाता है इस पर कुछ बहुत थोड़ा सा लिखने की कोशिश कर रहा हूँ। क्योंकि हम अपने मन को, बे सिर पैर के अथवा भावनात्मक बोझों से दबाए हुए रखते हैं और चाहकर भी हम अपनी प्रार्थना में नहीं उतर पाते हैं चैतन्यता या जागृति को समझने के लिए हमें अपने अन्दर बहुत ही बारीकी से अध्ययन करना होगा। क्योंकि यह संसार हर क्षण अपना स्वरूप बदल लेता है। इसके परिवर्तनशील स्वभाव के कारण ही यहाँ हम देखते हैं कि, प्रत्येक विचार, स्थिति, परिस्थिति, सम्बन्ध और यहाँ तक कि सिद्धान्तों की परिभाषायें भी देश काल और परिस्थितियों के सिद्धान्तानुसार* बदलते रहते हैं। इसलिए हमें अपने अन्दर इतनी उच्च स्तर की जागृति या होश की लौ निरन्तर जलाए रखनी पड़ेगी, जिसके द्वारा हम इस निरन्तर बदलते हुए संसार पर नजर रख सकेंगे।

* जहाँ एक तरफ बद्रीनाथ धाम में प्याज की बदबू से भी मन में वितृष्णा पैदा होती है वहीं रामेश्वरम या जगन्नाथपुरी के क्षेत्र में मछली की बदबू का भी हम बुरा नहीं मानते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुरू-शुरू में हम अपने होश में अपने आस-पास के बड़े और स्थूल परिवर्तनों को पकड़ना जानते हैं और इसके बाद के गहरे अभ्यास के द्वारा हम अपने अन्दर के सूक्ष्म परिवर्तनों से भी अपना साक्षात करके उनके स्त्रोत को भी जान जाते हैं।

जैसे कि हम किसी वायुयान से सफर कर रहे हैं हमारी सीट की बगल वाली खिड़की से हमारी आँखों पर धूप आ रही है। इस प्रकार की स्थिति में हमारी आँख का पर्दा (डायफ्राम) सिकुड़ा रहता है।

लेकिन थोड़ी देर बाद ही वह वायुयान जब बादलों के बीच में से गुजरता है तब हमारी आँखों के सामने से धूप के हटते ही या प्रकाश के कम होते ही हमारी आँख का वही परदा, अब अपने आप फैलकर ज्यादा खुल जाता है। लेकिन हमारी आँखों के अन्दर हुए इस परिवर्तन को हम जान नहीं पाते हैं। इसमें आश्चर्य-चकित कर देने वाली कोई विशेष बात नहीं है, यह तो हमारी आँख की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। ठीक इसी प्रकार से हमारे शरीर और मन के भीतर अलग-२ तरीकों से अलग-२ तरह के सूक्ष्म परिवर्तन लगातार होते रहते हैं लेकिन हमें पता नहीं चलता है।

आध्यात्म के मार्ग पर चलने वाले साधक हमेशा जागरूक रहकर इन सूक्ष्म परिवर्तनों पर हर पल अपनी निगाह रखे रहते हैं। तथा कई एक श्रम साध्य साधनाओं में निरन्तर लगे रहकर अपनी क्षमताओं में ज्यादा से ज्यादा वृद्धि करते ही जाते हैं। जिसकी वजह से इस प्रकार के साधकों का इस जागृति के प्रति बाद में इतना प्रबल आत्म विश्वास बढ़ जाता है जिसके कारण उनके समक्ष आने वाली किसी भी प्रकार की बाधा फिर उन्हें विचलित नहीं कर पाती है। क्योंकि, उन्होंने अपनी निगाह शुरू से ही बदलती हुई परिस्थितियों पर केन्द्रित की हुई थी। जिसकी वजह से कोई भी घटना इनके समक्ष एकदम से अकस्मात रूप से प्रगट नहीं होती है। और इसी कारण से ही इस स्तर के लोगों को हतप्रभ होते हुए भी नहीं देखा जाता है। इन लोगों के पूर्वानुमान भी अधिकतर इसी कारण से ही सही निकलते हैं।

कक्षा का अध्यापक अपने विषय में छात्रों के आने वाले संभावित परीक्षाफल का अनुमान भली-भाँति लगा ही लेता है क्योंकि उसने अपने सम्पूर्ण सत्र के दौरान आने वाले प्रत्येक दिन के, प्रत्येक घण्टे का होशपूर्वक अपने से साक्षात होने दिया होता है। और ठीक इसके विपरीत यदि वही अध्यापक रुचिहीन तरीके से अपना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्यापन संचालन करता रहा है तो, बतायेगा कुछ और, परिणाम निकलेगा कुछ और। और तब हम अपने असफल होने की दशा में अपने मन पर असीमित बोझ बढ़ा लेते हैं। इसलिए यहाँ यह बात समझने की है कि **यदि हमें अपने स्वयं के मन के ऊपर से लदे हुए बोझ को उतारकर चित्त को निर्मल करना है तो उसका एक मात्र उपाय हमारे पास जागृति ही है।** उसी के द्वारा हमें बाद में यह जानकारी हासिल होती है कि हम किन अँगारों पर खड़े हैं अथवा नरक के कौन से कौने में हम पड़े हैं। इस संसार के दूसरे अन्य लोग कहाँ तक पहुँच गए हैं। जबकि हम अभी तक इस अँधेरी कीचड़ में ही फँसे पड़े हैं। असल बात तो यह है कि **जागृति के द्वारा हमें अपने बारे में अपने सत्य का पता चलता है।**

संसार की प्रत्येक चीज जो हमें आज और अब चैतन्य दिखाई दे रही है अथवा गतिशील दिखाई दे रही है आने वाले कल में उसकी गति थम जाने वाली है। दूसरे शब्दों में आज जिसे हम चैतन्य समझ रहे हैं कल वही जड़ सिद्ध हो जाने वाला है। बच्चे लट्टू से खेलते समय उसके ऊपर डोरी लपेट कर ज़मीन पर फैंक कर उसे घुमाते हैं। काफी देर तक वह अपने आप डोरी से अलग रहकर भी घूमता रहता है। शुरू में घूमते हुये उस लकड़ी के लट्टू को देखकर आप भी आश्चर्यचकित हो जायेंगे कि बिना किसी सहायता के यह अकेला अपने आप किस प्रकार से घूम रहा है। लेकिन थोड़ी देर के पश्चात ही वह गिर जाता है। ठीक इसी प्रकार हमारा शरीर ८० या १०० साल बाद गिर ही तो जाता है। इतने सालों तक हम अपनी दसों इन्द्रियों *की वासनाओं से शक्ति पाकर लट्टू की तरह घूमते ही तो रहे थे। लेकिन उस लट्टू की डोरी में ताकत देने वाले बालक के हाथों की तरह से ही हमारे इस शरीर को घुमाने वाली इन इन्द्रियों की भी ताकत देने वाली कोई चैतन्य शक्ति कहीं होनी ही चाहिए। अन्यथा इन इन्द्रियों को ताकत मिलेगी कहाँ से ?

आज तक हम सभी सांसारिक इन्द्रियगोचर वस्तुओं को अपने मस्तिष्क से जानते आये हैं। लेकिन मस्तिष्क की भी एक सीमा है। वह यह कि हमारा

* दस इन्द्रियाँ-पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं पाँच कर्म इन्द्रियाँ हैं।
पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ—आँख, कान, नाक, रसना (जीभ) तथा त्वचा (स्पर्श का अनुभव)।
पाँच कर्म इन्द्रियाँ—हाथ, पैर, मुंह (बोलना), लिंग तथा गुदा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मस्तिष्क उस चैतन्य को नहीं जान पाता है, जहाँ से इन जड़ तुल्य क्रियाओं की डोर बँधी है। अगर मस्तिष्क अपने आप में स्वयं चैतन्य होता तो अपने चैतन्य स्वरूप के कारण उस चैतन्य शक्ति को अवश्य ही पहचान लेता। यही एक कारण है जिसके द्वारा हमें पता चलता है कि हमारा मस्तिष्क * भी जड़ ही है। इसलिए मेरा कहना यहाँ केवल इतना ही है कि यदि हमें उस चैतन्य को जानना है तो उसकी

*** मस्तिष्क—आध्यात्म में बुद्धि को चैतन्य माना गया है जो स्थूल शरीर के साथ-साथ सूक्ष्म शरीर में भी विद्यमान रहती है, जबकि मस्तिष्क एक स्थूल शारीरिक अवयव है, इसलिए बुद्धि तथा मस्तिष्क में स्पष्ट अन्तर समझा जाना चाहिए।**

प्राप्ति का साधन कम से कम मस्तिष्क तो नहीं बन सकता है। बात भी सीधी सी ही है जड़ के द्वारा हम चैतन्य को कैसे जान सकते हैं। जबकि चैतन्य के द्वारा चैतन्य को जानने का कारण हमारी समझ में आ भी सकता है।

मस्तिष्क के अलावा हमारे पास एक शक्ति के रूप में मन और है जो, हमें अपनी विचारशीलता के कारण हर समय क्रियान्वित रखता है। लेकिन मन को जानने के लिए हमें थोड़ा कल्पना में उतरना होगा। चूंकि मन का कोई स्थूल स्वरूप हमारे समक्ष नहीं है। इसलिए ही मस्तिष्क की कोई भी कार्य शैली यहाँ काम नहीं आ सकती है। यहाँ तो मन पर विचार करते समय केवल कल्पना ही हमारे काम आ सकती है। क्योंकि कल्पना के द्वारा ही हम चिन्तन कर सकते हैं या इस आध्यात्म दर्शन में उतर सकते हैं। असली बात तो यह है **कि, जहाँसे यह स्थूल संसार मिटता है वहीं से सूक्ष्म संसार शुरू होता है। जहाँ से जड़ता मिटतीहै वहीं से चैतन्यता शुरू होती है।** इसलिए पहले हमें स्थूलता से **मस्तिष्क के स्तर पर** छुटकारा पाना होगा तभी हम सूक्ष्म स्वरूपा मन पर अपना अनुसन्धान कर सकेंगे। क्योंकि हमारे पास कर्ता तो अकेला ही है। चाहे उसे हम मस्तिष्क के स्तर पर व्यस्त रखकर बाहरी संसार के कार्य-कलापों को उससे कराते जायें, अथवा उस कर्ता की शक्ति को मन में लगाकर अपने भीतर के आंतरिक संसार में उतरकर गोता लगायें।

कुछ लोगों की यह धारणा होती है कि कल्पना भी तो मस्तिष्क के द्वारा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही हमारी बुद्धि में पहुँचती है। और जितना भी प्रयत्न करते हैं तो हमें ऐसा ही लगता भी है क्योंकि, तथ्यागत हमारा प्रत्येक कार्य मस्तिष्क के द्वारा ही तो होता हुआ हमें प्रतीत होता है। **लेकिन मस्तिष्क हमारे पास एक यंत्र या कम्प्यूटर के रूप में हमारे शरीर में होता है। जबकि ज्ञान हमारे सूक्ष्म या काल्पनिक मन के भीतर रहता हैं। मन के भीतर का सूक्ष्म अवस्था का आवरण लिए हुए वही ज्ञान जब मस्तिष्क के द्वारा स्थूल अवस्था में आकर प्रकट होता है तब हमें ऐसा ही तो लगेगा जैसे कि, वह हमारे मस्तिष्क के द्वारा ही हमें प्राप्त हो रहा है।** हमें दिखाई तो आँख के लैन्स से देता है लेकिन देखने वाला मस्तिष्क के आदेशों से युक्त कोई अन्य परदा है।

इसके बावजूद भी एक शंका लोगों की ओर उठती है कि जिस मन का परिचय हमसे केवल कल्पना में ही होता है उसका अस्तित्व हम क्या मानकर तथा किस प्रकार से स्वीकार करें।

हम एक उत्तल लैन्स के द्वारा भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला में किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब पर्दे पर बना लेते हैं। वह पर्दे पर दिखाई भी पड़ता है उसका फिल्म पर फोटो भी खींचा जा सकता है इसलिए उसे हम वास्तविक प्रतिबिम्ब कहते हैं। दूसरी ओर एक साधारण दर्पण के सामने हम स्वयं खड़े हो जाते हैं तब भी हम एक प्रतिबिम्ब अपने ही चेहरे का उसके भीतर देखते हैं। लेकिन उसे छू नहीं सकते उसे परदे पर नहीं बना सकते। इसलिये उसे हम काल्पनिक प्रतिबिम्ब कहते हैं। इसका मतलब यह तो नहीं कि किसी के साथ यदि काल्पनिक शब्द जुड़ जाय तो उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। दर्पण वाले प्रतिबिम्ब का अस्तित्व तो है लेकिन काल्पनिक रूप में। उस प्रतिबिम्ब का अस्तित्व तो इस बात से ही स्पष्ट हो जाता है कि हमारा चेहरा वहाँ मौजूद है और जब तक हमारा चेहरा मौजूद है इस संसार में इसके द्वारा प्रतिबिम्बत प्रत्येक प्रतिबिम्ब का अस्तित्व रहेगा ही, भले ही वह काल्पनिक स्तर पर ही क्यों न हो।

ठीक इसी प्रकार मस्तिष्क भी किसी प्रकार का एक लैन्स है जिसके द्वारा होने वाली बातें वास्तविक तथा तथ्यों के अन्दर सिद्ध करने लायक होती हैं। जबकि हमारा मन एक प्रकार का दर्पण है जिसके द्वारा होने वाले कार्य-कलाप तथ्यों से परे तथा काल्पनिक रूप में होते हैं। लेकिन फिर भी जो कुछ उसके द्वारा हमें

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काल्पनिक रूप से ही सही पता चलता है, तो इसका सीधा सा मतलब यही है कि मन की काल्पनिक प्रक्रियाओं का जो प्रतिबिम्ब स्वरूप हमारे सामने मौजूद है उसका मूल स्रोत इस ब्रह्माण्ड में (दर्पण के सामने हमारे चेहरे की तरह) कहीं न कहीं होना ही चाहिए। इस प्रकार भी हम यह देखते हैं कि आध्यात्मिक अथवा अभी हम यह कह लें कि काल्पनिक बातों को जानने के लिए, हमें वहीं आधार उपयुक्त होगा जिसके द्वारा हमें वे काल्पनिक बातें वर्तमान में मालूम हो रही हैं न कि अन्य कोई आधार।

अपने मन के स्वरूप को जब हम स्वीकार कर लेते हैं तब हमारे सामने कुछ बातें अपने आप प्रकट होती हैं। जो मुख्यतया पाँच हैं :—

१. स्वप्न देखना
२. कल्पना में खो जाना
३. मानसिक रूप से यात्रा कर लेना
४. मानसिक बन्धन
५. मानसिक दर्द या मानसिक आनन्द

निद्रा के समय हम अपने स्वप्नों में नाना प्रकार के दृश्यों का अवलोकन करते हैं तो वहीं हम, कल्पना में खोकर हम अपने मानस चिन्तन में लीन होते है। जिसके कारण साहित्य सृजन की क्षमता हम में आती है। इसी प्रकार से हम अपने स्थूल शरीर से तो घर में बैठे रहते हैं लेकिन अपने मन की इसी शक्ति का उपयोग करके हम कलकत्ता की काली देवी के मन्दिर में मूर्ति के सामने पहुँच जाते हैं और इसी प्रकार की अनन्य काल्पनिक यात्रायें हमारी मानसिक यात्राओं की परिधि में ही आती हैं। जिस प्रकार हमारे शरीर के बन्धन हैं जिनके कारण हम असीमित नहीं हो सकते (जैसे भार होने की वजह से आकाश में उड़ नहीं सकते अथवा बिना स्वांस के हम जीवित नहीं रह सकते) ठीक इसी प्रकार ही हमारे इस मानसिक स्वरूप के भी कुछ बन्धन हैं। जैसे हमारी कल्पना में मन के स्तर पर कोई बहुत ही सुन्दर दृश्य उपस्थित होता है लेकिन हम उस काल्पनिक दृश्य को वास्तविक दृश्य में नहीं बदल पाते हैं ये मजबूरी ही बन्धन का कारण यहाँ बनती है।

जहाँ हम मानसिक यात्रा करके मानसिक रूप से पहुँच जाते हैं, लेकिन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वहाँ हम वास्तविक रूप से प्रगट नहीं हो पाते हैं। यही एक कारण है हमारे बेचैन होने का जिसके कारण हम असीमित की इच्छा रखते हुए भी इस संसार में सीमित ही रह जाते हैं।

हम इस संसार में रहते हुए यहाँ की प्रत्येक बात को अच्छे या बुरे इन मापदण्डों के द्वारा ही मापते हैं। शरीर के स्तर पर जब हमें अच्छा लगता है उसे हम सुखानुभूति कहते हैं। और बुरा लगने पर दुखानुभूति। लेकिन मन के स्तर पर जब हम अच्छी अनुभूति से भर उठते हैं उसे हम सुख न कहकर आनन्द कहते हैं और बुरा लगने पर उसे मानसिक दर्द कहते हैं। शारीरिक रूप से सुख और दुख अनुभव करते हुए हम इतने प्रभावित नहीं होते जितने कि हम अपने मानसिक स्तर पर आनन्द और दर्द को सहन करने के पश्चात प्रभावित हो जाते हैं। राजमहल में रहने वाला सम्राट आनन्दित हो ही कोई जरूरी नहीं है, जबकि, सड़क के किनारे बैठे हुए फकीर को आप आनन्दित पा सकते हैं। बाहरी परिस्थितियों से सुख और दुःख में फर्क आता है लेकिन, अपने मन के भीतर के आनन्द और दर्द में ठीक उन्हीं परिस्थितियों से कुछ भी फर्क पड़ने की सम्भावना तब तक नहीं है, जब तक उनमें स्वयं मन भी शामिल नहीं हो जाता।

मेरी अपने जीवन में सुनी हुई कीमती कथाओं में से एक यह है जिसमें एक ही प्रकार की बाहरी परिस्थितियों में अलग-अलग तरह के मनों पर कितना विपरीत या अलग तरह का प्रभाव पड़ता है। एक सुनार और लुहार की दुकानें बिल्कुल बराबर-बराबर थीं। खाली समय में जिस प्रकार सुनार और लुहार आपस में दोस्ताना बातचीत कर लिया करते थे। उसी प्रकार सोना और लोहा भी आपस में बातचीत किया करते थे। एक दिन सोना लोहे से बोला, "मित्र एक बात मुझे बताओ, जिस हथौड़े से तुम पर चोट पड़ती है, ठीक वैसे ही हथौड़े से मुझ पर भी चोट पड़ती है लेकिन मैं देखता हूँ कि पिटते समय तुम कुछ ज्यादा ही चिल्लाते हो, क्या मैं जान सकता हूँ कि, तुम इतनी अधिक आवाज क्यों करते हो ?"

थोड़ा सा संयत होकर लोहा बोला, "मित्र तुम सोना हो और पिटते लोहे के हथौड़े से हो, जबकि मैं लोहा हूँ और लोहे से ही पिटता हूँ। इसी कारण मेरी चीख ज्यादा निकलती है, क्योंकि तुम गैरों से पिटते हो कोई खास बात नहीं है, लेकिन मैं अपनों से ही पिटता हूँ। मेरे दर्द का कोई ओर छोर नहीं है।"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूसरा आपकी कोई अँगुली चीर दे तो कोई खास बात नहीं होती, लेकिन जरा अपने हाथ से अपनी अँगुली को चीर कर तो देखो, मालुम हो जायेगा अपनों का दर्द कैसा होता है। रास्ते में कोई गुण्डा आपको थप्पड़ मार दे आप घर चले आयेगें एक दो दिन में भूल भी जायेगें, लेकिन कहीं आपका भाई आपको थप्पड़ मार दे तो आप जिन्दगी भर उसे नहीं भूल पाते हैं, यही होता है मन का दर्द। आप सारे संसार को थका सकते हैं लेकिन आप अपने ही मन के सामने थक जायेगें और ऐसा यहाँ इस पृथ्वी पर जीवित प्रत्येक इन्सान के मन में होता है। इसके साथ ही यह बात बड़े अच्छे तरीके से हमारी समझ में आ जाती है कि, **जहाँ-जहाँ मन है वहाँ-वहाँ बैचेनी होती है। जहाँ मन ही नहीं है वहाँ बैचेनी भी कैसे होगी ? इसलिए वहाँ इन्सानियत भी नहीं होगी। चैतन्यता भी कैसे होगी ? वहाँ तो जड़ता होगी, जहाँ जितनी ज्यादा चैतन्यता होगी वहाँ उतनी ज्यादा ही बैचेनी होगी।** और **जितने ज्यादा जोर से आप बैचेन हो जायेगें उतने ही ज्यादा जोर से उस बैचेनी से छुटकारा पाने की कोशिश पायेगें आप अपने मन के भीतर।**

इसी एक मात्र कारण की वजह से जो व्यक्ति जितना ज्यादा भावुक होगा उतना ही ज्यादा आप उसको प्रार्थनामय पाओगे। क्योंकि प्रार्थना तो भावनाओं की किरणों पर ही उदय होती है। प्रार्थनामय जीवन तो केवल उसका ही बनता है जो, अपने दिल में दर्द पालना जानता हो **जो व्यक्ति भावना शून्य है उसे तो प्रार्थना के द्वार पर दस्तक देने का भी अधिकार अभी नहीं मिला है।** भक्ति के लिये तो हमें प्रेम से भी ऊपर उठकर अपनी भावनाओं को और कहीं लगाना होता है।

मैंने पहले लिखा है कि, भावनाओं के द्वारा जब हम शरीर की प्रार्थना करते हैं उसे हम प्रेम कहते हैं। लेकिन जब हम उन्हीं भावनाओं को श्रद्धा द्वारा अशरीरी की प्रार्थना में लगाते हैं उसे हम भक्ति कहते हैं। इस बात के दो विषय वस्तु हैं, एक है भावना जो चैतन्यता का द्योतक है और दूसरा है शरीर जो जड़ता का प्रदर्शन करता है इसलिए ही प्रेम में कभी हम भक्ति की तरफ जाते हुये प्रतीत होते हैं लेकिन कुछ समय पश्चात हम अपने आपको शारीरिक इन्द्रिय जाल में फँसा हुआ पाते हैं। **प्रेम में आधी भक्ति है और आधा काम, यानी भक्ति और काम का सम्मिश्रण है प्रेम।** दूसरी स्थिति वह है जब हम उन्हीं भावनाओं के द्वारा किसी अशरीरी की प्रार्थना करते हैं तो वह भक्ति कहलाती है जिसमें दोनों ही पहलू स्थूल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की जड़ता से दूर हट जाते हैं। जिसके कारण से भक्ति में केवल चैतन्य भाव ही बचता है। इसलिये भक्ति में प्रेम की तरह के से बन्धन नहीं बनते हैं इसीलिये ही भक्ति, दो व्यक्तियों के बीच नहीं हो पाती या दो स्थूलों के बीच नहीं हो पाती। भक्ति तो भक्त के मन और भगवान के बीच में ही होती है।

लेकिन शुरू-शुरू में साधक को या भक्त को एक विशेष कठिनाई आती है कि वह अपने मन की भावनाओं को किस तरफ फेंके या प्रवाहित करे। वह किसका चिन्तन करे, वह किसकी भक्ति में पड़े। हमने इस संसार में रहते हुये अभी तक स्थूल स्वरूपों को ही अपने नजदीक पाकर दूसरे शरीरों से प्रेम करना सीखा है। आजतक यही बात हमारे गले उतरी है कि हम अपनी भावनाओं को किसी की निगाहों में या किसी के चरणों में अर्पित कर सकते हैं। यहाँ भी यही आदत इस उपरोक्त कठिनाई का कारण बनती हैं।

इसी बात को ध्यान में रखकर हमारी भारतीय संस्कृति में, शुरू में साधक को यह छूट दी गई है कि वह कोई भी प्रतीक जो उसे शुभ लगे, आकर्षित लगे उसे वह चुनकर अपना सकता है और देखा गया है कि हम प्रतीक भी उसी प्रकार के चुनते हैं जिस प्रकार की हमारी स्वयं की मानसिकता होती है। जैसे कुछ लोग मां स्वरूप को साधने के लिए देवी का चयन करते हैं। कुछ लोग कृष्ण का बाल स्वरूप स्वीकार करते हैं या कुछ जो आदर्शवादी मानसिकता से परिपूर्ण हैं, तो वह राम का सहारा लेते हैं, और कुछ जो क्रियात्मक विचार के हैं वह महायोगी कृष्ण को अपना प्रतीक मानते हैं।

हमारे भारतीय दर्शन, भारतीय संस्कृति अथवा हिन्दू धर्म के मान्य प्रतिपादित सिद्धान्तों में सबसे महत्वपूर्ण यदि कोई सिद्धान्त है तो वह यही है कि **वह हमें साकार की पूजा करने की छूट देता है। अथवा मूर्ति पूजा हमारी संस्कृति की देन है।** इस साकार को जानबूझ कर हमारी साधना पद्धति में शामिल किया गया है। सबसे पहले हमें इसी द्वार से गुजरना होता है। भले ही थोड़े समय के लिए ही सही। क्यों रखा गया है यह साकार का द्वार हमारे और निराकार के बीच ? क्या हमारा रास्ता लम्बा करने के लिए ? अथवा हमें मुख्य मार्ग से हटाने के लिए ? अथवा हमारे रास्ते को संगीतमय या मधुर बनाने के लिए ? इसको जरा गौर पूर्वक और धैर्य पूर्वक भी समझने की चेष्टा करें। क्योंकि बहुत से लोगों ने बिना इस बात

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की गहराई को समझे ही मूर्ति पूजा की निन्दा की है। इस प्रकार के निन्दक लोगों में बहुत ही प्रतिभाशाली व्यक्तित्व भी रहे हैं। अगर वह इसको समझकर अपनी मेहनत को इस क्षेत्र में लगाते तो आज बात कुछ और ही होती।

आजकल स्कूलों में छोटे बच्चों को गिनती सिखाने के लिए तारों में पिरोई हुई गोलियों से (जिसे अबेकस भी कहते हैं) गिनती सिखाते हैं क्योंकि स्कूल आने से पहले वह बच्चा काँच की गोलियों से ही तो अपने घर पर खेलता रहा था। यहाँ स्कूल में भी उस नितान्त अबोध बालक को आकर्षित करने के लिए गोलियों का ही स्तेमाल किया जाता है। ठीक इसी प्रकार इस मार्ग की साधना में नये-नये साधकों के लिए जिन्हें अभी यह बिलकुल पता ही नहीं है कि हम साधना किस प्रकार से करें इस साधन के प्रति उनमें आकर्षण जुटाने के लिए उनकी चित्त दशा के अनुसार मूर्ति चुनने की छूट देने में बुराई क्या है? जिस प्रकार बालक जब गिनती सीख जाता है उसे उन तार में पिरोई हुई गोलियों की आवश्यकता नहीं रहती, ठीक इसी प्रकार जब साधक साधना का मर्म समझ लेता है तब वह द्वैत पर अटका नहीं रहता और वह अपनी साधना के अगले चरण अद्वैत पर पहुँच जाता है। द्वैत का अर्थ होता है जहाँ दो हैं, एक भक्त और दूसरा वह जिसकी भक्ति की जा रही है। यानि भक्ति में कर्ता मौजूद रहता है और जब तक कर्ता मौजूद रहता है अपनी साधना में यह स्थिति द्वैत की ही रहती है। और जैसे ही भक्त को भक्ति का महत्व समझ में आने लगता है तभी से वह अपने कर्ता भाव को तिरोहित करने में लग जाता है। तथा धीरे-धीरे वह अपनी साधना की लगन से यह जान ही लेता है कि कर्ता के भाव को तिरोहित करते-करते उसका वह साकार परमात्मा भी तिरोहित होने लगा हैं। क्योंकि वह साकार परमात्मा भी तो हमने जब प्रतीक के रूप में चुना था तब वह हमारी मानसिकताओं के अनुरूप ही तो था। और असल बात तो यह है, कि कर्ता होने का भाव समाप्त होते-होते हमारे मन में हमारे होने के जितने भी कारण हमें समझ आते हैं, वे तमाम समूल नष्ट होने लगते हैं। तब फिर क्या बचता है, तब तो केवल एक श्रद्धा का भाव बचता है जिसमें न तो भक्त होता है और न ही प्रतीकात्मक भगवान। इसी भाव को हम अद्वैत भाव के शब्द से जानते हैं। अद्वैत यानी जहाँ दो नहीं, बस एक ही।

इस तरह से हमारे भारतीय दर्शन में पहले साधक को गहरी बात समझाने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से पहिले उसे छोटे-बड़े खिलौनो को मूर्ति पूजा के रूप में जानबूझ कर और बहुत अच्छी तरह से सोच समझ कर सम्भालने की छूट दी गयी है।

जब हम भक्ति की तह तक पहुँचने वाले ही होते हैं तभी हमें पता चलता है कि न तो कहीं कोई अपने से अतिरिक्त परमात्मा मौजूद है इस प्रकृति में और न ही अपने से अलग कोई दूसरा मैं मौजूद है। जब इतना ज्ञान हमें अपनी प्रार्थना रूपी साधना से हो जाता है तभी हमें उन वाक्यों की सार्थकता समझ में आती है जिसमें कहा गया है "**अहम् ब्रह्मास्मि**"। मतलब हम ही ब्रह्म हैं यहाँ इस बात को समझते समय यह अवश्य ही ध्यान रहे कि, इस वाक्य का मतलब मैं ही ब्रह्म हूँ नहीं समझ लेना चाहिये क्योंकि मैं ही ब्रह्म हूँ समझते ही एक प्रश्न हमारे सामने खड़ा हो जाता है कि जब मैं ही ब्रह्म हूँ, तब फिर बाकी संसार क्या है और बहुत-लोगों ने इस प्रकार के अनुभव पाते ही अपने आपको भगवान घोषित कर दिया है। यह ठीक है बहुत सारी अलौकिक शक्तियाँ जो एक परम पुरुष में होती हैं साधारण पुरुष में नहीं होती उनमें आ जाती हैं। अथवा उनमें कुछ अंश जिन्हें हम भगवत स्वरूप मानते हैं आ जाते हैं। लेकिन इसके बावजूद भी क्या वे इस प्रकृति में दखलन्दाजी कर सकते हैं। और बस, यही अकेली एक बात परख है जो उन्हें भगवान से अलग पुरुष के रूप में या मनुष्य के रूप में बनाए रखती है।

लेकिन यदि हम सभी ब्रह्म हैं तब यह बात कुछ ज्यादा सरल होकर हमारे सामने उपस्थित होती है। क्योंकि तभी हम यह जान पाते हैं कि यहाँ इस दुनियां में कोई भी कम नहीं है। न तो वह, और न ही हम। सब के सब एक रास्ते में चलने वाले समान पथिक हैं। बहुत भीतर से हम और वह आपस में एक सूत्र से जुड़े हैं अथवा बँधे हैं।

हम इस संसार में खून के रिश्ते को ही रिश्ता मानते हैं लेकिन यहाँ तो अपनी अस्मिता का ही रिश्ता है, जो कि खून के रिश्ते से तो बहुत-बहुत गुणा मजबूत है। खून का रिश्ता तो इस वर्तमान शरीर के छूटने के पश्चात टूट जाता है। लेकिन अस्मिता का रिश्ता तो सदा शाश्वत रिश्ता है जो हमारी मृत्यु के उपरान्त भी बना रहता है। इस बात को अच्छी तरह से हमारे मन में ख्याल आ जाने के पश्चात क्यों न हमारे चिन्तन में विश्व बन्धुत्व की भावना आयेगी। और जिन लोगों ने भी ब्रह्म के स्वरूप को इस प्रकार से जाना है वे लोग स्वयंभू भगवान न बनकर अपने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपको उसके अंश के रूप में ही समझते रहे हैं। और जब यहाँ की सब जीवात्मायें उसकी अंश मात्र हैं तो फिर न तो कोई पराया है और न ही कोई विशेष रूप से अपना है। तब वे तमाम दुनियाँ की दकियानूसी विचारधारा से ऊपर उठ जाते हैं। उनके लिये जाति, धर्म, राष्ट्र ये तमाम बड़ी-बड़ी बातें गौण हो जाती हैं। तथा इस प्रकार के लोग इस सारे के सारे संसार को सराय रूप में जान लेते हैं। यहाँ रहने वाली सभी जीवात्मायें यहाँ की यात्री हैं। कोई पाँच दिन पहले आया है, और कोई पाँच दिन बाद में। किसी के पास पाँच दिन का अनुभव ज्यादा है और किसी के पास पाँच दिन का अनुभव कम। एक दिन इस सराय को खाली करके (किसी को अभी किसी को थोड़ी देर बाद में) अपने-अपने गन्तव्य स्थल पर पहुँचना ही है।

इस प्रकार के लोगों को संसार की प्रत्येक वस्तु में एक जैसा प्रेम होता है ये किसी के साथ अप्रेममय तो रह ही नहीं सकते। फूल और काँटे, दुःख और सुख, शुभ और अशुभ, जवानी और बुढ़ापा, अच्छा या बुरा, जीवन और मृत्यु इन तमाम सांसारिक बातों को उस अंशी, जिसके हम सब अंश हैं, उसी के प्रसाद के रूप में ग्रहण करते हैं। यही हमारी भारतीय संस्कृति का स्वरूप है। तथा इसी को अच्छी तरह से साधक समझ कर वह अपनी प्रार्थना के भविष्य के संभावित स्वरूप को जान पाता है।

इस प्रकार से प्रार्थना या भक्ति के स्वरूप को जानकर ही, हम अपने सूक्ष्म एवं आन्तरिक स्रोत को जान पाते हैं। जिसके तहत हम मस्तिष्क की जड़ता को समझकर मन की या अपने भीतर की अस्मिता की चैतन्यता को जानते हैं और केवल तब ही हमें पता चलता है, कि अपनी चैतन्यता के स्रोत को जानने के लिए, भक्ति के अतिरिक्त अन्य कोई भी साधन साध्य नहीं हो सकता है। क्योंकि कोई भी वस्तु मोल लेकर कहीं किसी के भेद ले सकता है। जबकि प्रेम में हमें हमारे सामने ऐसी बातें भी प्रकट हो जाती हैं जिनकी हमें पूर्व में कल्पना भी नहीं होती है। हम उस चैतन्य ब्रह्म को जानने के लिए अनन्य प्रकार से तरीके अपना सकते हैं, लेकिन बिना भक्ति को उसमें सर्वोपरि रखकर हम उसी प्रकार से असफल रहेंगे जिस प्रकार से सूखे ठूँठ पर फूल खिलने की कामना करके हम रहते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ५

चेतन मन से अचेतन मन पर पहुँचने का फल ही सिद्धियाँ

यदि हमें इस संसार में रहते हुए प्यास लगती है तो, हमारी यही प्यास इस संसार में कहीं न कहीं पानी होने की सूचना भी देती है, और जब इस संसार में कहीं भी पानी मौजूद है तो, यह भी निश्चित ही है कि, उसे प्राप्त करने का कोई न कोई साधन इस संसार में होगा ही।

सैद्धान्तिक रूप से प्रार्थना को समझने के लिए इस उपरोक्त बात को बड़े गहरे में समझ लेना चाहिए। बड़े गहरे में समझने का अर्थ यहाँ इतना ही है कि, हम कहीं केवल कौतूहल वश या केवल शौकिया ही तो प्रार्थना को समझना नहीं चाह रहे हैं। क्योंकि इस तरह से या तो हम प्रार्थना को समझ ही नहीं पायेगें या हमारा प्रार्थना में प्रवेश न होकर हम स्वयं प्रार्थना से दूर भटक जावेंगे।

जब तक हमारे अन्दर मन में उस अमूर्त की प्यास नहीं लगती है। तब तक तो हमें यही समझना चाहिए कि अभी हमारे प्रार्थनामय होने का समय नहीं आया है। क्योंकि कोशिश करके कभी कहीं किसी को भी प्यास लग सकती है। हम ज्यादा से ज्यादा, प्यासे होने का अभिनय मात्र कर सकते हैं और देखने में भी ज्यादातर ऐसा ही आता है। लोग परमात्मा का नाम भी शौकिया लेते हैं। हम अपने घर में हर माह सत्यनारायण की कथा करवाते हैं, लेकिन सच तो यह है कि माहवारी पंडित ही आकर हमें सुबह याद दिलाता है कि सेठ जी आज कथा होगी। और तब हम कथा सुन लेते हैं। इसमें भी ताज्जुब की बात यह है कि देर होने की वजह से मन में दुकान चल रही होती है और उधर पंडित जी को भी दूसरी जगह जाकर कथा कहनी है। इसलिए वह भी जल्दी में एकाध पृष्ठ छोड़कर पढ़ जाता है। हम हर माह उसी एक ही कथा को बार-बार सुनते हैं लेकिन हम उस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पंडित की गलती को नहीं पकड़ पाते। जबकि छोटा बालक जो मन से केन्द्रित होकर उस कथा को सुन रहा था, रात को सोते समय अपनी मम्मी से कहता है कि, "मम्मी-मम्मी सुबह पंडित जी भगवान जी की कथा को बीच में से छोड़कर पढ़ गये थे।"

मम्मी कहती है, "नहीं तो।"

तब वह फिर कहता है, "हाँ, मम्मी जब आप प्रसाद बनाने में लगी हुई थीं।" और इसी के साथ बात आयी गयी हो जाती है।

इस तरह से हम देखते हैं कि प्रार्थना भी हम इस तरह से करना चाहते हैं जिसमें कर्म तो होता है लेकिन मन और वचन नहीं। इस कारण से यह प्रार्थना न होकर प्रार्थना का दिखावा मात्र ही होता हैं, जहाँ प्रार्थना ही नहीं है तो फिर किस प्रकार से हम प्रार्थना के मर्म को समझ पायेंगे। कुछ लोग मन्दिर जाते हैं या वे किसी सिद्ध पुरुष के प्रति इसलिए श्रद्धा से भर उठते है कि वह महापुरुष हमारी अमुक परेशानी से अपने चमत्कारों का उपयोग करके हमें बचा लेगा। हमें मुकद्दमे में विजयश्री चाहिए, चुनाव में खड़े होना है। परमात्मा कोई ऐसा चक्कर चलाऐ जिसकी वजह से मेरे सारे प्रतिद्वन्दी अपना नाम ही वापिस ले लें और मेरा चुनाव निर्विरोध हो जाए। और यदि ऐसा हो जाय, तो सौ रुबदी गुरुद्वारा में कढ़ा प्रसाद अपनी तरफ से चढ़ाऊँगा अथवा जो भी मनौती मैंने मान रखी हैं उसे अवश्य ही पूरा करूँगा। एक चोर भी चोरी करने जाते समय देवी माँ के मन्दिर में मनौती मानकर जाता है। यह दूसरे प्रकार की भूल है। क्योंकि यहाँ श्रद्धा तो है लेकिन मशर्त है। कहीं शर्त रखकर श्रद्धा की जा सकती है? उसकी तरफ जाने वाले रास्ते तो बेशर्त हैं।

जब वह हमें अपनी दुनियाँ में बेशर्त रहने देता है तो हम उसकी प्रार्थना में शर्त के साथ कैसे प्रवेश कर सकते हैं, कभी आपने उसे किसी पर भी यह शर्त थोपते हुए देखा है या तो मेरा नाम जपो नहीं तो मैं अभी तुम्हें मार दूंगा। वह तो इन बेकार की बातों से दूर और बहुत दूर है।

वार्षिक परीक्षाओं के दौरान मन्दिरों में बड़ी भीड़ लगी रहती है। लाइन लगी रहती है प्रसाद चढ़ाने वालों की। वे छात्र इस आशा के साथ प्रसाद पहले से

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूर्ति को चढ़ाते हैं कि परमात्मा हमें परीक्षा में पास करवा देगा और नहीं तो कम से कम दो चार प्रतिशत की बढ़त हमारे अंकों में दिला ही देगा। **इस प्रकार की प्रार्थना में हमारा ध्यान परमात्मा पर कम अपने फेल या पास होने पर अधिक रहता है।** बीच-बीच में थोड़ा-थोड़ा भूले भटके मूर्ति की तरफ भी झुक जाते हैं। नहीं तो अक्सर अपनी प्रार्थना का सारा समय अपने में ही उलझकर बीत जाता है। जब तक हम अपने में ही उलझे हैं तो यह मार्ग भी हमारी प्रार्थना का सही मार्ग कैसे कहा जा सकता है ?

क्या इस परिस्थिति को परमात्मा को प्राप्त करने की प्यास कह सकते हैं ? असल में यह तो प्यास है अपने पास होने की; न कि परमात्मा के क्षेत्र में प्रवेश पाने की।

अभी तक हम अपने आपको उसकी प्रार्थना का पात्र तक नहीं बना पाये हैं। अब बड़ी अजीब परेशानी हमारे मस्तिष्क में खड़ी हो जाती है, **कि जब हमें अपने जीवन में खड़ी हुई किसी परेशानी का समाधान उसके द्वारा नही हो सकता है फिर क्यों हम उसकी प्रार्थना का बोझ अपने ऊपर उठायें ? इसी शंका की वजह से अनन्य लोगों में प्रार्थना का महत्व समझने की भूल हो जाती है।** असल में यह एक उलट फेर सी लगती है। जिस पानी की हमें अभी और इसी वक्त जरूरत है उसे नहीं माँगे बल्कि उससे हम यह प्रार्थना और करें कि हममें प्यास और भी तीव्र तर रूप से जगे।

मैंने ऊपर तीन प्रकार के साधकों का वर्णन किया है। पहला वह है जो कथा कराता है, दान दक्षिणा देता है, धार्मिक कर्म करता है। दूसरा अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए भगवान को आश्वासन देता है मनौतियाँ मानता है यानि वह अपने वचन से बँधकर प्रार्थना करता है। और तीसरा वह है जो प्रसाद अग्रिम ही चढ़ाता है वह शर्त भी नहीं रखता कि पास करेगा तो ही चढ़ाऊँगा। इसलिए यह साधक अन्य दोनों साधकों में तो ऊंचा है। क्योंकि इसकी श्रद्धा मानसिक रूप से कुछ ज्यादा है लेकिन ये तीनों ही प्रकार की प्रार्थनाएँ हैं सशर्त ही। कहीं न कहीं उनके अपने निजी स्वार्थ उनकी प्रार्थना में जुड़े हुए हैं और जब तक हमारी प्रार्थना हमारे स्वयं से जुड़ी है, हमारे स्वार्थों से जुड़ी है, तब तक परमात्मा से किस प्रकार जुड़ सकती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यद्यपि उपरोक्त तीनों प्रकार की प्रार्थनाओं में क्रमशः मन भी है, वचन भी है और कर्म भी है। **लेकिन जब तक मन, वचन और कर्म एक ही प्रार्थना में एक साथ निस्वार्थ नहीं जुड़ते तब तक हमारी प्रार्थना अधर में ही अटकी हुई होती है। क्योंकि हमारी जितनी भी क्षमता मन, वचन, कर्म के रूप में थी वह हमने लगा तो दी लेकिन अपने स्वार्थ को साथ में रखकर लगाई गलत रास्ते पर। इसी कारण से वह व्यर्थ ही चली गई।** जबकि हमें इस प्रार्थना के मार्ग को समझने के लिए यह चाहिए कि मन को लगाएँ, उसकी श्रद्धा तथा चिन्तन में, वचन की शक्ति को लगाएँ ज्ञान में या सत्संग में, और कर्मों को लगायें उसकी ही क्रियाओं में, यानि कि यौगिक क्रियाओं में। अर्थात—

"तपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रियायोगः।"

सर्वप्रथम जब तक हमारा चित्त बिल्कुल निर्मल नही हो जाता, तब तक हम इस मार्ग की पहली सीढ़ी ही नहीं चढ़ सकते हैं। चित्त को निर्मल करने के लिए हमें अपने आप पर अपनी सम्पूर्ण लग्न के साथ में मेहनत करनी होगी, क्योंकि अभी तक तो जन्म-जन्मों के संस्कारों का मैल हमारे चित्त पर जमा पड़ा है। जिसको बिना मेहनत किये हटाना इतना सरल कहाँ है। हमें हमारे मन के मन्दिर को खाली और साफ तो करना ही होगा। नहीं तो उस अमूर्त को कहाँ विराजमान करायेंगे। क्योंकि जब तक हमारा मन निश्चल तथा निष्कपट नहीं है तब तक ऐसा सम्भव कहाँ है ? मन के अलावा अन्य कोई स्थान उसको विराजमान करने के लिए हमारे पास नहीं है। फिर भी एक बात और है, उस मन में हम रहेंगे या वह हमारा परमात्मा, इसलिए ही कबीरदास जी ने कह दिया है कि—

प्रेम गली अति साँकरी, जामें दो न समाएँ।

हमारा मन अभी तक तो पद, प्रतिष्ठा, मान-सम्मान, स्त्री, धन, पुत्र, वैभव, ऐश्वर्य और न जाने कितने ही सांसारिक स्वार्थों से भरा पड़ा है इसलिए वह कैसे मन के मन्दिर में उतरे। उसकी तरफ से तो सदा कृपा की बरसात होती ही रहती है। हमारे ही घड़ों में जगह नहीं है। या तो हम और हमारे स्वार्थ वहाँ रहेंगे या वह और उसकी कृपा। हम ही अड़चन हैं उसके आने में। क्योंकि **जब तक बीज मिटने को तैयार नहीं हो जाता तब तक अंकुर कैसे फूट सकता है।** बीज को तो अपना मिटना स्वीकार करना होगा ही। तभी वह बीज अंकुरित हो सकेगा। **इसलिए यदि हमें परमात्मा के क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रवेश-पत्र लेना है, तो यह**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बात अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए कि, हमें अपने आप को मन के स्तर पर मिटना स्वीकार करना ही होगा। अपने मन का तमाम कूड़ा करकट जिसे हम आज तक स्वयं का स्वरूप समझे हुए थे, जलाकर खाक करना होगा। और वह भी केवल क्षीण सी आशा के साथ जो कभी मिलेगी दूर और बहुत दूर।

कबिरा खड़ा बजार में, लिए लकुटिया हाथ।
जो घर बारे आपना, वो चले हमारे साथ॥

जो स्वेच्छा से खुशी-खुशी अपने मन के घर को जलाने को राजी है कबीर दास जी केवल उसको ही अपने साथ ले चलने को तैयार हैं, अन्य किसी को नहीं। क्योंकि और कोई भी जिसने अभी इतना सा भी कार्य अपने ऊपर नहीं किया है वह तो इस दुर्गम साधना का पात्र भी नहीं हो सकता है।

लेकिन किस प्रकार से हम अपने मन के घर को जलायें? इसको क्रियात्मक रूप में समझने के लिए हमें क्रमबद्ध रूप से धीरे-धीरे और धैर्यपूर्वक तपश्चर्या करनी होगी। जिसके फलस्वरूप पहले शरीर पर, फिर बुद्धि के विचारों पर और अन्त में तभी हमारे मन पर चोट होगी। इस तथाकथित तपश्चर्या को ही हम योग साधना कहते हैं। योग का शब्द आते ही प्रश्न उठता है कि योग का तो इतना बड़ा क्षेत्र है उसमें से हम अपनी साधना योग कहाँ से शुरू करें। इसके उत्तर में मुझे केवल इतना ही कहना है कि हमें शुरू में जिस प्रकार से भाषा पढ़ते समय क ख ग सीखने पड़ते हैं और फिर बाद में हम सुलेख लिखना सीख जाते हैं ठीक इसी प्रकार से योग सीखते समय भी साधक को यही रुख अपनी साधना के दौरान अपनाना चाहिए। अन्त में जब हम योग की प्रक्रियाओं के द्वारा प्राणायाम सिद्ध कर लेते हैं तब ही हमें पता चलता है कि प्राणायाम ही सभी साधनाओं का आधार बिन्दु है। और यही एक मात्र साधन है जिसके द्वारा हम मन के विचारों को अपने संयम में कर सकते हैं। शरीर पर संयम तो हम योगासनों के अभ्यास के द्वारा भी करना सीख जाते हैं लेकिन मन पर संयम तो हम प्राणायाम के द्वारा ही प्राप्त करते हैं।

यहाँ इसी संदर्भ में एक बात और गौर करें। आपका यह आँखों से दिखाई देने वाला स्थूल शरीर ही तो आप नहीं हो सकते हैं। आपका सम्पूर्ण व्यक्तित्व

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपके इस पाँच छः फुट के शरीर के भीतर ही समाया हो ऐसा नहीं है। आपकी आदतें, आपके विचार, आपकी आकांक्षाएँ आपका यह स्थूल शरीर किसी भी प्रकार से कैसे हो सकता है। अगर गहरे में सोचकर आप देखें, तो आप यदि कहीं हो सकते हैं, तो आप अपने मन के आस पास ही हो सकते हैं। यहाँ तक तो हम अपनी अन्तर्दृष्टि से भी जान लेते हैं। लेकिन असल बात तो यह है कि हम हैं मन के भी पार बहुत दूर। और चूंकि प्राणायाम अपनी चरम अवस्था में हमें मन के भी पार ले जाता है जहाँ केवल प्राण ही शुद्धतम रूप में होते हैं। वहाँ पर भी यही प्राणायाम हमारे प्राणों के विभिन्न आयामों को हमें दर्शाने की क्षमता रखता है। इस मार्ग के मूर्धन्य साधक एवं महान योगी महर्षि पतन्जिलि ने इस सम्पूर्ण क्रिया को एक सूत्र में इस प्रकार से लिखा है :—

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।

हम किसी बन्द कमरे में हैं, और खिड़की के धुंधले शीशे से कमरे में प्रकाश को आता हुआ देखते हैं तो हम स्वाभाविक रूप से यही सोचते हैं कि प्रकाश खिड़की से हमें मिल रहा है। लेकिन जब हम प्राणायाम के द्वारा अपने चेतन मन को निर्मल बना लेते हैं जिसके कारण हमारे चेतन मन की खिड़की का शीशा साफ हो जाता है तब हम इस चेतन मन रूपी खिड़की पर अटके नहीं रहते तब तो शीशे के साफ हो जाने के कारण अपने आप बिना किसी के बताए हुए ही हमें सूर्य का साक्षात होने लगता है। और केवल इसी उद्देश्य की पूर्ति हमें इस प्राणायाम की क्रिया के द्वारा होती है।

लेकिन यह होगा तब ही जब आप अपनी भौतिक देह को शुद्ध और सरल बना लेंगे, नहीं तो हमारा यह शरीर हमारी साधना में बाधा बनकर सामने आ जावेगा। इस बात को समझने के लिए हमें फिर से उस खिड़की का सहारा लेना पड़ेगा। मानाकि हम कमरे में मौजूद हैं, खिड़की का कांच भी साफ है लेकिन अब भी यह जरूरी तो नहीं है कि हमारी स्वयं की आँख जब तक ठीक न हो हमें प्रकाश दिखाई दे ही जाए। इसलिए जब तक हमारी आँख ही निर्मल नहीं होगी तब तक सूर्य हो या न हो, खिड़की हो या न हो, क्या फर्क पड़ता है हमें प्रकाश हमारे पास पहुँचते हुये भी दिखाई नहीं दे सकता। इसलिए हमें यदि प्राणायाम साधना है तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वस्थ एवं निरोगी शरीर की पूर्ति हमें पहले करनी ही होगी। जो अभी शारीरिक रूप से रुग्ण हैं वे लोग इस मार्ग के यात्री नहीं हो सकते। इस कारण से ही बार-२ और समझा समझा कर अनन्य तरीकों से सात्विक आहार और योगासनों द्वारा प्रदत्त व्यायाम पर जोर दिया गया है।

कई लोग अपनी विशाल लम्बी-चौड़ी एवं मोटी देह को स्वस्थ शरीर मान लेते हैं जबकि मोटापा तो एक रोग ही है। यदि हमें प्राणायाम करने की तैयारी में लगना है तो शरीर का भारीपन तो चलेगा ही नहीं इसलिए हमें हल्का एवं तीक्ष्णता से मुक्त भोजन करना चाहिए, जिससे शरीर में कोष्ठ बद्धता नहीं रहे। क्योंकि शरीर में भारीपन रहने से हमारी नाड़ियों पर भारीपन रहता है। नाड़ियों का भारीपन ही हमारी साधना में बाधा उपस्थित करता है। प्राणायाम करते समय हम अपनी स्वांस के द्वारा बहुत सारा कार्य इन नाड़ियों पर ही करते हैं।

प्रारम्भ में यह कार्य असम्भव सा ही लगता है। लेकिन यह असम्भव न हो कर कठिन अवश्य है। इसलिए ही तो शान्त मन तथा धीरे-धीरे अभ्यास करने को कहा जाता है। इस समस्त साधना के दौरान हमें केवल सांसारिक परेशानियाँ ही नहीं बल्कि हमें अपने अन्दर की मानसिक परेशानियाँ भी झेलनी पड़ती हैं क्योंकि **इस रास्ते के द्वारा हम बहिर्गमन नहीं करते। बल्कि यात्रा शुरू करते हैं अन्तर्गमन की।** दूसरे शब्दों में बाहरी स्थूल मन से यात्रा शुरू करके अन्दर के सूक्ष्म अचेतन मन की ओर जाते हैं। जिस प्रकार हमारे शरीर का भारीपन यौगिक क्रियाओं में बाधा बनता है इसी प्रकार ही हमारी मानसिक तीक्ष्णता या रुग्णता साधना की आन्तरिक क्रियाओं में बाधा बनती है। क्योंकि तीक्ष्ण वस्तुओं के सेवन से हमारे खून पर, खून से मस्तिष्क पर उनकी तीक्ष्णता का असर होता है। चाहे उनमें लाल मिर्च हो, गर्म मसाला हो या शराब।

इस प्रकार की तमाम वस्तुएँ हमारे खून में तीक्ष्णता लाकर हमारी मानसिक शान्ति को भंग करती हैं। जिसके कारण हम में क्रोध या तमोगुण की वृद्धि होती है। माँस-मछली का भोजन करने से हमारे शरीर में भारीपन की बढ़ोतरी होती है, जिसके कारण आलस्य या रजोगुण का प्रभाव हमारे मन मस्तिष्क पर बढ़ता है। जिसकी वजह से हमारी चपलता एवं स्फूर्ति का नाश होता है, और जहाँ स्फूर्ति की कमी हो और क्रोध की अधिकता हो वहाँ शान्ति या सात्विक वृत्तियाँ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कैसे विराजमान हो सकती हैं। यही कारण है कि योग के साधकों को शुद्ध एवं सात्विक आहार पर विशेष ध्यान दिलाया गया है।

कुछ लोग अपनी इच्छानुसार खाते पीते हुए भी योग साधते हुए देखे जाते हैं। शुरू-शुरू में उनको कोई विशेष परेशानी नहीं होगी। लेकिन जैसे-जैसे वह अपनी साधना की गहराई में उतरते जावेंगे उनको खान-पान की महत्ता अपने आप समझने में आ जाती है। यदि इस प्रकार के साधक योग की साधना में लगे रहे तो यह निश्चय ही समझना या तो उनकी साधना का मार्ग अवरुद्ध हो जाएगा अथवा वे अपनी आदतों में आमूल चूल परिवर्तन कर लेंगे। अक्सर देखने में आया है, कि लोग व्यर्थ की चीजों को ही छोड़ देते हैं, योग साधना की तुलना में। क्योंकि उनको तब तक योग का स्वाद लग चुका होता है अथवा इस तथाकथित खान-पान की व्यर्थता का पता चल चुका होता है। जिसके कारण उनकी इच्छा शक्ति इतनी बलवान हो चुकी होती है कि वे अपनी रसनेन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ही लेते हैं।

बहुत से साधक इन रसनेन्द्रियों को सिद्ध करने के लिए अभक्ष्य पदार्थों का सेवन करके अपनी परख करते हैं। अन्य कुछ बिना भोजन के निराहार रहकर अपनी स्थिति पर संयम कर लेते हैं। इसी शृंखला में कुछ लोग जो पहले रास रंग में व्यस्त रहते थे या उत्तेजित संगीत में अपने आपको विभोर रखते थे उसके विपरीत वे अब मौन रहकर अपने आपको पात्र बनाने का अभ्यास करते हैं। इसी प्रकार जिन्हें हमेशा किसी न किसी के साथ रहने की आदत रहती थी और जिन्हें प्रेमीजन के बिना एक-एक क्षण काटने को दौड़ता था वे ही लोग अब एकांत के प्रेम में पड़ते देखे जाते हैं। बियाबान जंगलों में, पर्वतों की कंदराओं में, गर्भ गृहों अथवा अन्य किसी प्रकार की गुफाओं में एकांत की साधना में ऐसे ही साधक तल्लीन मिलते हैं। यहाँ इस एकांत शब्द को भी ठीक से समझ लें।

"कुछ लोग अकेले पन को ही एकांत समझ लेते हैं जबकि अकेले का अर्थ होता है जहां हमारे सिवाय और कोई नहीं है। इसलिए अकेलापन काटने को दौड़ता है जबकि एकांत शब्द का अर्थ है एक का भी अन्त हो जाना। जहाँ आपके रहते हुए भी आप वहाँ नहीं रहते यही स्थिति एकांत की होती है और जब आप वहाँ हैं ही नहीं तब अकेलेपन की पीड़ा भी कौन सहेगा अथवा किससे होगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसी एकांत की अवस्था में ही साधक के मन में शान्ति आकर विराजती है। लेकिन शुरू में चूंकि यह अनुभव हमारे लिए नया-नया प्राप्त हुआ अनुभव होता है इसलिए एक बार तो यह एकांत की गहन शान्ति भी भय का कारण बनती है। क्योंकि इस अवस्था में हमें पहली बार अपने स्वयं की रिक्तता का अनुभव होता है जिसकी वजह से हमारे मन के अहम् को चोट लगती है। लेकिन धीरे-धीरे हम अपने अभ्यास के द्वारा इस एकांत की शान्ति की गहनता को अंगीकार करना सीख ही जाते हैं।

जैसे ही हम अपने हृदय में इस गहनता को अंगीकार कर लेते हैं उसी क्षण से हमारे लिए प्रकृति का खजाना हाथ लगने की सम्भावना प्रबल हो जाती है। ध्यान रखना ? खजाना हाथ लगता नहीं केवल सम्भावना होती है हाँ कुछ-कुछ तरंगें उधर से आती हुई हमें आभाषित होती हैं। प्रथम अवस्था में यह तरंगें भी हमें डांवाडोल कर देती हैं। क्योंकि अभी तक तो हम चेतन मन के द्वारा बाहरी स्थूल सांसारिक क्रियाओं में लगे थे हमें अपने अर्न्तमन या अचेतन मन में झांकने की फुर्सत कहाँ थी लेकिन **जैसे ही हम चेतन मन से अचेतन मन की ओर जाने लगते हैं तब ही मन की विशेष-विशेष अवस्थाओं का पता हमें चलने लगता है। और तभी हमें यह पता लगता है कि हम अब तक नाहक ही जीवन भर भागते रहे जबकि सारा कुछ तो हमारे अन्दर ही मौजूद है, कस्तूरी मृग की तरह। ठीक इसी प्रकार जब हमें अपने अन्दर छिपे खजाने का पता लगता है तभी हम जान पाते हैं कि इस मार्ग के साधक या योगी लोग किस प्रकार से अपने सामने वाले के मन के विचारों को भाँप लेते हैं और उसी के अनुसार वे उसका भविष्य भी बता सकने में समर्थ हो जाते हैं।**

वर्तमान में केवल भविष्य ही परिलक्षित होता हो ऐसा नहीं हैं। भूत जो गुजर गया है वह भी अचेतन मन को समझ लेने के पश्चात हमारे सामने खुलकर आ जाता है। अनायास इस दुनियाँ में कुछ भी नहीं होता है। **हमें जो पहले लगता था सारा का सारा संसार एक इत्तफाक है। यह कोरा भ्रम ही है कार्ल मार्क्स की तरह। सारा का सारा यह सांसारिक ताम-झाम एक दूसरे से सम्बन्धित है, गुथा हुआ है। अन्यथा यह दुनियाँ कब की बिखर गयी होती।**

इस बात को अच्छी तरह समझने के लिए यह जरूरी है कि आप स्वयं ही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनुभव करें। दूसरे के अनुभव आपके काम न आ सकेंगे। क्योंकि यह कार्यक्रम आपके और केवल आपके अर्न्तमन में घटित होता है आपके साथ वाला कोई कितना भी नजदीकी क्यों न हो, इस परिवर्तन की भनक भी न पा सकेगा। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अकेला है तथा पूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना अलग मन है। इसलिए ही मन की अनुभूति भी तो अलग ही प्राप्त होती है।

आपके कहे वाक्य अपने कालान्तर में सत्य सिद्ध होने लगे तब आपको केवल इतना ही समझना चाहिए कि हमारा मार्ग ठीक चल रहा है या अपनी कोशिशों के द्वारा मैं शायद सही रास्ते पर आ गया हूँ। **ध्यान रहे; इसको प्रसाद रूप में स्वीकार करें, हक रूप में नहीं। क्योंकि प्रार्थना से प्रसाद ही मिलता है हक नहीं।**

जब आप यह महसूस करने लगें कि अनायास ही कुछ विचार जाने कहाँ से आपके मस्तिष्क में होशपूर्वक आ गये हों, अथवा किसी विचार के बदले में उसका निर्णय आपके समक्ष मन में एक कौंध की तरह से अनायास ही आ गया हो तब ही समझ लेना चाहिए कि यही मार्ग हमारे चेतन मन से अवेतन मन पर ले जाने का है। जिस पर हम अब चल रहे हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ६

त्रिगुणातीत अवस्था का बोध

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में मुख्य रूप से समझा-समझाकर जो बात कही है, वह यही बात कही है कि, तू अपना कर्म कर लेकिन फल की आकांक्षा मत कर। बड़ा अटपटा लगता है यह कि बिना फल की अपेक्षा किए हुए कोई कर्म इस दुनियाँ में होता होगा भला ? क्योंकि बुद्धि सीधा सा प्रश्न खड़ा कर देती है कि जब किसी फल के परिणाम की इच्छा ही हमें नहीं है, तो फिर हम कर्म किसलिए करें ? इसके विपरीत मानव मन को तो यह अच्छा लगता, "यदि कृष्ण यह कहते कि कोई भी कर्म मत कर और मनचाहा फल प्राप्त कर।" कितनी सुविधाजनक बात होती, यदि ऐसा कृष्ण कह जाते। उन्होंने ऐसा कठिन वक्तव्य क्यों दिया ? ऐसी क्या विशेष बात है उपरोक्त एक लाइन के इस वक्तव्य में, जो गीता के सार सूत्र मक्खन के रूप में सबसे ऊपर तैर रहा है।

अगर वास्तव में आप इस छोटे में वक्तव्य की गहराई नापना चाहें तो आप पायेंगे भी बड़ी गहरी बात। इस छोटी सी बात में कृष्ण ने हमको कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया है। कृष्ण कौन से कर्म की बात कर रहे हैं और कौन से फल की ? कर्म पर तो उन्होंने क्यों इतना जोर दिया ? जबकि फल पर तो उन्होंने स्वाभाविक जोर भी नहीं रहने दिया है।

इसके पीछे कोई न कोई गहन कारण होना चाहिये, और मेरे देखते-देखते, है भी कारण गहन ही।

यदि कृष्ण कहते कि अमुक कर्म करो, तो अमुक फल की आपको प्राप्ति होगी, तो गलत हो जाता और इसके विपरीत कृष्ण यदि यह कहते, कि अमुक फल की प्राप्ति के लिए अमुक कर्म करो, तब भी गलत हो जाता। कृष्ण जैसा चैतन्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुरुष महायोगी हमारी जड़ बुद्धि के तर्कों में फँसेगा ऐसा सम्भव नहीं। इसलिये ही कृष्ण ने गीता में कहा है कि साधक किसी भी स्तर का हो उसे शुरू-शुरू में अपने नित्य कर्मों को साधक बनाकर अपनी कर्म साधना शुरू कर देनी चाहिये, **लेकिन ध्यान रहे, कर्म करते समय हमें उस कर्म से स्वयं को जोड़ नहीं लेना है। नहीं तो, वह कर्म निष्कर्म न होकर सकर्म हो जाता है। और ऐसा सकर्म ही हमारे संस्कारों की कड़ियों में एक कड़ी और जोड़ देता है।** जबकि अगर हम उसी कर्म को परमात्मा का कर्म या उसके प्रति समर्पित भाव से करते हैं, तब उस कर्म का प्रभाव हमारे मन मस्तिष्क पर नहीं पड़ता है। केवल ऐसी परिस्थिति में ही हम उसके परिणामों से अछूते रह पाते हैं।

यह बात तो रही कुछ ऊपरी समझ की। क्योंकि इन सीधी-सीधी बातों को समझते हुए भी हम इन्हें ठीक से कहाँ समझ पाते हैं। इनको समझने के लिए हमें आध्यात्मिक गहराई में डुबकी लगानी होगी, तबही हम "कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" का अर्थ सही मायने में समझ पायेंगे। जैसे कोई गुरू अपने अनन्य शिष्यों को एक ही क्रिया सिखाता है, लेकिन उस क्रिया के अनुभव प्रत्येक शिष्य को अलग-अलग होते हैं। क्यों होता है ऐसा? इस बात पर जब हम गौर पूर्वक चिन्तन करते हैं तब कुछ नई बातें हमारे सामने प्रकट होती हैं। एक तो यह कि उन शिष्यों की लगन या तीव्रता अलग-अलग श्रेणी की होगी, जिसकी वजह से परिणाम अलग आयेंगें ही, दूसरी वजह यह है कि वे शिष्य किन-किन संभावनाओं को लेकर इस पृथ्वी पर पैदा हुए हैं? अथवा उनके मन में किस-किस तरह के संस्कार भरे हैं? उन संस्कारों के कारण से भी उनके कर्म करने की शैली में अन्तर पड़ जाता है। और तीसरी बात है उनकी अपनी चंचल वृत्तियाँ?

क्योंकि जैसा मैंने पहले लिखा है कि जब तक चित्त की वृत्तियाँ हमें थोड़ा आराम नहीं लेने देती है, तब तक हमारा मन खाली नहीं होता। **और जब तक हमारा मन खाली हो नहीं है तब तक शरीर से क्रिया करते हुए भी हम कुछ नहीं करते हैं।** इसलिये जब तक हम (तीनों तरह से) एक जैसी परिस्थितियों में रहकर, एक जैसी मानसिक अवस्था में तथा एक जैसी गति से कोई एक कर्म नहीं करेंगे, तब तक एक जैसे परिणाम हमें कैसे प्राप्त हो सकेंगे।

और मानव मनों की बड़ी से बड़ी विडम्बना यह है कि इस संसार के एक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किनारे से दूसरे किनारे तक हम ढूंढ़-ढूंढ़ कर भी थक जावेंगे लेकिन एक जैसी स्थिति का दूसरा मन इस दुनियाँ में नहीं ढूंढ़ सकेंगे। इसलिए भी परिणामों में परिवर्तन आना स्वाभाविक है।

हम अपने स्वभाव वश चाहते यह हैं कि, जब हम कर्म एक जैसे कर रहे हैं तब हमें फल भी एक जैसे प्राप्त होने चाहिये। जो कि बिलकुल असम्भव ही तो हैं। इस प्रकार ऐसी स्थिति में हमें हमारे कर्मों द्वारा जो फल हमें प्राप्त होते हैं उनमें हमारे संस्कारों का भी बहुत बड़ा हिस्सा शामिल होता है। और यही सबसे बड़ा कारण है एक कर्म से अनन्य प्रकार के फलों के प्राप्त होने का। इसी बात को बहुत सरल करने की वजह से कृष्ण ने कहा है कि "तू कर्म कर फल की चिन्ता मतकर।"

हमारे यहाँ गावों में अनाज के भण्डारण के लिए अपने घरों में मिट्टी की कोठी बनाते हैं। आजकल तो उसी डिजाइन की लोहे की चद्दरों की बनने लग गयी हैं। इस प्रकार की टंकियों में अनाज को इनके ऊपर वाले बड़े मुंह से भर देते हैं। और जब जरूरत के समय अनाज निकालना होता है, तब उसके छोटे ढक्कनदार मुंह से निकाल लेते हैं। एक बेहद भुलक्कड़ किस्म का व्यक्ति, जिसको सुबह की बात शाम को याद नहीं रहती थी, और शाम की बात सुबह याद नहीं रहती थी, ऐसी ही एक टंकी को बाजार से खरीदकर अपने घर ले आया। घर पर पहले से खरीदा हुआ गेहूँ उसने उसमें भर दिया। कुछ दिन बाद जब उसके पास से पिसा हुआ आटा समाप्त हो गया तो उसने सोचा कि अनाज लाना पड़ेगा, उसे टंकी में डाले गेहूँ की याददाश्त ही नहीं रही। वह बाजार गया और वहाँ से जैसा कि उस समय उसके मन ने चाहा, गेहूँ और चना मिली हुई गोचनी खरीदी, और घर लाकर उसने अपनी उसी टंकी में डाल दी। बाद में जब आटा पिसाने के लिए नीचे वाले द्वार से गोचनी पीसे में भरने के लिए ढक्कन खोला, तो वह बड़े भारी आश्चर्य में पड़ गया। अरे, यह क्या हुआ ? मैंने इस टंकी में डाली तो गोचनी थी ये गेहूँ क्यों निकल रहे हैं। इस गोचनी में से चना कैसे गायब हो गए। वह बड़ी उलझन में पड़ गया। उसने अपने दिमाग पर बहुत जोर डाला, अनाज वाले दुकानदार का बिल भी देखा। कहीं कोई गलती नहीं दिखाई दे रही थी। बिल पर भी गोचनी लिखी हुई थी, इसके साथ ही उसने बड़ी उमंग से गोचनी खरीदी भी थी। जिस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसने इस टंकी में डाला था, फिर गलती कहाँ थी उसकी समझ में नहीं आ रहा था। जब हर तरफ से सोच विचार कर थक गया, और कोई भी हल इस समस्या का नहीं निकल सका। तब अन्त में वह अपनी किस्मत को कोसने लगा, और कहने लगा कि अपनी किस्मत ही खराब हैं करते कुछ हैं और होता कुछ है। डाली गोचनी थी और निकल रहे हैं गेहूँ।

ठीक यही स्थिति हमारी और हमारे कर्मों की है। पिछले जन्मों में हमने क्या-क्या किया है। हमारी याददाश्त में नहीं है। कैसे-कैसे कर्म हमारे पिछले अनन्त जन्मों के बीज के रूप में हमारे अचेतन मन पर जमा हैं, हमें कुछ भी पता नहीं है और न ही कोई तरीका हमारे पास मौजूद है, जिसके द्वारा हम पिछली बातों को उघाड़कर अपनी याददाश्त में ले आयें। इस जन्म की तमाम बातों का हिसाब तो हमें पता रहता है। जिसको अपनी याददाश्त में लाने के पश्चात हम पाते हैं कि हमने कभी किसी का दिल नहीं दुखाया, किसी का माल नहीं चुराया, मन्दिरों में दर्शन करने सुबह शाम जाते रहे हैं, महीने में एक बार सत्यनारायण भगवान की कथा भी कराते रहे हैं। द्वार पर आये किसी भिखारी को भी खाली झोली नहीं लौटाया है। घर पर आये अतिथि का भी सत्कार पूर्ण श्रद्धा से करते हैं। करते तो हम अच्छा हैं लेकिन फल हमें बुरा प्राप्त होता है। इसी कारण से दिल में इतनी घबराहट होती है और ऐसा लगने लगता है कि उस परम पिता ने हमारी तरफ से आँखें ही बन्द कर रखी हैं। जबकि हमारा पड़ौसी इतना दुष्ट है, उसमें तो पड़ौसियों जैसी भावना तक नहीं है। जब तब अपने अगल-बगल वालों से लड़ता रहता है। दुनियां भर के जितने दुष्कर्म हैं उन्हें वह करता है। इतने सबके बावजूद भी उसके छक्के पंजे बढ़ते ही जाते हैं। लक्ष्मी मैया भी उसी के ऊपर कृपा किये रहती है। ऊपर से वह इतना कमीना और है, वह हमारी खिल्ली और उड़ाता है। तब हमें गुस्सा नहीं आयेगा या इतना सब सहन करने के पश्चात क्या हम विचलित नहीं हो जावेंगे। अवश्य ही हो जावेंगे, सब धर्म कर्म छूट जावेगा। हम भी सत्कर्मों से हटकर दुष्कर्मों को करने लग जावेंगे। और न जाने कितने-कितने लोग ऐसा करने लग भी जाते हैं। ठीक इसी मनोदशा को समझने के लिए तथा इसी स्थिति से उबारने के लिए हीं कृष्ण एक स्तम्भ की भाँति हम सब सांसारियों से कह रहे हैं कि तू कर्म करता जा, फल की इच्छा मत कर।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फल का हमारा अधिकार तो है लेकिन अभी हमें यह तो पता नहीं है, कि कल की परिस्थितियों में हमारे पूर्व के संचित कौन से संस्कार अब अवतरित होने वाले हैं या हो रहे हैं। अभी हमने जो सत्कर्म किये हैं वे तो तब ही निकल कर आवेंगे, जब पहले के संचित तमाम अच्छे बुरे कर्म समाप्त हो जावेंगे। ऊपर की बाद में डाली हुई गोचनी तो तब ही निकलना शुरू करेगी जब तक नीचे के हिस्से में पहले से पड़े हुए गेहूँ, समाप्त नहीं हो जाते हैं—

चार वेद छः शास्त्र में, बात लिखो हैं दोय।

दुख दीने दुख होत है, सुख दीने सुख होय॥

इसलिए यह बात हमेशा ध्यान रखें हमारा कोई भी कर्म निष्फल नहीं रहता है। चाहे वह अच्छा हो या बुरा ?

हमें अपने पथ पर निरन्तर अविचलित हुए चलते रहना है। लेकिन यह तभी सम्भव हो सकेगा जब हम प्रत्येक कर्म को करने के पश्चात उसके परिणाम के प्रति आशान्वित होकर इन्तजार नहीं करते। जब तक हमारा फल की तरफ ध्यान होता है, तब तक कर्म में भी हम पूर्ण मनोयोग से केन्द्रित नहीं हो पाते। **इसलिए हम सम्पूर्ण क्षमता के साथ अपनी प्रार्थना की साधना में लगे रहें न कि उसकी प्राप्ति में।**

इसके अलावा जो बात खास तौर से साधक के लिए, विशेष बात भगवान ने कही है वह यह है कि तू मुझको ही भज और उसके बाद जो कुछ भी तुझे प्राप्त हो, उसे भी तू अपने पास मत रख, उसे भी मेरे लिए ही समर्पित कर दे।

जितनी कठिन बात पहली थी, उससे भी ज्यादा यह बात कठिन हो गई। एक तो साधना की, इतनी कष्टप्रद एवं कठिन प्रक्रिया। (जिसके अन्तर्गत अपने आप को समाप्त करके यानि समुत्व भाव सहित तपश्चर्या करके, बड़ी ही मुश्किलों से जूझते रहने के पश्चात थोड़ी सी सिद्धियों का प्राप्त होना) दूसरे यह कि उन्हें भी मैं अपने स्तेमाल के लिए न रखूं। उन्हें भी परमात्मा के लिए भेंट कर दूं। कैसी विचित्र बात है। कोई हजारों लाखों साधकों में से किसी एक को सफलता मिलती है। अब अपनी मंजिल पर पहुँचकर जब आनन्दतिरेक के क्षण हमें आने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही वाले हैं, या जबकि अपनी कड़ी मेहनत से की हुई कमाई का स्तेमाल करने के लायक हम हुये हैं, तब ही भगवान हमारे हाथ काटे ले रहे हैं, और कह रहे हैं कि इसका उपयोग मत कर बल्कि खाते की समस्त रकम को मेरे खाते में स्थानान्तरित कर दे, अपने हाथों में बिल्कुल मत रख ।

अब कैसे हिम्मत हो, बड़ी मुश्किल से पास आयी रकम को, दूसरे को सौंपने की, क्योंकि अगर रकम चोरी की होती तो तब भी कोई बात नहीं थी, किसी दूसरे की उधार होती तब भी चल सकता था, लेकिन यह तो बीसों नाखूनों की कमाई है, इसे कैसे किसी को सौंप दें ।

इसी सन्दर्भ में मुझे एक महाजन की कथा याद आती है । जिसे मैं यहाँ लिख रहा हूँ ।

एक महाजन के एक ही लड़का था । वह लड़का अब बीस वर्ष का हो चुका था । इसलिए महाजन ने सोचा कि लड़के को कारोबार का काम सम्हालना है, इसलिए कुछ चीजें इसको सिखानी हैं । इस बात को सोचकर महाजन ने बेटे को बुलाया और उससे कहा कि "बेटे बाजार जाओ और कुछ कमाकर लाओ, और जब तक कुछ पैसा कमा न लो तब तक लौटना नहीं ।" इस बात को सुनकर बेटा चला गया और घर पहुँच गया । वह जाकर अपनी माँ से बोला कि, "पिताजी ने कहा है कि जब तक कुछ कमा नहीं लेते तब तक वापिस नहीं लौटना ।" माँ बोली, "बेटा चिन्ता मत कर, मैंने कुछ पैसे जोड़-जोड़कर बचा लिये हैं, ये ले पूरे चालीस रुपये हैं, जाकर पिताजी को दे दो ।" दिन भर वह लड़का घर पर रहा और शाम को अच्छे धुले हुये कपड़े पहनकर, बाल वगैरह संवार कर, उन चालीस रुपयों को लेकर दुकान पर पिताजी के सामने पहुँच गया ।

दुकान पर पहुँचते ही महाजन ने बेटे की शक्ल सूरत देखकर ही अन्दाजा लगा था कि कहीं कुछ दाल में काला है । खैर·····उसने लड़के से पूछा, "कहो बेटे कमा लाए ?" लड़का बोला, "हाँ पिताजी लो ये पूरे चालीस रुपये हैं ।" रुपयों को देखकर महाजन बोला, "जाओ, इन रुपयों को उस सामने वाले कूअे में डाल आओ ।" लड़का पहले तो अचकचाया । लेकिन पिताजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके उसने उन रुपयों को कूअे में डाल दिया । रात्रि आराम से गुजर गयी ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेकिन दूसरे दिन फिर वही बात महाजन ने अपने बेटे से कही कि, "जाओ बेटे आज फिर कमा कर लाओ, और इस बात का ध्यान रखना कि बिना कमाए मेरे पास वापिस नहीं लौटना ।" लड़का फिर माँ के पास पहुँचा और वहाँ पहुँचकर सारी बातें माँ को बताई । माँ बोली, "अब मैं कहाँ से दूं, मेरे पास जो कुछ जमा पैसे थे वो तो तुझे कल ही दे दिए थे, अब तो मेरे पास हैं ही नहीं ।" लड़का बड़ा मायूस हुआ कि क्या करे । थोड़ा सोचकर अपनी बहन के पास गया । वहाँ जाकर उसे कुछ तसल्ली हुयी, क्योंकि कुछ कह सुनकर जैसे-तैसे आज भी उसे बीस रुपये मिल ही गए थे । उन रुपयों को लेकर वह शाम को पिताजी के सामने हाजिर हो गया । महाजन ने तो फिर वही बात कही कि, "जाओ सामने वाले कूअे में डाल आओ । लड़का अनमने मन से उठा और सामने वाले कूअे के पास जाकर खड़ा होकर सोचने लगा कि, यह क्या मजाक है । कहीं पिताजी का दिमाग बुढ़ापे में चल तो नहीं गया है । कल माताजी ने दे दिये थे, आज बड़ी मुश्किल से बहिन ने दिये हैं । और ये कह रहे हैं कि इनको भी कूअे में फेंक दूँ । यह क्या पहेली है । मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है । वह इतना सोच ही रहा था कि पीछे से महाजन जो उसकी तमाम गतिविधियों पर नजर रखे हुए था, ने कहा, "कि क्या बात है, बेटा देर किस बात की है । "डाल दो कूए में" लड़के ने पीछे मुड़कर एक बार पिताजी का तरफ देखा तथा उसके बाद उसने वे बीस रुपये कूए में डाल दिये । और गद्दी पर आकर बैठ गया ।

तीसरे दिन फिर वही बात महाजन ने बेटे से कही कि जाओ और शाम को तभी वापिस आना जब कुछ कमा लो । लड़के को अपने पाँवों के नीचे से जमीन खिसकती सी नजर आयी, मरे से मन से वह पिताजी की निगाहों के सामने से हटने की गरज से, वह एक बन्द पड़ी दुकान के सामने आकर खड़ा हो गया और सोचने लगा कि अब कहाँ जाऊँ ?

सुबह के करीब दस बजे थे । उसकी समझ में तो कुछ आ ही नहीं रहा था कि वह क्या करे । जिससे कि वह कुछ पैसा शाम तक कमा सके । पहली बार अपनी जिन्दगी में शायद उसे इस तरह से सोचना पड़ रहा था, और आज ही अपने जीवन में पहली बार उसने अपने मस्तिष्क पर बढ़ता हुआ जोर साफ-साफ महसूस किया था । ग्यारह बजे के करीब उसे ख्याल आया कि इस प्रकार खड़े-खड़े तो कोई काम चलने वाला नहीं है । कहीं न कहीं कोई उपाय ढूंढ़ना ही पड़ेगा । जब

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसने ऐसा सोचने की अपनी हिम्मत जगाई तो एक बात मस्तिष्क में और आई कि इस बाजार में इतने सारे लोग काम पर लगे हुए हैं, इनमें से कुछ समझदार होंगे तो कुछ ना समझ भी होंगे। जब इन सबको काम मिल सकता है तो फिर मुझे क्यों नहीं मिल सकता है ? उसने इस स्थान को जहाँ पर वह खड़ा था, गौर से देखा और उस स्थान को धन्यवाद देकर वहाँ से काम की तलाश में निकल पड़ा। धन्यवाद उसने इसलिये दिया था क्योंकि जिन्दगी की शिक्षा का पहला सबक उसे इसी स्थान पर ही तो मिला था।

थोड़ी दूर जाकर देखा कि एक नयी इमारत में काम हो रहा है। मजदूर सामान ढो रहे हैं। संगतराश पत्थर में खुदाई का काम कर रहे हैं। मिस्त्री लोग ईंटों की चिनाई कर रहे हैं। उनके ऊपर एक पढ़ा लिखा सा आदमी उनको समय-समय पर निर्देश दे रहा है। इतना सब देखकर वह बिना कुछ सोचे समझे उसके पास जाकर बोला, "क्या आप मुझे अपने यहाँ काम पर रख सकते हैं ?" उस व्यक्ति ने इस लड़के को ऊपर से नीचे तक देखा और मन में सोचा यह तो किसी अच्छे घर का लड़का दिखाई देता है।

"घर से भागकर आये हो।" वह ठेकेदार सरीखा व्यक्ति बोला। इसके उत्तर में लड़के ने कहा कि "नहीं साहब, मुझे तो घर से आदेश मिला है कि मैं कुछ भी कमाकर लाऊँ।" इसके बाद उसने सारी कहानी उस व्यक्ति को बता दी। उस सहृदय इंसान ने कहा—"अब बारह बजने ही वाले हैं, थोड़ी देर में खाने की छुट्टी होगी, इसलिए एक बजे आ जाना, तुम भी काम पर लग जाना, आज दिन की मजदूरी के रूप में शाम को तुम्हें पाँच रुपये मिल जायेंगे।"

जिस लड़के ने अभी तक घर से बाहर निकल कर नहीं देखा हो। उसके सिर पर पच्चीस किलो की परात सामान से भरकर लादी गई हो, ऐसे लड़के की आँखों के सामने अँधेरा आने में कितनी देर लगती है। लेकिन चूंकि लड़के में होनहार एवं अक्लमन्दी के संस्कार मौजूद थे। जैसे तैसे अपने आप पर काबू करके उसने शाम के पाँच बजे तक का समय पूरा किया। चार घण्टों में ही चेहरा मुरझा गया। कपड़े गन्दे हो गए। बालों की तो चले क्या चाँद भी पिलपिली हो गयी थी। सुबह से खाना भी नहीं खा पाया था। भूख की वजह से हाल और भी बुरा था। खैर जैसे तैसे वह अपनी मजदूरी के पैसे लेकर अपने पिता के पास पहुँचा और चुपचाप

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उनके सामने पाँच रुपये निकाल कर रख दिये। आज पिछले दिनों जैसी अकड़ भी नहीं थी वहाँ बैठे हुए सिर भी झुका हुआ था। महाजन बोला, "जाओ इनको सामने वाले कूअे में डाल आओ।" लड़का वैसे ही ज्यों का त्यों बैठा रहा, जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं हो। महाजन ने अपने शब्द दुबारा से दोहराये। अबकी बार लड़के ने अपना सिर ऊपर उठाया और आँखों में आँसू भरके बोला, "इतनी मेहनत से मैंने ये पाँच रुपये कमाए हैं और आप इन्हें कूअे में फैंकने की बात कह रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि अब और कौनसी बात रह गई है। जिसे आप मुझसे कराना चाहते हैं। और चूंकि मेरी मेहनत की कमाई है। इसलिए इस कमाई को भी मैं अपने पास ही रखूंगा।"

जब महाजन ने देखा कि बेटे को पैसे का महत्व समझ में आ गया है। तब वह अपने बेटे से बोला, "उन रुपयों को मुझे दे दो मैं उन्हें अपनी तिजोरी में रख देता हूँ। आज मुझे बेहद खुशी हो रही है कि आज तुमने कमाने का महत्व जान लिया है। आज मुझे ठीक वैसी ही खुशी हो रही है जैसी कि तब हुई थी जब तूने पहली बार पावों से खड़े होकर चलकर दिखाया था।"

लड़के का असमंजस बढ़ता ही जा रहा था। वह कैसे इन तथ्य भरी बातों को समझता। क्योंकि कहाँ तो ये इन रुपयों को थोड़ी देर पहले कूअे में फैंकने की कह रहे थे और अब इनको तिजोरी में रखने की कह रहे हैं। ये चक्कर क्या है? ये किसी भी हालत में इन रुपयों को मेरे पास क्यों नहीं रहने देते? लड़के को टालते हुए देखकर वह महाजन फिर से बोला, "किसी भ्रम में नाहक तू मत पड़। मैं तेरा पिता हूँ, मैं तुझसे कोई छल प्रपंच नहीं कर रहा हूँ।"

लड़के ने पिता की आज्ञा मानकर वो रुपये अपने पिता को दे दिये। महाजन ने उन पाँच रुपयों को अपने माथे से लगाया फिर अपनी तिजोरी को खोलकर उसके अन्दर रख दिये। और तिजोरी का ताला यथावत लगाकर उसकी चाबियों के गुच्छे को अपने लड़के को सौंपते हुए उसने कहा, "बेटा, अब मेरे मन में तेरे प्रति किसी प्रकार का भी संशय नहीं है। इसलिए आज से इनको अब तू ही संभाल। मैं वैसे भी अब बुढ्ढा हो गया हूँ, सारा काम अब तुझे ही करना है। मैं तो बस ऊपर की निगरानी करता रहूँगा।"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ठीक बिल्कुल ऐसी ही स्थिति भक्त और भगवान की रहती है। यहाँ साधक को यह बात ध्यान नहीं करनी चाहिये कि उसके सामने साक्षात भगवान महाजन की तरह मौजूद हैं कि नहीं। और वह साधक से कहेगा कि लाओ तुम्हारी कमाई या उपलब्धियों को मुझे सौंप दो। कृष्ण ने गीता में एक बार कह दिया है जो भी तुझे प्राप्त हो उसे मुझे ही अर्पण कर। और इस बात को मानकर **जब साधक अपनी क्षुद्र सी उपलब्धि को उस परम पिता को सौंपने को तैयार हो जाते हैं, तब उसी पल से उनका सम्बन्ध उस परम पिता से जुड़ जाता है।** फिर वह अपने द्वार हमारे लिये खोल देता है। हम अपना हिसाब भी तो साफ करें। जब हम किसी को अपना एक पैसा नहीं दे सकते हैं तो हम उससे अथाह रुपयों की चाह किस अधिकार से रख सकते हैं? **जिस प्रकार उस लड़के के अपने पाँच रुपयों को महाजन को सौंपते ही वह लड़का उस तिजोरी की चाबियों को पाने का अधिकारी हो गया था; ठीक उसी प्रकार हम अपनी साधना की प्राप्ति को परमात्मा को सौंपते ही उसकी परम सत्ता से जुड़ जाते हैं।**

इसी सन्दर्भ में एक बात का ध्यान और रखें यदि इसके विपरीत हमने अपना अहम् इतना अधिक बढ़ा लिया है कि अब तो मेरे पास सिद्धियाँ हैं। इसलिए मैं स्वयं ही सब कुछ हूँ। जो कुछ भी मैं सोचता हूँ कालान्तर में वही सत्य सिद्ध होता है। एक तरह से ऐसा सोचना उसका स्वाभाविक भी लगता है। क्योंकि जहाँ वह व्यक्ति मौजूद है वहाँ इस स्तर पर भूखे और कंगाल ही तो अन्य लोग हैं। लेकिन उसे अन्धों का सरदार बनना है तो बात इस तरह से भी चल सकती है कि स्वयं काना बना रहे। इस स्थिति में तो कहीं भी किसी को तकलीफ नहीं होगी। लेकिन यदि हमें अपनी दोनों आँखों को खोलकर सूझता बनना है तो किसी प्रकार हमें उस बड़े महाजन से अपना सम्बन्ध जोड़ना ही पड़ेगा। **उस बड़े महाजन से अपने सम्बन्ध जोड़ने का बस एक ही रास्ता है और वह यह है कि हम उसके लिए मिट जायें।**

अगर हमने उसका अपने आप को गुलाम समझ लिया तो समझो हम उससे जुड़ गये इसके विपरीत कहीं हमने उसको ही खरीदने की सोच ली तो समझ लेना कि हमारा पतन सन्निकट ही है।

सुबह जब सूर्य उगता है तब तारे उसके सामने कितनी देर ठहर पाते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तारा आखिर तारा है और सूर्य सूर्य है। इसको विधि की विडम्बना कहिये या हमारी मजबूरी। जिस प्रकार कोई तारा पृथ्वी के समक्ष वह छोटा हो या बड़ा सूर्य के समानान्तर कोई प्रकाश व्यवस्था नहीं चला सकता; ठीक उसी प्रकार हम इस प्रकृति की इस परम सत्ता के समानान्तर कोई अलग दुनियाँ नहीं बनाए रख सकते। यदि अपने अहम् वश ऐसा करेंगे, तो हम निश्चय ही सूर्य के समक्ष तारे की तरह से बहुत जल्दी ही, बिना किसी शंका के अस्त हो ही जायेंगे। कहावत भी है, कि अभिमान तो रावण का भी नहीं रहा, जो कि उस समय के महानतम साधकों में से एक था।

इस आध्यात्मिक संसार में साधक को कदम-कदम पर सजग रहकर अपने कर्मों में लगे रहना पड़ता है। नहीं तो उससे गलती हो जाने की ही सम्भावना अधिक रहती है। यों तो जड़ से जड़ बुद्धि इन्सान भी अनगिनत ठोकरों के खा लेने के पश्चात् अपना बचाव करना सीख ही जाता है। लेकिन शिक्षक का काम बताने का होता है। कृष्ण केवल इसी कारण से इस मार्ग के साधकों के लिए गीता के रूप में उपदेश देकर गये हैं। **मनुष्य चूँकि मनुष्य है परमात्मा नहीं है। इसलिए ही वह गलतियों का कुम्भ है, और चूँकि वह गलती दर गलती करता है, इसी लक्षण से वह मनुष्य है।** यदि इन्सान गलती करना छोड़ दे तो उसे मुक्त होने फिर देर थोड़े ही लगती है। लेकिन वह गलती क्यों न करेगा? जब तक उसकी वृत्तियाँ सात्विक, राजसिक एवं तामसिक गुणों से प्रभावित हैं और इन तीनों ही गुणों के कारण हम खिंचते हैं इस संसार में, जिसमें आकर यहाँ हम दुःख उठाते हैं। जिसके कारण इस संसार को दुःखों का सागर कहने से भी हम नहीं चूकते हैं।

मैंने किंवदिती सुनी है **जब कोई साधक उस परम सत्ता का ध्यान करता है या उसकी प्रार्थना में तल्लीन होता है। तब वह परम सत्ता उस साधक की परीक्षा लेने के लिए उसको पहले-पहले सिद्धियाँ देता है।** असल सत्य का दर्शन कराने से पहले उसे थोड़ा अपनी सिद्धियों के लोभ में फँसाने की चेष्टा करता है, और देखता है कि कौन साधक मेरा वास्तव में भक्त है और कौन सा साधक ऐसा है जो केवल इन क्षुद्र सी सिद्धियों के लिए ही अपनी साधना में साधनारत् है।

इस संसार में जो व्यक्ति जिस पद के लायक होता है कालान्तर में उसे वह मिल ही जाता है। हम साधना करते हैं तो निःसंकोच रूप से हमें उससे प्राप्ति भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होती है। लेकिन आध्यात्मिक प्राप्तियों के बाद यदि हम उनके नशे में डूब गए तो समझ लेना कि यह नशा इतना ज्यादा गहरा होता है कि फिर बीच में तो होश ही नहीं लेने देता है। जब तक कि हमारे तमाम नशे की खुमारी हमारी बुद्धि के ऊपर से उतर नहीं जाती है। जब तक हमारा होश जागृत हो पाता है तब तक हमारे पास जो कुछ भी प्राप्तियाँ थीं, वे सभी की सभी लुट चुकी होती हैं अथवा निष्क्रय हो चुकी होती हैं हम फिर वही कंगाल के कंगाल। अब तो हमारा दुःख कुछ और ज्यादा बढ़ा हुआ होता है क्योंकि यदि जन्म से कंगाल हो उसका क्या दिवाला निकलेगा। लेकिन यदि किसी के जीवन में रहीसी आकर उसका दिवाला निकल जाये, तब फिर उसका दुःख सीमित नहीं होता बल्कि असीमित हो जाता है। हालाँकि ऐसा कभी नहीं होता कि जितनी क्रियाएँ हमने पिछली प्रार्थना के दौरान की हैं; उनका अस्तित्व भी हमारे संस्कारों में न रहे। लेकिन दोबारा प्रार्थना शुरू करने में हमारे सामने अब बड़े अवरोध पैदा हो जाते हैं। जिनके कारण वो तमाम शक्तियाँ जो अभी कुछ समय पूर्व हमारे अन्दर प्रकट होने लगी थीं, हमारे चेतन मन से उतर कर फिर दोबारा से अचेतन मन पर पहुँच जाती हैं। क्यों खड़े हो जाते हैं ये अवरोध ? और क्यों हम इन शक्तियों के नशे में डूब जाते हैं ? ये क्या उलट फिरैया हैं ? क्या ऐसा सभी साधकों को होता है; या इस मार्ग से चलने वाले प्रत्येक साधक को इस अवनति के रास्ते से गुजरना पड़ता है ?

कुछ समय पहले एक डाक्टर मित्र से बात हो रही थी। मैंने उनसे पूछा कि "ऐसा क्या कारण है कि शराब का एक ही गिलास मनुष्य के मस्तिस्क पर इस कदर छा जाता है कि जीनियस से जीनियस बुद्धि वाला भी उसके प्रभाव से अछूता नहीं रह पाता ?" इसके उत्तर में वह डाक्टर मित्र मुझसे बोला, "हम खाना खाते हैं तो वह हमारे पेट में जाकर पहले पचता है, तब ही उसकी शक्ति कैलोरी के रूप में हमारे खून को प्राप्त होती है, जिसके कारण हमारा मस्तिष्क स्वस्थ महसूस करता है, या हम स्फूर्ति महसूस करते हैं, लेकिन यह शराब कोई हमारे खाने जैसी वस्तु नहीं है कि वह हमारे पेट में जाकर पहले पचेगी और फिर हमारी सहनशीलता के अनुरूप हमें उसकी कैलोरिक शक्ति प्राप्त होगी। जबकि यह तो डाइरेक्ट कैलोरी है, इसको पचने की आवश्यकता नहीं है; यह तो सीधे-सीधे ही हमारे पेट से खून को अपनी शक्ति को अत्याधिक तीव्र गति से पहुँचा देती है, जो हमारी आदत के मुताबिक सहनशील नहीं हो पाती और इसी कारण से हम विचलित हुए बगैर नहीं रह पाते हैं।"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यही स्थिति उस साधक की होती है, **जिसकी छोटी सी प्याली में प्रकृति की शक्तियाँ रूपी तमाम शराब भर गयी हो, वह छोटी सी प्याली अपना हिसाब कहाँ रख पायेगी। शुरू-शुरू में तो हिसाब बिगड़ेगा ही।** लेकिन जैसे धीरे-धीरे मद्यखोर मद्य का अभ्यस्त हो जाता है, ठीक उसी प्रकार से लगातार अपनी साधना में होशपूर्वक एवं हिम्मतपूर्वक लीन रहने वाला साधक भी प्रार्थना की प्राप्ति के वेग को सहने का अभ्यस्त हो ही जाता है, और तब ही वह यथार्थ के धरातल पर धीरे-धीरे उतरकर अपने आप ही संयमित होने लगता है। लेकिन वस्तुस्थिति को समझने में हमें कितना समय लगता है ? इस बात पर गौर करते समय पता चलता है कि जहाँ तक समय का सवाल है वह इस बात पर निर्भर करता है, कि हमारी चित्त की वृत्तियाँ किन गुणों के द्वारा प्रभावित हो रही हैं।

अभी पिछले दिनों एक काली के भक्त की कथा पढ़ रहा था, वह भक्त बड़ा पैसे वाला था, हर हफ्ते देवी के मन्दिर में बकरे की बलि देता था, खूब जोर-जोर से माता की जय-जयकार करता था, माता पर शराब की ज्योति भी उसी की तरफ से जला करती थी। ऐसा पिछले कितने ही सालों से हो रहा था। लेकिन पता नहीं क्या बात हुई कि दो तीन साल तक भक्त का मन्दिर में आना नहीं हुआ। काफी समय पश्चात जब एक दिन वह आया तो पुजारी ने पूछा कि "क्या बात है भगत ? आजकल काली मैया की पूजा अर्चना सब छोड़ दी है ?" भक्त बोला, "नहीं, ऐसी बात नहीं है, असल बात तो यह है कि मुँह के दाँत उखड़ गये हैं।" पुजारी ने फिर पूछा, "मुँह के दाँत उखड़ जाने से माता की भक्ति का क्या सम्बन्ध ?" भक्त ने फिर से जबाव दिया, "हाँ, है न। मुँह में दाँत नहीं रहने से बकरे की बलि चढ़ाकर प्रसाद तो खा नहीं सकते हैं। फिर बताओ नाहक बकरे को क्यों कटवायें ?"

देखा ?.....भक्त की मानसिक वृत्तियों में तामसी गुणों का प्रभाव। वह कोई श्रद्धा से बलि नहीं देता था अथवा वह किसी प्रकार के भक्ति भाव से आविभूत होकर माता का भक्त नहीं था, वह तो उसके अन्दर जो तामसी पदार्थों के सेवन की वृत्ति थी, उसके कारण ही वह काली का भक्त था।

यदि ऐसे व्यक्ति को कोई आध्यात्मिक शक्ति मिल जाय तो वह उसका क्या उपयोग करेगा ? वह तो वही करेगा जो अभी तक उसके मन में चलता रहा है। ऐसे व्यक्ति से इस प्रकार की आशा कैसे रखी जा सकती है कि वह अपनी प्राप्त की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुई शक्तियों को परमात्मा के चरणों में अर्पित कर देगा। उसका क्या सम्बन्ध है उस परम सत्ता से ? उसका तो यह व्यक्तिगत मामला है। अब तो वह और भी अधिक तीव्रता के साथ प्रयत्न करेगा कि किसी प्रकार से मेरे मुँह में फिर से दोबारा दाँत उग आयें, माता की कृपा से। तब मैं एक माता का विशाल मन्दिर बनवाऊँगा फिर तो बड़ी मौज रहेगी, खूब शराब मिलेगी, खूब माँस मिलेगा खाने को और खूब ही भक्तिनों का सम्पर्क मिलेगा।

अब क्या अंजाम होगा ऐसे भक्त का ? और परिणामस्वरूप इसका क्या स्तर होगा ? **जब इसके स्वयं का ही कोई स्तर नहीं है तब इसकी प्रार्थना का भी स्तर क्या होगा ? क्योंकि जो व्यक्ति उन शक्तियों का उपयोग स्वयं के हित साधने में कर रहा है वह अपना सम्पर्क उस परम तत्त्व से कैसे जोड़ सकेगा।** इसी स्थिति वाले साधक के लिए किसी विद्वान ने कहा है कि "खाई से तो बच गए लेकिन खड्ड में गिर गए।"

इस भौतिक संसार के मायावी जालों से ही अपना पीछा छुड़ाना बड़ा कठिन होता है। जन्म के जन्म लग जाते हैं, संस्कारों को निपटाते-निपटाते। जबकि इस स्तर के साधक तो माया के जाल को अपने मानसिक सूक्ष्म स्तर में भी प्रवेश करने की अनुमति दे रहे होते हैं। चूहा अपनी स्वाभाविक अवस्था में ही साधारणतया काफी उछल-कूद करता रहता है। कभी चैन से दो पल शान्त नहीं रह सकता है। हर समय कुतर-कुतर लगा ही रहता है, कहीं ऊपर से वह भाँग और खाले तो क्या हाल होगा उस बेचारे का ? उसकी बेचैनी पर तो आपको भी तरस आ जावेगा। लेकिन यह सोचकर कि चलो कोई बात नहीं है थोड़ी देर में यह अपने आप शान्त हो जावेगा। आप भी सन्तुष्ट हो जावेंगे। लेकिन तब उस चूहे पर क्या बीतेगी। जब वह उसी नशे की हालत में अपने मन में यह निश्चय कर बैठे कि, अब से आगे मैं बिल्ली से नहीं डरूँगा बल्कि बिल्ली ही अब से आगे मुझसे डरा करेगी। क्योंकि मैं तो एक विशिष्ट चूहा हूँ। **ऐसे ही साधकों में हमें योग भ्रष्ट साधक दिखाई पड़ते हैं। उनकी कितनी बुरी अवस्था होती है। इसे भुक्त भोगी से ज्यादा कोई नहीं जान सकता है।**

कुछ दूसरे स्तर के साधकों की प्रवृत्ति राजसी होती है। जिसके तहत उनमें एक दूसरे प्रकार का शौक, साधना की शक्ति आ जाने के पश्चात शुरू हो जाता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये सोचते हैं जो शक्तियाँ उनके पास हैं, अन्य किसी दूसरे में नहीं हैं। इसलिए मेरा अधिकार है कि मैं उनके द्वारा पूजा जाऊँ या वे मुझे अपना पूज्य स्वीकार करें। मेरे शिष्य बनें, साथ ही मेरी एक ही आवाज पर मरने मारने को तैयार हो जायें। जो मैं कहूँ उसे ही सभी मानें तथा मेरे नाम का डंका चारों तरफ बजे। इसमें जो भी बाधा बनकर सामने आए उसे साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति अपनाकर अपने रास्ते से हटा दें। अपनी इस राजसी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के उद्देश्य को लेकर इस प्रकार के साधक इस संसार में साम्प्रदायिक दंगे करवाते हैं, तथा अपने आपको धर्म के ठेकेदार समझने लगते हैं। इस प्रकार के स्तर वाले साधक पहले वालों की तरह से तामसी प्रवृत्ति के तो नहीं होते बल्कि राजसी प्रवृत्ति के होते हैं। लेकिन यहाँ भी परेशानी "मैं" की है। "मैं" ही तो है यत्र-तत्र सर्वत्र। यही "मैं" इनके इर्द-गिर्द इनके विचारों में घूमता रहता है, इनका सम्पर्क जितना अपने "मैं" के साथ होता है, उतना न तो अपने शिष्यों के साथ होता है, और न ही उसके साथ, जिस का हवाला देकर इन्होंने अपने आस-पास भीड़ इकट्ठी की हुई है।

जब तक हम अपनी ही वृत्तियों में लिप्त हैं, तब तक हमारा छुटकारा किस प्रकार से सम्भव हो सकता है। कुछ लोग सोचते हैं कि तामसी और राजसी गुणों से प्रभावित वृत्तियाँ तो छूटनी चाहिए, लेकिन सात्विक प्रवृत्तियों के साथ हम इस साधना में लगे रह सकते हैं इस बात को हमें थोड़ा गहरे में समझना होगा। क्योंकि **कुछ लोग सोचते हैं कि हम यदि अच्छे-अच्छे काम करें तो हम मुक्त हो जावेंगे; यह सोचना नितान्त भ्रम ही है। जिसमें हम सोचते हैं कि यदि हम बुरी एवं कुत्सित वृत्तियों से मुक्त हो जावेंगे तो हम संसार से भी मुक्त हो जावेंगे। क्योंकि जब तक किसी प्रकार से भी हमारा सम्बन्ध, हमारे मन में, इस संसार में मौजूद हैं, तब तक सम्बन्धों से मुक्त किस प्रकार हो सकेंगे?** यह माना कि हमारी किसी से शत्रुता नहीं है लेकिन मित्रता तो है। असल बात तो यह है कि सम्बन्ध का अर्थ होता है बन्धन सहित। तो हम ध्यान रखें हम इस संसार में शत्रु बनकर रहें या मित्र बनकर, सांसारिक सम्बन्धों के बन्धनों में इस बात से कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है।

हमारे तमाम बुरे संस्कारों के भुगत जाने के पश्चात भी हमारे अपने अच्छे संस्कार भी तो हमारे खाते में बचते हैं। जिनके कारण से भी हमें इस पृथ्वी पर जन्म लेना पड़ता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्योंकि वे सत् संस्कार जो हमने दूसरे के प्रति दया करके, दान करके या किसी की सेवा करके अपने कर्माशेषों में इकट्ठे कर रखे हैं उन्हें भी तो हमें भुगतना ही पड़ेगा।

भगवान बुद्ध के चचेरे भाई ने उन्हें मारने के लिए उनके ऊपर पहाड़ के ऊपर से एक शिला खण्ड लुढ़का दिया था, लेकिन वह शिलाखण्ड उनके कान के पास से एक जौ भर का फासला बनाते हुए नीचे लुढ़क गया था। जिसके कारण बुद्ध बच गए थे। दूसरी बार उसने भगवान को मारने के लिए एक मदमस्त पागल हाथी को उनकी ओर हाँक दिया था। वह पागल हाथी जब भगवान के सामने, रास्ते के पेड़ों को तोड़ता मरोड़ता हुआ आया तो वहाँ वह अपनी सूंड को झुकाकर एक दम शान्त हो गया और थोड़ी देर बाद वहाँ से वापिस चला गया।

इन दृश्यों को उनके शिष्यों ने भी देखा था। और वे आश्चर्य चकित भी हुए बिना नहीं रह सके थे। इसलिए उन्होंने भगवान के सामने अपनी शंका रखी। "भगवन् यह कौनसी कला है जो हमें आपने अभी तक नहीं बताई है?" भगवान बोले, "इसमें कला जैसी तो कोई बात नहीं है, अगर कुछ बात है तो वह केवल इतनी सी कि पिछले जन्मों में मेरे द्वारा इस चचेरे भाई के खिलाफ कोई दुष्कर्म हो गया होगा जिसका यह अब बदला ले रहा है, और अब इसके साथ ही पिछले ही जन्मों में कोई सत्कर्म इस पागल हाथी के प्रति मुझसे हुआ होगा इसी कारण से जब वह मेरे सामने आया तो उसकी आँखों के मुझसे मिलते ही, उसे मेरे द्वारा किया गया उसके प्रति वह सत्कर्म याद आ गया होगा, जिसके कारण से ही आज वह मुझे जिन्दा छोड़ गया है। इस पर शिष्यों ने फिर से शंका उठाई "लेकिन भगवान साक्षात मौत को अपने सामने पाकर भी आप विचलित क्यों नहीं हुए? हमने देखा था कि आप दोनों ही समय ऐसे अविचलित रहे थे, जैसे आपके समक्ष कुछ हुआ ही नहीं था।" इसके उत्तर में भगवान ने उन्हें फिर कहकर समझाया कि, "यदि मैं उस भाई से अपना बचाव शुरू कर दूं तो जो संस्कार अब समाप्त होने को ही हैं, उनमें फिर से एक नई कड़ी और जुड़ जावेगी। और इसके विपरीत यदि मैं उस हाथी को धन्यवाद दे दूँ तो वहाँ उसके और मेरे संस्कारों की कड़ियों में भी एक कड़ी और जुड़ जाती है और मैं नहीं चाहता कि मुझे इस जन्म के बाद और भी जन्म लेने पड़ें। हकीकत तो यह है इस जीवन के रहते-रहते मैं अपने तमाम बचे खुचे संस्कारों को यहीं निपटा जाना चाहता हूँ। जब उन सभी को मुझे यहाँ समाप्त

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करना है तो फिर उनसे भयभीत होकर मैं अपना मुँह क्यों चुराऊँ।"

जहाँ तक इस मायावी संसार से मुक्ति का प्रश्न है उसके लिए तो यह जरूरी है कि हमें अपनी सभी प्रकार की वृत्तियों पर चाहे वे तामसी, राजसी या सात्विकी किसी भी प्रकार के गुण से प्रभावित क्यों न हो, उनसे छुटकारा पाना ही पड़ेगा। जिस प्रकार समुद्र के किनारे कोई नाव कई एक लंगरों के बँधी रहती है, उसके एक लंगर को छोड़कर सभी लंगरों को उठा लेने के पश्चात भी वह समुद्र में नहीं जा सकती है, ठीक इसी प्रकार हमारे तामसी और राजसी गुणों से ओत-प्रोत वृत्तियों के मिट जाने के पश्चात भी जब तक सात्विकी गुणों से ओत-प्रोत वृत्तियाँ मौजूद हैं; चाहे वे मनुष्य जाति के प्रति करुणा के स्तर पर भी क्यों न हों; हमारी स्वयं की यात्रा इस संसार से भवसागर की ओर किस प्रकार से शुरू हो सकती है ? क्योंकि अभी सत्व का लंगर किनारे पर पड़ा है। हालाँकि भवसागर का वेग इस कमजोर से लंगर से पीछा छुड़ाने में भी इस समय काफी सहयोग देता हुआ मालुम देता है। लेकिन सही अर्थों में यथार्थ स्थिति तो यही है कि राजसी और तामसी गुणों से छुटकारा पाने के पश्चात हमें सात्विकी गुणों से भी छुटकारा पाना ही पड़ेगा। अन्यथा मुक्ति की तरफ अपनी यात्रा अभी अधर में ही रहेगी, नहीं तो ऐसे गहन साधक शरीर त्यागने के पश्चात भी इस संसार से ही जुड़े रहते हैं। भले ही करुणावश ही सही। आप यदि इस संसार से करुणावश भी जुड़े हैं। तब भी बन्धन तो है ही। **जंजीर लोहे की हो अथवा सोने की क्या फर्क पड़ता है। शरीर तो दोनों ही प्रकार की जंजीरों से जकड़ा जा सकता है।**

अभी पिछले दिनों मैंने, एक पत्रिका के रहस्य रोमांच विशेषांक में पढ़ा था कि हमारे देश की फौज की एक टुकड़ी दुश्मन के इलाके में रास्ता भूल जाने के कारण भटक गयी थी। अँधेरी रात थी। कदम-कदम पर बारूदी सुरंगों के बिछी होने का अँदेशा था। और यदि इसी इलाके में दिन निकल आया तो दुश्मन वैसे भी जिन्दा छोड़ने वाला नहीं था। तभी उस टुकड़ी को एक कैप्टन अपनी ही फौज का मिला। उसने चुपचाप बिना बोले केवल इशारे से अपने पीछे चले आने को कहा। करीब एक घण्टे बाद उस कैप्टन के बताए मार्ग के द्वारा वे अपनी मंजिल पर पहुँच गये थे। लेकिन तभी उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा कि वह कैप्टन उनकी आँखों के सामने से उनके देखते-देखते गायब हो गया था। इस बात का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिक्र जब उन्होंने अपनी बटालियन में आकर किया तो एक बूढ़े से सूबेदार ने बताया, हाँ इस प्रकार की हुलिया का एक कैप्टन बहुत साल पहले दुश्मन की गोली का शिकार उसी क्षेत्र में हुआ था। शायद उसी मृत कैप्टन की आत्मा ने आज तुम्हें तुम्हारी मौत से बचाया है।

क्यों बचाया था उस मृत कैप्टेन की आत्मा ने इन सैनिकों को ? ये लोग उसके सगे सम्बन्धी तो थे नहीं ? और न ही इन लोगों को पहले से उस कैप्टेन के बारे में कुछ पता था। जिससे हम यह मान लें कि इन्होंने अपने ऊपर आयी संकट की घड़ी के समय अपने मन में उसका स्मरण करके उस आत्मा का आह्वान किया होगा। इसके साथ-साथ उस आत्मा का भी इन सैनिकों के द्वारा कोई स्वार्थ सधता नजर नहीं आता था। सिर्फ एक ही कारण था, उस तथाकथित आत्मा के सम्मुख; वह था उनके प्रति उसकी करूणा ! और अपनी इस करूणा की वृति के कारण ही वह अभी तक पृथ्वी तथा उसके वासियों की ओर आकृष्ट है। अथवा **अभी वह आत्मा बहुत गहरे में सात्विकी गुणों के स्तर की माया के बन्धन में बँधी है, साथ ही हम यह भी जानलें। इस प्रकार के स्तर की आत्माएँ जब भी इस पृथ्वी पर जन्म लेती हैं। तो उनके जन्म लेने का एक मात्र कारण करूणा ही होता है। इसलिए ही वे अक्सर इस जगत में अवतार सिद्ध होती हैं।** वे यह जानते हुऐ भी कि करूणा भी एक बन्धन ही है। लेकिन एक बार तो उसे उस सँचित संस्कार से भी भुगत जाने के लिए जन्म लेना ही पड़ता है। तब कहीं जाकर ये अपनी इस सात्विकी प्रवृति पर विजय प्राप्त करती हैं।

इसी करूणा के भाव को समझाने के लिए मैं यहाँ एक और उदाहारण लिख रहा हूँ। जिसे अक्सर इसी विषय वस्तु पर बोलते हुये अनन्य वक्ता स्तेमाल करते हैं। एक बड़े से भवन में जिसके सभी दरवाजे बन्द हैं, उसके अन्दर बहुत सारे आदमी भरे पड़े हैं; जिसके कारण वहाँ का वातावरण बड़ा ही दमघोंटू हो गया है। उसके अन्दर के आदमियों को भवन के बाहर की कोई भी झलक नहीं मिल पा रही है। लेकिन उन्हें इस भवन की छत के पास कुछ खिड़कियाँ दिखाई दे रही हैं। उन खिड़कियों के पास पहुँचना असम्भव नहीं तो दुष्कर अवश्य हैं। कुछ हिम्मतवर लोग इस भवन के बाहर की झलक पाने की एक मात्र अभिलाषा के कारण अथक प्रयास में लगे रहते हैं। जिनमें कुछ पहुँचते भी हैं, और जो उन खिड़कियों में से किसी एक पर भी पहुँच जाता है; वह उस भवन के बाहर की झलक देखने लगता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। जिसे उसने अब अपने अनुभव में पहली बार ही देखा होता है। जिसके कारण से वह बड़ा ही आनन्दित हो जाता है। और उसकी कल्पना में इस आनन्द के बारे में अन्य साथियों को जो कि भवन में नीचे मौजूद हैं उनके लिए बखान करने के लिए अपने पास शब्दों की नितान्त कमी होती है। किस प्रकार के शब्दों से वह इसकी व्याख्या करे ? लेकिन फिर भी गूंगे के द्वारा गुड़ के बारे में बताये जाने की तरह से ही वह उन अपने साथियों को जिनके साथ में वह इस खिड़की तक पहुँचने से पहले तक था अपने स्वभाववश दया करके वहीं ऊपर से बैठे-बैठे ही इस अकथ आनन्द को जैसे-तैसे बताने की कोशिश करता है। आओ इस रास्ते पर जिस पर चलकर मैं यहाँ आया हूँ; तुम सब भी आओ। यहाँ बड़ा भारी आनन्द है।

राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, आदिशंकराचार्य, रामकृष्ण परमहंस और न जाने कितने ही सबके सब इसी प्रकार की उच्च अवस्था वाले लोग हैं जो स्वयं तो उस परम सत्ता की खिड़की पर पहुँच गये हैं। लेकिन मुक्ति की खिड़की से उस परम सत्ता के क्षेत्र में प्रवेश करने से पहले वे इस संसार पर करूणा करके इस मुक्ति के द्वार का रास्ता बताने की कृपा करते हैं।

यहाँ एक शंका पैदा होती है कि जब सभी एक ही तरफ आरोहण करते हैं। तब ये सभी के सभी रास्ता अपना अलग-अलग क्यों बता कर जाते हैं ! इस शंका का निवारण भी इसी उदाहारण से समझ में आ जाता है। उस भवन की किसी एक खिड़की पर जो कि पूर्व में खुली है। उस पर मानो कि महावीर पहुँचे हैं उन्हें वहाँ तक पहुँचने में कितने तौर तरीके अपनाने पड़े थे वहाँ जाकर उन्हें जो पूर्व की दिशा की जो आभा दिखाई दी थी। उन्होंने अपने नीचे वाले साथियों को वही बात बताई। इसी प्रकार दूसरी खिड़की पर जो कि पश्चिम दिशा की ओर खुली है। उस पर बुद्ध पहुँच गये हैं उन्होंने वहाँ पहुँचने में शुरू से आखिर तक जो-जो अनुभव किये होंगे बुद्ध ने अपने अधीनस्थों से कहे। हालाँकि यह वकतव्य महावीर से भिन्न था क्योंकि उन्हें पूर्व की अपेक्षा पश्चिम की आभा दिखाई दी थी। इस दुनिया में से असंख्य लोग प्रकृति की असंख्य ही खिड़कियों पर पहुँचते हैं। सभी ने इसी कारण से अलग-अलग वक्तव्य इस दुनिया वालों को दिये हैं। इसमें विचित्रता कुछ भी नहीं है। **और यही कारण भी है कि हिन्दू धर्म में छत्तीस करोड़ विभूतियों को देवयोनि से विभूषित किया गया है।**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेकिन जैसे ही वे इस भवन के बाहर उस खिड़की द्वारा कूद जाते हैं। वे इस भवन से अपने सभी प्रकार के सम्बन्ध तोड़ लेते हैं। अथवा वे तब ही कूद पाते हैं उस प्रकृति के आगोश में, जब वे सभी प्रकार के माया के बन्धनों से अपना पीछा छुड़ाकर इन पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। और इस प्रकार फिर वह अपने स्वयं की पहचान को अपने प्रत्येक स्तर पर मिटाकर उस महामृत्यु को प्राप्त करते हैं। अब वह किसी भी स्तर पर नहीं बचता है, अब तो उसकी प्रार्थना ही बचती है। ध्यान रखना! प्रार्थना भी उसके स्तर की नहीं बचती बल्कि प्रार्थना भी प्रार्थना के ही स्तर की बचती है। इसी अवस्था को त्रिगुणातीत की अवस्था कहते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ७

गुरू वह है जो होश जगाए, जागृति लाए, मार्ग दिखाए

आज से करीब पन्द्रह साल पहले, जब मेरी उम्र करीब अठारह उन्नीस साल की थी, हमारे घर में हिन्दू संस्कृति से सम्बन्धित बहुत सी साहित्यिक पुस्तकें बिका करती थीं। कई बार मुझे मेरी पसन्द की पुस्तकें भी उनमें मिल जाती थीं। जिनको मैं बड़े चाव से पढ़ा करता था, जिनमें कुछ भक्ति की कहानियाँ तथा किन्हीं अन्य में किसी महापुरुष के जीवन के संस्मरण या उनकी जीवनी हुआ करती थी। एक बार भगवान बुद्ध की सचित्र कहानियों का संग्रह जो कई शृंखलाओं में था; हमारे यहाँ बिकने के लिए गीता प्रेस, गोरखपुर से आया था। जिनमें भगवान बुद्ध को उनकी कठिन तपस्या के बाद सुजाता के द्वारा खीर का खिलाया जाना, भगवान बुद्ध का किसी भक्त के द्वारा लाए हुए आमों में से एक आम उसके ही सामने खाकर उस खाये हुये आम की गुठली पर अपनी जूठे हाथों को धोकर; गुठली में से उस भक्त के सामने ही पौधा निकाल देना आदि-आदि। और भी कितनी ही कहानियाँ उस संग्रह में थी।

मेरे मन में कुछ तो पूर्व के संस्कार रहे होंगे, कुछ उन कहानियों का तत्कालिक प्रभाव था तथा साथ ही घर का वातावरण भी भक्तिमय था; इन सभी के मिश्रण से उस समय मेरा चित्त वैराग्य से भर उठा था। जिसके कारण मैंने अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि भगवान बुद्ध की तरह ही मैं भी लंघन करूँगा और जब तक गोपाल जी स्वयं आकर मुझे अपने हाथ से खाना नहीं खिलायेंगे; तब तक मैं खाना पीना ग्रहण नहीं करूँगा। बस उसी शाम से अन्य किसी को बिना कुछ कहे सुने मैंने अपनी मर्जी से खाना पीना छोड़ दिया। पहले दिन तो किसी ने कुछ नहीं कहा, पिताजी को भी मालुम नहीं पड़ा था, दूसरे दिन तो घर में सभी को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मालुम हो गया। पिताजी गाँधी विचारधारा के रहे थे, तो उन्होंने कहा कि लड़का किसी बात को लेकर हड़ताल पर बैठ गया है। जानता कुछ है नहीं, गाँधी की होड़ करने लगा है। मेरे ताऊजी जो भक्ति और ज्ञान के संयम थे; लेकिन वे आँखों से अन्धे थे। वे मुझसे बेहद प्रेम करते थे; उन्होंने मुझसे पूछा कि, "खाने की हड़ताल क्यों कर रखी है?" पहले तो मैं कुछ समझा ही नहीं, क्योंकि पिताजी के शब्दों का तो मुझे बाद में पता लगा। उन्होंने पिताजी का हवाला अपनी बातों में दिया और कहा कि "क्या बात है मुझे तो बताओ।" मैंने कहा कि "ऐसी कोई बात नहीं है; बात केवल इतनी सी है कि अब तो मैं खाना जब ही खाऊँगा, जब मुझे गोपाल जी स्वयं आकर खिलायेंगे।" ताऊजी की उम्र उन दिनों पिचहत्तर वर्ष की रही होगी, आजीवन अविवाहित थे, भागवत गीता तथा रामायण का गहन अध्ययन उनको था इसके अतिरिक्त दुनियाँदारी का अनुभव भी उनको था ही बोले, "पागल हो गया है भला कहीं निगुरै (बिना किसी को गुरू बनाए) भी किसी को ज्ञान होता है? बिना ज्ञान के कहीं किसी को कुछ उपलब्ध होता है? उनके इस तर्क को मेरा भक्ति सुलभ मन नहीं समझ सका, क्योंकि मुझे याद है जब मैंने कहा था, "एक तरफ मैं हूँ और दूसरी तरफ मेरा गोपाल, बीच में यह गुरु क्या चीज है? और इसकी यहाँ जरूरत क्यों कर आ पड़ी? और यदि फिर भी किसी ज्ञान की मुझे जरूरत होगी तो गोपाल जी स्वयं अपने आप कोई रास्ता निकालेंगे।"

उन्होंने अपने अनुभव और ज्ञान के उदाहारण देकर मुझे अन्ततः इस बात पर राजी कर ही लिया कि बिना गुरू के बनाये की गई साधना निष्फल ही रहती है, इसलिए चाहे किसी को भी अपना गुरू बना, लेकिन पहले इस काम को अंजाम अवश्य दे; फिर भले ही कुछ भी करना। गुरू की महिमा, गुरू का चुनाव, गुरू की जरूरत पर एक लम्बा भाषण उन्होंने मुझे दिया, मुझे गुरू के ऊपर सोचने के लिये मजबूर कर दिया; तथा उन्होंने मुझसे मेरे लंघन करने के दूसरे दिन किसी को भी अपना गुरू बनाने के लिये हाँ करा ली। तीसरा दिन एक तो शारीरिक कमजोरी का दिन था; क्योंकि मैं पानी भी नहीं पी रहा था दूसरे मानसिक रूप से गुरू खोजने में मेरा दिमाग व्यस्त था। शाम को श्री नवलकिशोर जी गोस्वामी जो पिछले दिनों डीग पैट्रोल पम्प पर रहा करते थे, उनके पास मैं एक मित्र के साथ पहुँचा। वहां पहुँच कर मैंने अपने मन की स्थिति तथा ताऊजी के साथ जो मेरा वार्तालाप हुआ था उन्हें बताया। उन्होंने कहा कि "तुम जैसा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सवत मुझे गुरू स्वीकार करे तो मुझे खुशी ही होगी, लेकिन मैं अपनी स्वीकृति तब दूँगा जब तुम मुझे अच्छी तरह जान लोगे, क्योंकि "गुरू कीजै जान और पानी पीजै छान"। उनकी इस बात पर मैंने प्रति प्रश्न किया कि "यह मैं कैसे जानूँ ? किसको गुरू बनाना है" इसके लिये उन्होंने कहा कि "पहले तुम स्वस्थ हो लो, खाना पीना शुरू करने के पश्चात तीन दिन बाद आकर मुझसे मिलो, तबही मैं तुम्हें कुछ कहूँगा; उससे पहले मैं कुछ नहीं कहूँगा।" रात्रि हो चुकी थी। मजबूरन उस दिन खाना खाया, अगले तीन दिन बाद मैं उनके सामने फिर मौजूद था और उनसे कहा कि "मैं अब भी अपनी बात पर अटल हूँ और कृपया मुझे अपना शिष्य स्वीकार कीजिये।" उन्होंने फिर से रास्ता निकाल लिया कि "एक महीने बाद मकर सक्रान्ति है उस दिन तुम्हें गुरू मन्त्र दूंगा।" मैं बड़ा निराश हुआ, लेकिन और कोई चारा नहीं था।

समय के अन्तराल ने चित्त की दशा ही बदल दी। मकर सक्रान्ति को वह संस्कार पूर्ण हुआ लेकिन वह लग्न अब कहाँ थी ? फिर भी वह रस्म तो पूर्ण हो गयी थी। उसके तुरन्त बाद ही कुछ घटना क्रम ने भी विचित्र मोड़ खाया, क्योंकि उसके बाद मुझे आर्थिक कठिनाईयों तथा घरेलू झंझटों के कारण डीग छोड़नी पड़ी और बम्बई नगरी की शरण लेनी पड़ी; वहाँ छः महीने की नौकरी करने के पश्चात् जब वापिस डीग पहुँचा तो पता चला, कि गुरूजी पैट्रोल पम्प छोड़कर हिमालय की तरफ चले गये हैं; तथा साधु बन गये हैं। वह दिन और आज का दिन इन पंक्तियों को लिखते समय तक मेरी उनसे मुलाकात नहीं हो सकी।

समझने की बात यहाँ यह है कि उन तीन दिनों की भूख प्यास की तड़फन मैंने किस प्रकार सहन की, मुझमें कहाँ से इतनी शक्ति आ गई थी, तथा उसका मुझे क्या फल प्राप्त हुआ था, मेरे वृद्ध ताऊजी के अनुसार तो वह निष्फल ही रहा था, इन सब बातों को उस समय इस बारे में समझ नहीं होने के कारण नहीं समझ सका था, लेकिन पन्द्रह साल के अन्तराल के बाद अब उन सब बातों का अर्थ सही मायनों में समझ में आने लगा है।

जिस प्रकार पतंग को सफलता पूर्वक उड़ाने के लिए पतंग और डोर के अलावा हवा के रूख का ज्ञान होना भी आवश्यक है उसी प्रकार भक्ति, ज्ञान और कर्म को ठीक-ठीक जानकारी में लिए बगैर हम निराश और निराश होते ही जावेंगे। हकीकत में अपनी साधना के बारे में हमें इन तमाम बातों को गुरू के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

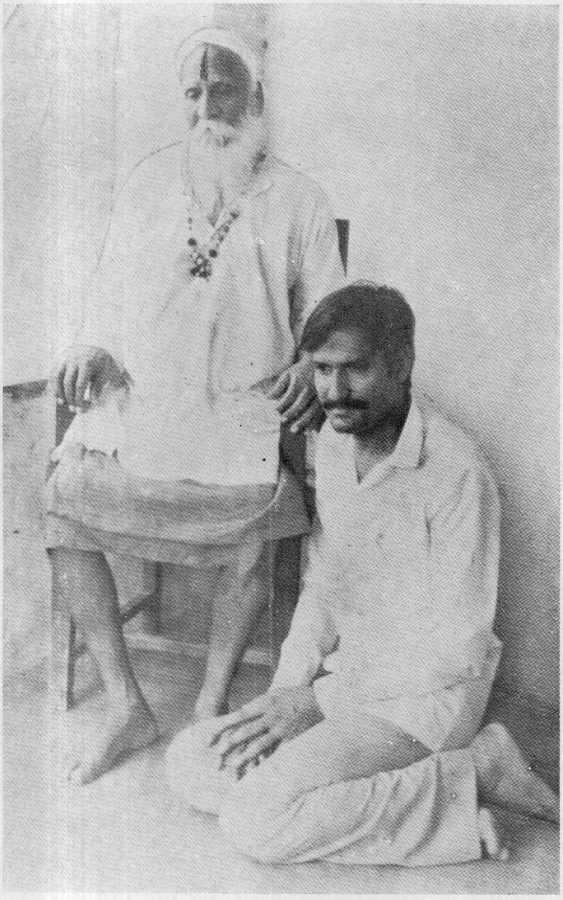

परमपूज्य परम प्रकाश श्री गुरुजी श्री श्री नवलकिशोर गोस्वामी जी
से लेखक आशीर्वाद प्राप्त करते हुये

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलावा और कौन समझा सकता है। विनोबा जी के गीता पर उनके द्वारा जेल में दिए गए प्रवचन पढ़ रहा था, इसी बात को उन्होंने एक तिपाही का उदाहरण देकर समझाया है। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार तिपाही की एक भी टाँग टूट जाने के पश्चात् तिपाही का सही सलामत खड़े रहना नामुमकिन है, उसी प्रकार **साधक को भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिपुटी के बारे में व्यापक जानकारी किये बिना मंजिल पर पहुँचना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।** हाँ ऐसा अवश्य हो सकता है कि आप अपनी साधना की नींव शुरू में इन तीनों में से किसी एक पर रखें। लेकिन अपनी साधना में पूर्णता को प्राप्त होने के पहले, आप में इन तीनों चीजों का समावेश हो ही जावेगा। मीरा ने अपनी साधना भक्ति से शुरू की थी लेकिन साधना की अन्तिम पायदानों में कर्म करते करते ज्ञानी हो गई थी, कबीर भक्ति से शुरू करके ज्ञान को प्राप्त हो गए थे, विवेकानन्द को रामकृष्ण ने ज्ञान से शुरू कराया, (अष्टावक्र की गीता के द्वारा) लेकिन बाद में वे देवी माँ के भक्त हो गये थे। कहने का तात्पर्य यह है कि हमें पूर्णता तो तभी प्राप्त होगी जब हम इस साधना की तमाम व्यवस्था को अपने चित्त के अन्दर श्रद्धापूर्वक, समझपूर्वक तथा यत्नपूर्वक भी आत्मसात करलेंगे।

भक्ति के द्वारा ही हमें, (अभी जो हमारे लिए अज्ञात है) अपने आपको समर्पण करने की भावना प्राप्त होती है और ज्ञान के द्वारा उस अज्ञात की तरफ जाने वाले अनन्य रास्तों में से अपने पूर्व जन्मों के सिंचित संस्कारों के तहत कौनसा रास्ता हमारे लिए ठीक है; उसकी पहचान हमें होती है। जब हमारे अन्दर भक्ति और ज्ञान का प्रादुर्भाव हो जाता है, केवल तब ही हमारे कर्म उस अज्ञात की साधना में सफल होते हैं। अन्यथा कहीं न कहीं किसी न किसी प्रकार की अड़चनें हमारे समक्ष आती रहती हैं। भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिपुटी को ठीक से समझे बिना ही कुछ लोग यह कहते पाये जाते हैं, कि भक्ति का भाव तो परमात्मा हममें जब उसकी इच्छा होगी वह स्वयं हममें पैदा कर देगा; तथा जरूरत के मुताबिक ज्ञान का संचार भी हममें वह ही करेगा। इसलिये हमें तो उसकी निगाह का ही इन्तजार है। जब उसकी निगाह हमारी तरफ हो जावेगी, तब ही हम कर्म करेंगे। बड़े ताज्जुब की बात है! जब भक्ति और ज्ञान वह आपमें भर देगा, फिर तो कर्म भी वही कर लेगा। आप तो फिर आराम ही कीजिये। इस तरह से तो यात्रा कभी भी अपनी मंजिल की तरफ बढ़ नहीं पायेगी। क्योंकि, ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें अपने साधन रूपी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्मों के द्वारा अपने स्वयं के अनुभवों में उतरना पड़ता है, बाद में ये ही अनुभव हमारे ज्ञान के पुंज सिद्ध होते हैं। इतना होने के पश्चात् भी जब तक हमारे मन के अन्दर भक्ति की भावना नहीं आती, तब तक हमें यही हमझना चाहिए कि अभी तक हम उस बीज की तरह से हैं जो रेगिस्तान की सूखी बालू में पड़ा है। जहाँ मिट्टी भी है और बीज भी है लेकिन नमी न होने के कारण से उसमें अंकुर नहीं फूट पा रहे हैं।

जैसे जब हम प्राणायाम में उतरते हैं तो, थोड़े से अभ्यास के पश्चात् ही हम अपने व्यर्थ के विचारों पर कुछ हद तक काबू पा लेते हैं। विचारों से रहित होने की स्थिति को हम "सुन्न" (विचार शून्य) की स्थिति कहते हैं। जब हम इससे आगे अपनी क्रिया में उतरते हैं, तब अपने विचार शून्य मन से, एकाग्र होकर अपने किसी इष्ट का नाम या किसी मन्त्र का जाप करते हैं; तब धीरे-धीरे एक समय ऐसी स्थिति आती है; जब हमारे द्वारा जपा जा रहा वह मंत्र खुद व खुद हमारी स्वांस-स्वांस हमारी धड़कन-धड़कन से हमें अपने आप उच्चारित हुआ प्रतीत होता है। इस प्रकार की स्थिति को हम आध्यात्म की भाषा में अजपा की स्थिति कहते हैं। अपनी साधना से जब हम, और ज्यादा गहराई में इस अजपा की स्थिति में डुबकी लगाते हैं; तब हमारा ध्यान उस मन्त्र से भी हटकर शुद्ध रूप में स्वयं हमारे ऊपर आ जाता है। तब हम इस शरीर की बाहरी तमाम क्रियाओं से अनुपस्थिति होकर इसकी आन्तरिक क्रियाओं* के सम्पर्क में आते हैं।

*आन्तरिक क्रियाओं को जरा यहाँ गौर से समझें ऊपरी तौर पर हमें अपने हृदय की धड़कन सुनाई या महसूस नहीं होती, लेकिन कुछ विशेष परिस्थितियों में जब हृदय बहुत ज्यादा जोर से धड़कता या अत्याधिक धीमी गति से धड़कता है तब हम उसकी धड़कन अपने अन्दर महसूस करने लगते हैं। इसी प्रकार इस शरीर की अनन्य क्रियाएँ जो अनवरत् हमारे शरीर के अन्दर चलती रहती है। उन्हें ही मैं यहाँ आन्तरिक क्रियाओं के शब्द से सम्बोधित कर रहा हूँ।

उन क्रियाओं का शोर शुरू-शुरू में साधक को थोड़ा विचलित करने वाला

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होता है अथवा थोड़ी घबराहट सी पैदा करने वाला होता है। लेकिन धीरे-धीरे यह बड़ा सुरीला तथा सहज हमें लगने लगता है जिसके कारण किसी-किसी साधक को तो बड़ा मनोरंजक भी लगने लगता है। जब यह स्थिति हमारे लिए सामान्य हो जाती है, तब हम अपने आपको आनन्द की सीमा में मान सकते हैं। लेकिन इतना सब करने के पश्चात भी हम आधे-अधूरे ही रहते हैं। क्योंकि, ये सब स्थितियाँ कर्म और ज्ञान के द्वारा हमें प्राप्त हो जाती हैं। यह ठीक है; इतना कार्य कर चुकने के पश्चात हम अपनी ज्ञान और कर्म इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, लेकिन जब तक इस साधना में जिसमें ज्ञान और कर्म मौजूद हैं भक्ति का समावेश नहीं किया जाएगा तब तक वह साधक इन्द्रियातीत अनुभव करने का अपने आपको पात्र नहीं बना पाता है। जिसके कारण उसकी स्थिति जंगल में सूखे ठूंठ सी बनी रहती है जिसमें कोंपलें नहीं फूटती; और जब जिस पेड़ में हरियाली ही नहीं है उसमें फल या फूल खिलने की कामना करना तो व्यर्थ ही है। इसलिए कबीरदास जी ने समझा-समझाकर यही बात कही है—

सुन्न मरै, अजपा मरै, अनहद् हू मर जाय ।

एक राम सनेही ना मरै, कह कबीर समझाय ।।

इन तीनों अवस्थाओं को (सुन्न, अजपा और अनहद) अपने अनुभव में जान-कर साधक को रुक नहीं जाना चाहिए अथवा यह नहीं समझ लेना चाहिये कि मेरी यात्रा पूर्ण हो गई है, इस प्रकार की भूल अक्सर इस अवस्था में आते-आते साधकों को हो जाती है। क्योंकि इतना सब होते-होते अनन्य प्रकार के अनुभव साधकों को होने लगते हैं; जिनको आध्यात्म की भाषा में हम सिद्धियों के नाम से जानते हैं। यदि हम इनके रूप को बिना समझे हो इनका उपयोग अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए करने लग जायें तो, ये सिद्धियाँ हमें इस संसार में व्याप्त माया जाल के और भी ज्यादा गहरे में खींच ले जा सकती है। जिसके कारण हम (इस मृत्यु लोक के आवागमन* में) और भी अधिक गहरे में जाकर बँध जाते हैं। इसलिए कबीर

*आवागमन—इस पृथ्वी पर जन्म लेकर आना तथा मृत्यु के बाद इस संसार से कूच करके चले जाना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दास जी, साधक के भ्रम को दूर करने के लिए मील के पत्थर की तरह यह बता रहे हैं कि सुन्न मरै, अजपा मरै, अनहद हू मर जाय। क्योंकि इन स्थितियों में तो वह अपनी ही माया में फँसा रहता है, और जब तक वह माया के जाल में फँसा है तब तक उसे इस माया के कारण से बार-बार जन्म लेना और मरना पड़ता है। इसके विपरीत यदि वह इन तमाम सिद्धियों से अपने आपको बचा ले तो फिर वह माया के प्रेम पाश से बचकर इस दुनिया के आवागमन से छुटकारा पा लेता है। इस प्रकार का साधक जब जन्म ही नहीं लेता तो फिर वह मरता भी नहीं है। इतनी बात को समझने के पश्चात ही कबीरदास जी की वह बात समझ में आती है जिसमें उन्होंने कहा है कि "इक राम सनेही ना मरै कह कबीर समझाय।"

ज्ञान और कर्म तो आसान है लेकिन भक्ति की भावना को साधना बहुत कठिन है क्योंकि जरा सी भावना ही तो हमें उसके नजदीक पहुँचाती है और वही जरा सी विपरीत भावना हमें उसकी ओर खुलने वाले द्वारों को हमारे लिए बन्द करवा देती है इसलिए यदि हमें भक्ति में उतरना है तो बहुत ही होशपूर्वक अपने आपको जागृत रखना होगा। नहीं तो माया के कीटाणु हमारे अन्दर कितने प्रकार से प्रवेश कर जाते हैं। इसका अन्दाजा लगाना भी बड़ा कठिन है। इसलिए हमें अपने आपको इस रास्ते में सदा चैतन्य रखना होगा, हमारे समक्ष कैसी भी परिस्थिति जागृति के मार्ग से विचलित करने के लिए खड़ी हो जायें, लेकिन हम हमेशा ही उससे बिना विचलित होते हुये; अपने आपको होश संभाले हुए रखें। अभी पिछली साल जागृति या होश के ऊपर एक छोटी सी पुस्तक पढ़ रहा था, उसमें एक बहुत ही सुन्दर उदाहरण मैंने पढ़ा था।

पुलिस के वायरलैस विभाग में वायरलैस आपरेटरों का इन्टरव्यू होना था। वहाँ पर केवल एक ही रिक्त स्थान था, लेकिन आज की इस बेरोजगारी की मार की वजह से पचास के करीब उम्मीदवार वहाँ उस एक मात्र जगह के लिये एकत्रित हुये थे। गर्मियों के दिन थे, इन्टरव्यू दस बजे शुरू होना था, इसलिये लड़के नौ बजे से ही वहाँ इकट्ठे हो गये थे। जैसा कि प्रत्येक पुलिस रेडियो स्टेशन पर होता है, ठीक वैसे ही वहाँ भी दुनिया भर की मशीनें इधर-उधर के कमरों में लगी हुई थीं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विभिन्न प्रकार की आवाजें गिट-पिट होती वहाँ सुनाई पड़ रही थीं। ठीक दस बजे उस आफिस में से एक चपरासी बाहर निकल कर आया और सूचना पट पर एक कागज चिपका दिया। जिसमें उस दिन होने वाले इन्टरव्यू में भाग लेने वाले उम्मीदवारों के नाम थे। वह चपरासी उस कार्यालय के बाहर आराम से बैठ गया। लड़के सोचने लगे कि अब बस थोड़ी बहुत देर में इन्टरव्यू शुरू होने वाला है, लेकिन काफी देर बीत जाने के बाद भी किसी उम्मीदवार लड़के का नाम नहीं पुकारा गया। तब उन्होंने वहाँ बैठे हुये चपरासी से भी पूछा, लेकिन वह कोई सन्तोषजनक उत्तर उन लड़कों को नहीं दे पाया, इसी कशम-कश की अवस्था में समय गुजरता गया; धूप भी तेज हो गयी; वहाँ कोई छाया पानी का भी इन्तजाम नहीं था; जिसके कारण लड़कों के मन में असन्तोष बढ़ता ही जा रहा था। लेकिन सभी चुप थे, मजबूरी भी थी, क्योंकि वे पुलिस की सीमा रेखा के अन्दर थे। इसलिये अनुशासन में रहना भी जरूरी था, कहीं निकाल कर बाहर ही न कर दें। लेकिन फिर भी सोच तो रहे ही थे कि पता नहीं कब से शुरू करेंगे। अब तो लंच का भी समय होने को आया था। तभी एक लड़का उस आफिस के अन्दर से बाहर निकला और सभी की ओर मुखातिब होकर बोला, "आप लोग अब भले ही घर जा सकते है, क्योंकि इस अकेले वायरलैस आपरेटर के रिक्त स्थान पर मेरी नियुक्ति हो गयी है।" बस फिर क्या था वहाँ तो उन लड़कों ने शोर करना शुरू कर दिया कि यह भी कोई बात रही, जब इन साहब का ही चयन करना था तो फिर हमें बुलाया ही क्यों था ? क्या हमारे आने जाने में पैसे खर्च नहीं हुए ? यह तो सरासर धोखा है; भ्रष्टाचार है। सूचना पट पर लगी हुई सूचना में भी इस लड़के का नाम सबसे अन्त में लिखा हुआ है, फिर हमें पहले क्यों नहीं बुलाया गया ? कुछ ही मिनिट में तो वे लड़के मरे बाजी पर उतर आये, बात अब और ज्यादा बढ़ने लगी तब वही लड़का फिर बोला, "आप नाहक ही नाराज हो रहे हैं, आप सभी का नाम भी ऊपर लगे माईक्रोफोन (वायरलैस से सन्देश भेजने की लिखित की आवाज में पुकारा गया था, लेकिन आप अपनी बातों में इतने अधिक मशगूल थे कि आप इस माईक की आवाज पर ध्यान ही नहीं दे सकें, शायद आप तो यह सोच रहे थे कि आपका नाम हिन्दी में इस चपरासी के द्वारा पुकारा जायेगा, तब ही आप अन्दर जावेंगे, और चयन कर्त्ता आपका चयन कर लेंगे, आपको एक बात और बता दूँ, अन्दर आफिस में तो कोई है ही नहीं। वहाँ तो मेज पर नियुक्ति पत्र रखा था, तभी इसके साथ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही एक कागज की चिट पर लिखा था, कि जो उम्मीदवार मौसं की आवाज सुनकर अन्दर आ जावे, अपना नाम इस चयन पत्र में भर ले और अपनी नियुक्ति इस रिक्त स्थान पर हुई समझे। इसलिए मैंने इस नियुक्ति पत्र में अब अपना नाम भर दिया है, अब आप चाहें तो अपने-अपने घर जा सकते हैं।"

जिस प्रकार से हमारा चौकन्नापन इस बाहरी संसार में हमें सफलता दलाता हैं, ठीक उसी प्रकार इस आध्यात्म के मार्ग पर भी हमें अपनी साधना में रत होते समय अपना होश, ध्यानपूर्वक जागृत रखना चाहिये, जिसके कारण से हम अपनी साधना के दौरान आने वाले विघ्नों से चाहे वे मानसिक हों, शारीरिक हों अथवा सांतरिक हों बचे रह सकेंगे। क्योंकि इस मार्ग पर चलते-चलते कब किस तरह की परिस्थितियों का सामना हमें करना पड़ सकता हैं, इसलिये आध्यात्म की प्रार्थना में उतरने से पहले इन तथ्य की बातों को सबसे प्रथम सावधानी के रूप में जान लेना निहायत ही जरूरी है। नहीं तो हम अपनी मंजिल की झलक पाकर भी चूक जाते है। जन्मों-जन्मों से ठीक इसी प्रकार ही तो चूकते आये है, और हमेशा असफल होते रहे है। ऐसा होना स्वाभाविक भी हैं, क्योंकि हमारी साधना जब फलीभूत होने को ही होती है तब केवल इतना ही होता है कि हमारे मन के स्तर पर कुछ विशेष तंरगें महसूस होने लगती है। अथवा हमारा मन तब तक एक अच्छा रिसिवर बन जाता है, और उनका अर्थ निकाल कर तथा मस्तिष्क का उपयोग करके (अपनी योग्यता के अनुसार) उनको शब्दों में परिवर्तित करता है। चूंकि इन मानसिक तरंगों को किसी यन्त्र के द्वारा नहीं पढ़ा जा सकता है, इसलिये ही हमें स्वयं इन मानसिक तरंगों की लिपि को जानना होता है, सीखना होता है। अन्यथा अन्य साधारण मनुष्यों की तरह हमारे कान भी ये सूक्ष्म ध्वनि सुनते रहेंगे लेकिन हम समझ भी नहीं समझ पायेंगे। [illegible] इस लिपि को समझकर उन तरंगित संकेत का अर्थ समझे-बूझे उसको ही साधना में रख देता है।

इसलिये हमेशा ही हमें यह ध्यान रखना है कि जिन बेकार की बातों में हमारा ध्यान इस समय उलझा है, उसे इन बेकार की बातों से स्वतन्त्र करके लें नहीं तो हमारे मन की एकाग्रता भंग हो जावेगी, और चूंकि एकाग्रता के द्वारा ही हम इस प्रकृति की भाषा को पढ़ना सीखते हैं इसलिए जैसे-जैसे हम अपने आप में एकाग्र

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होते जाते है। वैसे-वैसे हमें उसकी झलक मिलना शुरू होती जाती है। अभी तक हमारा मन जो कि बाहरी सांसारिक बातों के राग रंग में मस्त रहकर अपना समय बर्बाद कर रहा था, वही अब हमारे अन्दर की चेतना (अचेतन मन) पर उठती हुई तरंगों को पकड़ने लगता है। (जिनको शब्द रूप में हमारा मस्तिष्क परिवर्तन कर देता है) जिसके कारण से अचेतन की चीज चेतन मन पर आकर प्रकट होने लगती है।

प्रारम्भ में जिस प्रकार बालक लिखना सीखते समय गलत और सही दोनों प्रकार से लिखता है लेकिन बाद में वह अपने विषय का कालीदास बन जाता हैं, ठीक उसी प्रकार इस अध्यात्म में भी शुरू-शुरू में साधक किसी बात का गलत अर्थ भी निकाल सकता है अथवा यह भी हो सकता है वह किसी बात का कोई अर्थ ही नहीं निकाल सके, लेकिन वर्षो एकाग्रता एवं लग्न पूर्वक की गई साधना के द्वारा, उन मानसिक संकेतों को जानने में साधक का मस्तिष्क सिद्धहस्तता प्राप्त कर ही लेता है। तब ही हमारी अन्तश्चेतना और हमारे मस्तिष्क में सामंजस्य बैठ पाता है। इसी महत्वपूर्ण अवस्था को दूसरे शब्दों में हम अचेतन के सूक्ष्म स्वरूप को मस्तिष्क के द्वारा स्थूल स्वरूप प्रदान करना कहते है। यह बात तो हुई अभी तक केवल अपने विचारों तक की; जब कि सिद्ध योगी तो अपने साधना की शक्ति के इसी स्वरूप के द्वारा अपने सामने की किसी स्थूल वस्तु में उसके छिपे हुये सूक्ष्म स्वरूप को भी देखते-देखते प्रगट कर देते है। जैसे भगवान बुद्ध ने आम की गुठली के ऊपर अपने हाथ घोने से ही उस गुठली में से पौधा निकाल दिया था। जब तक वह गुठली बुद्ध के सम्पर्क में नहीं आयी थी तब तक वह बीज स्वरूप ही तो थी। जिसको सभी उसके स्थूल स्वरूप में उसको जड़ ही तो समझ रहे थे लेकिन बुद्ध ने उस गुठली के स्थूल के पीछे सूक्ष्म स्वरूप को जानकर, अपनी तरफ से शक्ति देकर उसको समय से पहले पौधे के रूप में रूपान्तरित कर दिया था।

साधक की यही अवस्था उसकी साधना की सफलतम् सीढ़ी होती है। लेकिन इस अवस्था को प्राप्त करते करते तो शायद कई जन्म लेने पड़ते ही होंगे अथवा अपनी काया-कल्प करके अपनी उम्र बढ़ानी पड़ती होगी। और हमें यहीं केवल शुरू-शुरू की साधना पद्धिति पर विचार करना है, जो कठिन दिखते हुये भी काफी सरल है। आध्यात्म विषय के धुरन्धर वक्ता एवं विद्वान आचार्य रजनीश ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी इसी बात को समझाने के लिये दो एक उदाहरण बड़े सटीक और सुन्दर अपनी भाषण माला में दिये थे, जो अब उनकी पुस्तकों में हमें पढने को मिले हैं। उन्हें ही यहाँ मैं अन्य साधकों के हितार्थ लिख रहा हूँ।

एक फकीर अपने बहुत सारे शिष्यों में से चुनकर पच्चीस शिष्यों को लेकर जंगल में चला गया। बस्ती से दूर घनघोर जंगल में एक छोटे से मकान में उन सभी शिष्यों को ठहरा दिया। उनकी खाने-पीने की व्यवस्था उसने स्वयं ने की। उन सभी को एक साथ इकट्ठा करके उसने उन्हें बताया कि तुम सभी को इन कमरों में ही एक महीने तक रहना है। यहाँ रहने की एक शर्त भी है, वह यह है कि कोई भी शिष्य इस एक महीने के समय में एक भी शब्द नहीं बोलेगा। न तो जागते हुये और न ही सोते हुये, न प्रेम में, न क्रोध में, और तो और कोई अपने किसी इष्ट का भी नाम उच्चारण नहीं करेगा। मतलब कुल मिलाकर यह है कि मैं जिसके मुंह से एक भी शब्द सुन लूंगा उसे यहाँ से उसी समय निकाल दूंगा। इसलिये आप एक भी शब्द नहीं बोले चाहे आपके सामने साक्षात् मौत ही क्यों न आ जाये। आप सभी यहाँ साथ-साथ रहेंगे लेकिन आपको रहना अपने आप में प्रत्येक को अकेला ही हैं।

एक सप्ताह के बीतते-बीतते तो, उस फकीर ने आधे से ज्यादा शिष्यों को उनके मौन भंग हो जाने के कारण वहाँ से चलता कर दिया था, और महीने का अन्त आते-आते तो केवल वहाँ दो ही बचे थे, और तीसरा था वह स्वयं। अपने उन दोनों शिष्यों को लेकर वह फकीर जंगल से वापिस बस्ती में आ गया। ये दोनों सन्यासी बड़े भारी हैरान, परेशान थे, कि गुरूजी हमें वहां क्यों ले गये थे। तथा क्यों हमारी महीने भर तक जबान बन्द रखी थी। अब भी इन्होंने हमें कुछ भी नहीं बताया है। इतने के बावजूद भी ये इन्तजार ही करते रहे कि शायद गुरूजी अपने आप ही कुछ बतायेंगे।

कुछ दिन बीत जाने के पश्चात् इनको बड़ा अटपटा सा बस्ती के लोगों को देखकर लगने लगा। क्योंकि तमाम बस्ती के लोग गलती पर गलती किये जा रहे थे, उन्हें होश ही नहीं था। यदि कुछ थोड़ा बहुत होश आता भी था, तो वह भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तब जब उनके सामने उनके अपने कर्मों की गलती प्रगट हो जाती थी। फिर दुखी भी हो रहे थे, साथ ही अपने भाग्य को दोष भी दे रहे थे या अन्य कोई परमात्मा के प्रति कटु शब्दों का उच्चारण कर रहा था। सबसे ज्यादा ये दोनों सन्यासी इस बात से हैरान थे कि जिस कर्म के द्वारा ये लोग अभी थोड़ी देर पहले दुखी थे, वे फिर उसी कर्म को दोहराने को उद्यत् हो रहे थे। ये लोग कैसे पागल हैं ? और मजे की बात यह है कि सभी का यही हाल है। कहीं हमारे यहाँ से जाने के बाद यह पूरी की पूरी बस्ती पगला तो नहीं गयी है ? या महीने भर के मौन ने हमको ही तो कहीं पागल नहीं बना दिया है। जब यह बात इन दोनों के किसी भी प्रकार से समझ में नहीं आयी तब उन्होंने हारकर गुरूजी से पूछा। "गुरूजी, क्या इस बस्ती के लोगों ने शराब पी ली है या ये लोग किसी अन्य प्रकार के नशे में है जिसके कारण से बेवकूफी पर बेवकूफी करते ही जा रहे हैं। या हम मैं कुछ परिवर्तन हो गया। यह सारा का सारा माजरा क्या है। कुछ तो समझायें हमें, भगवन्" ? फकीर बोला-- "हाँ तुम ठीक कहते हो ये बस्ती के सभी लोग अपनी-अपनी इन्द्रियों के नशे में हैं। इस बस्ती के लोग ही नहीं, सारा का सारा संसार ही इसी प्रकार के मतिभ्रम लोगों से भरा पड़ा है। और तुम्हारे अन्दर भी कुछ न कुछ परिवर्तन हो ही गया है। जिसके कारण से तुम्हारा नशा अब कुछ हल्का हो गया है। इसलिये ही तुम्हें अपने में और उनमें फर्क दिखाई पड़ रहा है। अपनी याद करों, तीस दिन पहले तुम्हें कोई फर्क नजर नहीं आता था। लेकिन आज तुम्हें फर्क नजर आ रहा है। असल में, तीस दिन के मौन के सन्नाटे ने तुम्हारे मन की नींद को तोड़ दिया है, जबकि इससे पहले तुम भी उन्ही इन्द्रियों के सुख की नींद के नशों में बेहोश थे, और इन्ही की तरह की नींद में सोये पड़े थे। आज तुम्हें ऐसा नहीं लग रहा है कि ये सभी लोग इस तरह से अपने कार्य कलाप कर रहे हैं, जैसे ये तो नीद में हो और कोई शैतान इनसे ऊट पटाँग कार्य करवा रहा हो। क्योंकि अभी तो इनके ऊपर इन्द्रिय सुख का पर्दा पड़ा है। इसलिये ये तो अभी ऐसे ही कार्य करेंगे, इसमें कुछ भी आश्चर्य जनक नहीं है। उन तीस दिनों की साधना ने तुम्हारे भीतर होश की लौ जगा दी है; जिसके कारण तुम्हारा आन्तरिक ध्यान जागृत हो गया है। महीने भर पहले जो गया था जंगल से वही ही वापिस नहीं लौटा है, वहाँ गया तो था तुम्हारा जड़ शरीर, लेकिन अब वापिस आये हो तुम स्वयं चैतन्य होकर"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केवल इतना सा ही कार्य होता है, इन तथा कथित साधनाओं के द्वारा। हमारे ऊपर इन्द्रियों का जो जाल फैला हुआ है उनसे हम अपना पीछा छुड़ा लेते हैं, और हम अपने स्वयं की गहराई में उतर जाते हैं। जहाँ से हम अपने भीतर के खजाने की झलक पा लेते हैं। जहाँ अभी तक हम अपने शरीर को ही सारा कुछ मान रहे थे, जबकि मणि तो हमारे भीतर और भीतर छिपी पड़ी है। इसमें जरा भी संशय नहीं है। यहाँ इस सन्दर्भ में एक बात और गहरे से समझ लेनी चाहिए कि किसी एक प्रकार के उदाहरण को ही या किसी एक प्रकार की विधि को ही इस सम्पूर्ण साधना का एकमात्र मार्ग नहीं मान लेना चाहिये। जबकि सत्य तो यह है कि ऐसा कोई भी कार्य जो हमारे मन के अँधेरे को मिटाए, वह हमारे लिए साधना का ही मार्ग सिद्ध होता है। इसलिए ही कोई यहाँ मौन रहकर चैतन्य हो जाता है तो कोई साधक भक्ति के गीत मीरा की तरह गाकर पूर्णता को प्राप्त हो जाता है। भगवान बुद्ध की तरह भूखे प्यासे रहकर कठिन तपश्चर्या करना भी इसी साधना का अंग है। जहाँ तुलसी का "राम" के नाम पर आधार बना कर अपनी साधना करना ठीक है, वहीं वाल्मिकि की तरह उस राम के नाम को उल्टा करके "मरा" कहना भी ठीक ही है। हम अपने जीवन के किसी भी छोर से तथा किसी भी स्तर से अपनी साधना शुरू करें, हमारे लिये वहीं से रास्ता बनता जाएगा। बालक ध्रुव अगर सात साल की उम्र में साधना शुरू करता है तो वह भी सफल होता है और भक्त अजामिल यदि अपने द्वार पर मृत्यु को दस्तक देते समय अपनी साधना के प्रति सम्पूर्ण भाव सहित समर्पित होते हैं तो उनका वह अकेला नारायण शब्द ही उनको भवसागर से पार करने वाली यात्रा का आधार बन जाता है।

इसलिए यह अच्छी तरह से समझ लें कि हमारा ऐसा कोई भी कर्म जो हमारा होश बढ़ाए, हमारी सच्ची आहुति का आधार बने, हमें अपनी बुद्धि और मन के पार के दर्शन करने में हमारी मदद करे, वही हमारी साधना का मार्ग बन जाता है।

एक देश का सम्राट अपने बूढ़ा पुत्र को तलवार चलाना सिखाना चाहता था। इसलिए उसने अपने सेनापति को बुलाकर कहा कि "आप हमारी सल्तनत में सर्वश्रेष्ठ तलवार बाज हैं। इसलिये राजकुमार को अपने सान्निध्य में तलवार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चलाना सिखाएं।" सेनापति ने झुककर कोर्निश बजाई और क्षमा मांगते हुये कहने लगा "महाराज आपकी आज्ञा शिरोधार्य है और यह मेरा सौभाग्य है कि मेरे द्वारा यह नेक काम अपनी पूर्णता को प्राप्त हो। लेकिन महाराज मेरी एक प्रार्थना है, अगर आप इजाजत दें तो आपके सामने उसे कहूँ।" "बोलो·····कहो, क्या बात है।" महाराज ने कहा। इसके बाद सेनापति ने फिर से कहना शुरू किया "हुजूर, जिनके पास रहकर मैं स्वयं तलवार-बाजी सीखा हूँ और उसी तलवार की सिद्ध हस्तता के कारण आपने मुझे यह सेनापति के पद का सम्मान दे रखा है। आज भी वे मेरे परमात्मा तुल्य गुरू इस दुनियाँ में मौजूद हैं और सबसे आसान बात यह है कि वे हुजूर के साम्राज्य में ही रहते हैं। लेकिन उनके द्वारा राजकुमार जी को तलवार चलाना सिखाने में बस एक ही कठिनाई है, कि वे अपने आश्रम के बाहर किसी को भी तलवार चलाने की कला सिखाने नहीं जाते हैं। इसलिये सीखने वालों को उनके आश्रम में ही रहना पड़ता है।"

काफी सोच विचार करने के बाद सम्राट ने राजकुमार को वहीं उन गुरूजी के आश्रम में रहने की अनुमति दे दी। जब राजकुमार को आश्रम में रहते-रहते दो मास व्यतीत हो गये तो एक दिन वह सम्राट शिकार से लौटते हुए उस आश्रम के पास से गुजर रहा था। तभी उसके अंगरक्षकों ने महाराज को सूचित किया कि हमारे राजकुमार इसी आश्रम में तलवार विद्या सीख रहे हैं। इतना सुनकर सम्राट वहीं पर रुक गया, और घोड़े से उतरकर वहाँ आश्रम में बाबा से मिला, वृद्ध गुरू ने राजा का स्वागत किया, राजा भी वहाँ के शान्त एवं सादगी से भरे वातावरण से बहुत ही प्रभावित हुआ। बातचीत के दौरान राजा ने अपने पुत्र के बारे में जानने के लिये बाबा से पूछा कि "आपका शिष्य अपनी विद्या के अभ्यास में कैसा चल रहा है; वह अब तक कितना सीख गया है तथा अभी और कितना समय लगेगा?" इसके उत्तर में बाबा ने कहा, "राजन्—तलवार चलाना सीखना कोई गणित के सवाल नहीं है, जिसमें मैं आपको यह बता दूँ कि अब तक मैंने कोर्स तो पिला दिये हैं, घटाना सिखा रहा हूँ और गुणा करना बाकी है, आगे सिखाऊँगा। विकसित तलवार बाजी सीखना तो स्वयं में एक घटना है। इसलिये मेरी एक सुझाव-सिद्ध आपसे यही है कि मुझसे यह प्रश्न तो भविष्य में आप पूछें ही नहीं, क्योंकि इसका तो स्वयं मुझे भी पता नहीं है। हाँ एक बात मैं अपनी तरफ से अवश्य बता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देना चाहता हूँ कि मेरा यह आश्रम आपके राज्य की सीमा के अन्दर है, यहाँ रहकर मैं आनन्दपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। इसके अलावा मैं आपके न्याय-प्रिय शासन से भी बहुत प्रभावित हूँ। तमाम प्रजा भी अमन चैन से है। इसलिये राजकुमार जी जल्दी से जल्दी और अच्छी से अच्छी तलवार चलाना वे यहाँ सीखे ऐसी मेरी हार्दिक इच्छा है। ऐसा करने के बाद मैं अपने आपको राज्य के ऋण से मुक्त हुआ ही मानूगां। अन्त में 'मैं' बस इतना को कहना चाहता हूँ कि राजकुमार होनहार है, इसलिए सीख ही जावेगा। इससे ज्यादा तो मैं स्वयं भी नहीं जानता कि वह कब तक सीख पायेगा।"

राजा इसके बाद एक भी शब्द नहीं बोल सका, गुरुजी के उसने चरण छूये और चुपचाप अपने राजमहल लौट आया। लेकिन राजा के मुख मण्डल पर न जाने क्यों सन्तुष्टि की एक अलौकिक आभा फैल गयी थी।

उधर जब कुछ दिन और व्यतीत हो गये तो एक दिन गुरूजी ने बिना कुछ भी कहे सुने लकड़ी की तलवार से राजकुमार पर प्रहार करने शुरू कर दिये राज-कुमार को तो कुछ पता ही नहीं था, इस प्रकार से भी कहीं कोई सिखाता है। और गुरूजी थे कि बस मारे ही जा रहे थे। जगह-जगह से शरीर लहू-लुहान हो गया। करीब पन्द्रह मिनट बाद गुरूजी ने प्रहार करना बन्द कर दिया। लेकिन बोले अब भी कुछ नहीं। राजकुमार तो बिल्कुल बैचेन ही हो गया था कि यह क्या बला है? एक हफ्ते में जाकर कहीं उसका शरीर स्वस्थ हुआ।

उस दिन के प्रहारों के बाद अन्य कोई बात आज तक राजकुमार के सामने नहीं आयी। जैसा पहले चल रहा था, सामान्यतया ठीक वैसी ही दिनचर्या अब भी थी। एक बार तो राजकुमार ने यह भी सोचा कि उस दिन गुरूजी को तलवार चलाने का कहीं दौरा तो नहीं पड़ गया था। उस दौरे की अवस्था में इन्होंने मुझको मारा है और अब इन्हें उसकी याद भी न हो। लेकिन चमत्कार उसी रात को फिर हुआ, जब राजकुमार सोने ही वाला था। उसे कुछ आहट सी हुई उसकी जब आँख खुली तो देखता क्या है, कि बिजली की सी फुर्ती से गुरूजी हाथ में वही लकड़ी की तलवार लिये उस पर प्रहार करने ही वाले हैं। इससे पहले कि गुरूजी उस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पर प्रहार करते, राजकुमार बिजली की सी ही तेजी से करवट बदलकर उनके वार को बचा गया, लेकिन निहत्था कब तक बचाता; आखिर मार खानी ही पड़ी। पिछली बार की तरह ही इस दिन भी कार्यक्रम उतने ही समय चला, लेकिन इस बार राजकुमार की तत्परता के कारण चोट सिर्फ हाथों पर ही आयी थी; बाकी शरीर बच गया था। तीसरी बार इस प्रकार की घटना पर तो राजकुमार ने अपने आप बिना किसी के कहे सुने आश्रम में लटकी हुई दूसरी लकड़ी की तलवार झपट कर अपने हाथ में ले ली और अगले क्षणों में तो वह अपने बचाव की जी तोड़ कोशिश करने में जुटा हुआ था।

अब तो करीब-करीब रोजाना ऐसा ही होता था। लेकिन समय कभी निश्चित नहीं होता था, कभी सुबह, कभी रात को और कभी-कभी तो खाना खाते समय भी, इसलिए राजकुमार अब अपने साथ हर समय तलवार रखने लगा था। पता नहीं कब इसकी जरूरत पड़ जावे। उठते-बैठते, सोते-जागते' खाते-पीते अब तो राजकुमार का ध्यान हमेशा गुरूजी की तलवार की तरफ ही रहता था, अथवा गुरूजी कहाँ हैं तथा गुरूजी क्या कर रहे हैं उसका ध्यान हमेशा इसी बात पर लगा रहता।

महीने भर इस तरह से लगातार गुरूजी की तरफ ध्यान रखते-रखते तो वह स्वयं अपना भी ध्यान भूलने लगा था, क्योंकि अब तो उसकी हालत यह हो गयी थी कि वह कितनी भी नींद में सोया होता और आश्रम में यदि एक कंकड़ भी कहीं से आकर गिरता तो भी उसका हाथ अपनी तलवार की मूँठ पर चला जाता था। उसकी इस मानसिक साधना का नतीजा जो होना था वही राजकुमार के साथ भी हुआ। गुरूजी के तलवारों के प्रहारों को वह अब अपने शरीर पर नहीं पड़ने देता बल्कि उनके तमाम प्रहारों को वह तलवार पर ही झेल जाता था। इसी प्रकार थोड़े दिन और बीतने के पश्चात राजकुमार अपना बचाव करने में तो निपुण हो ही गया था साथ ही उसके अन्दर अब अपने आत्म विश्वास की ज्वाला भी जल चुकी थी। जिसकी वजह से वह अति चौकन्ना होकर रहना भी सीख गया था। यानि, उसका मस्तिष्क अब सदैव सक्रिय रहता था। मानसिक बेहोशी का तो कहीं दूर-दूर तक अब पता नहीं था। आलस्य जैसा कोई प्रभाव तो उसमें

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बचा ही नहीं था।

एक दिन राजकुँवर कमरे के अन्दर बैठा हुआ गेहूँ से कंकड़ बीन रहा था, अचानक उसके दिमाग में एक विचार आया कि रोजाना गुरूजी मेरे ऊपर जाने में या अनजाने में प्रहार करते रहते हैं, क्यों न किसी दिन चुपचाप मैं इनके ऊपर प्रहार करके देखूँ ? राजकुँवर अभी अपने मन में इतना सोच ही रहा था कि बाहर से गुरूजी की आवाज आयी **"बेटा मेरे ऊपर तलवार से वार तो कर लेना जब तेरा जी चाहे लेकिन तलवार जरा धीरे से चलाना, क्योंकि मैं एक बुद्दा आदमी हूं"**। और इतना कहकर गुरूजी चुप हो गये। बाहर से गुरूजी द्वारा इस प्रकार जवाब दिये जाने से राजकुँवर तो अवाक् ही रह गया, क्योंकि वह सोचने लगा कि मैंने इनसे तो अभी कुछ कहा भी नहीं है। मैं तो अभी अपने मन में सोच ही रहा था और इन्होंने तो इसका जवाब भी मुझे दे दिया। ये कैसा चमत्कार ! उसी क्षण वह गुरूजी के प्रति पहली बार श्रद्धा से भर उठा, बाहर आकर साष्टांग दण्डवत् की और वह उनसे पूछने लगा कि "आपने मेरे मन की बात कैसे जान ली, कृपया मुझे भी कुछ समझाएँ ?" गुरूजी बोले "तलवार चलाना तो तुम्हारा सेनापति भी अच्छी तरह से जानता है लेकिन उसने तुम्हें मेरे पास भेजा ही इसलिए है कि जितनी भी तरह के प्रहार करने करने के तरीके हैं यहाँ तुम उन्हें भी सीख लो, और उन्हें केवल मैं ही सिखा सकता हूँ, क्योंकि मेरा उद्देश्य केवल तलवार चलाना सिखाना नहीं है। **बल्कि मैं तो तलवार के द्वारा व्यक्ति में होश जगाता हूं।** ध्यान रखना ! इस होश को केवल मैं ही सिखा सकता हूँ क्योंकि मैं स्वयं भी होश में ही रहता हूँ। तुम देखते हो मैं अपनी सुरक्षा के लिये तुम्हारे सेनापति या तुम्हारे पिता की तरह से अपने पास किसी अंगरक्षक को नहीं रखता हूँ। क्या इस दुनियां में मेरा कोई शत्रु नहीं है। इस राज्य का नहीं तो दूसरे राज्य का तो होगा जो मेरा यश जानता होगा। अब चूंकि मेरा होश जागृत है इसलिए ही दूसरों के मन में मेरे प्रति द्वेष से भरे उठते हुये विचारों को मैं उसी समय जान जाता हूँ और अपनी सुरक्षा के लिये दूसरों के मेरे ऊपर आक्रमण करने से पहले ही मैं अपनी तरफ से तैयार हो जाता हूँ। क्योंकि **कोई भी कर्म हमारे द्वारा स्थूल रूप से कार्य रूप में क्रियान्वित होने से पूर्व हमारे मानसिक स्तर पर सम्पन्न होता** है जैसे तुम हाथों से तो कंकड़ बीन रहे थे जबकि मन के द्वारा मेरे ऊपर आक्रमण की सोच रहे थे। बस तुम्हारे मन से उठते हुए विचारों की तरंगों को मेरे जागृत मन ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ न पकड़ लिया, इसलिये ध्यान रखना, यदि तुमने अपना होश जगाकर सिद्ध नहीं कर लिया तो तलवार से तो अपने हाथ धो ही बैठोगे, अपने राज्य पर भी अपना अधिकार नहीं रख सकोगे।"

इस कथा द्वारा हमें जो सन्देश मिलता है वह केवल इतना ही है कि जैसे ही हमारा स्वयं का होश जागृत होता है हमारे दूसरों के साथ जो सम्बन्ध है उनकी यथार्थता खुल कर सामने आ जाती है, कि कौन हमारा मित्र होकर भी शत्रु है तथा कौन ऐसा जो हमें, शत्रु दिखते हुये भी हमारे प्रति प्रेम में है। अपने होश को जगाने के पश्चात् ही हम अपने सम्बन्धियों के सम्बन्धों के स्त्रोतों पर पहुंच जाते हैं। कि फलाँ व्यक्ति के द्वारा हमारे प्रति इस प्रकार का निकृष्ट कार्य क्यों किया जाता है। जब हम इस प्रकार सम्बन्धों के कारणों तक पहुँच जाते हैं, तब हमें अपने आप ही इस दुनिया के आपसी रिस्तों के बीच घूमता हुआ चक्र समझ में आ जाता है। हम देखते हैं इस जीवन की अनजान सी डगर में अनायास ही दो पथिक मिलते हैं, और जिन्दगी भर वे फिर एक दूसरे से जुदा नहीं होते हैं, जबकि दो सगे भाई जिनका सम्बन्ध अपने माता-पिता के खून से बँधा होता है उनमें आपस में इतना भी प्यार नहीं होता जितना कि वे अपने पालतू कुत्ते से प्यार करते हैं। वे दोनों सगे भाई होते हुये भी एक दूसरे का विश्वास नहीं करते जबकि जिन्दगी के सफर में वे एक बिल्कुल अनजान अजनबी को अपनी जिन्दगी की डोर थमा देते हैं क्योंकि **स्थाई सम्बन्ध वह नहीं होते जिन्हें हम अपनी माता के गर्भ से लाते है, जबकि इसके विपरीत जिन्दगी में सम्बन्ध के पौधों को हमें प्रेम के द्वारा सींच कर ही वृक्ष बनाना पड़ता है।** इसी संदर्भ में यह भी बात ध्यान रखनी चाहिये कि हम प्रेम भी वहीं कर सकते हैं; जहाँ हमारे प्रति अनुकूल प्रेम की धारा हमारी तरफ बह रही हो। तभी हम प्रेम के मामले में भटकन से बच सकेंगे अन्यथा बेहोशी में किया गया प्रेम भी व्यर्थ ही हो जावेगा। इसलिये ध्यान रखें सफल प्रेमी बनने के लिये दूसरे की मानसिकता को हम में पढ़ने की क्षमता होनी चाहिये। यदि बेहोश आदमी इस प्रेम के रास्ते पर आ गया तो ध्यान रखना वह प्रेम तो नहीं लेकिन प्रेम के नाम पर धोखा अवश्य ही पा लेगा। प्रेम का रास्ता तो बहुत ही चैतन्य पुरुषों का है; क्योंकि प्रेम में दिमाग की तो चलती ही नहीं है। प्रेम में दो और दो पाँच हो जाते हैं जबकि दिमाग तो कहता है कि नहीं दो और दो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चार ही होते हैं। इसलिये प्रेम मे तो बहुत ही हौसले की जरूरत होती है और हिम्मत दिमाग में नहीं बल्कि वह तो दिल के स्वामी मन में होती है। इसलिये मन के भीतर होश की लौ जगाये बिना तो हम प्रेम में उतर ही नहीं सकते हैं। **तो ध्यान रखना जब बेहोश व्यक्ति प्रेम करने के काबिल पात्र ही नहीं होता तब वह भक्त किस प्रकार से बन सकेगा और बिना भक्ति के हमारी प्रार्थना के द्वार हमें किस प्रकार से खुल सकेंगे।**

अगर वास्तव में हमें अपनी प्रार्थना में उतरना है तो हमें अपनी जागृति जगानी ही होगी। इस सीढ़ी को पार किये बिना हमारा आध्यात्म के क्षेत्र में प्रवेश असंभव ही है। आपने ऐसे बीमारों के बारे में सुना होगा जो दिन को ठीक स्वस्थ आदमी की तरह से होते हैं, लेकिन रात्रि में वे अपनी नींद में उठकर घर से बाहर निकल कर इधर उधर चल भी आते हैं। सुबह उठ कर उन्हें कुछ भी याद नहीं रहता, ऐसे व्यक्ति को कितना भी याद दिलाओ और कहो कि रात ग्यारह बजे तुम मेरे पास आये थे और मुझसे यह बात कही थी लेकिन इनको कुछ भी याद नहीं रहता यह एक प्रकार की मस्तिष्क की बेहोशी है। रात को अपने घर में सोते हुये बालक को जगाकर माँ दूध से भरा हुआ गिलास उसे पिला देती है सुबह उठकर वही बालक माँ से कहता है कि रात को हमें दूध क्यों नहीं पिलाया था? ये भी बेहोशी ही है। कुछ बुद्धि के स्तर की और कुछ मानसिक स्तर की। हम क्लास में होते हैं और हमारा मन कहीं और फुटबाल खेल रहा होता है। रोजाना ही हम इस प्रकार के अनन्य अनुभवों से गुजरते हैं। जिनमें हमारी आँखों के सामने घटना होकर गुजर भी जाती है लेकिन हमारी आँखे खुली रहते हुये भी हम उस घटना को नहीं देख पाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि खास बात तो यह है कि हम कितनी तन्मयता के साथ अपनी साधना में उतरते हैं। इसके विपरीत **कुछ साधक अपनी तन्मयता पर इतना ध्यान नहीं देते जितना कि उसके मार्ग पर जिसके कारण उनको हमेशा असफलता ही हाथ लगती है। इसलिये ध्यान रखें बिना अपने मन को एकाग्र किये हम भले ही महर्षि पतंजलि के मार्ग को ही क्यों न अपना लें हम अपना समय ही बर्बाद करेंगे, हमारे हाथ कुछ भी नहीं लगने वाला है।**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जबकि इस दुनिया में सबसे सीधा और क्रमबद्ध आध्यात्म की साधना के लिये यदि कोई मार्ग है तो वह उनका अष्टांगी मार्ग ही है। हम सीधे राजमार्ग का राजयोग को अपना कर भी बिना होश जगाये अपनी यात्रा की मंजिल पर नहीं पहुँच पाते हैं जबकि बाल्मीकि उल्टे मार्ग को अपना कर भी तत्व ज्ञानी हो जाते हैं। इसलिये हमेशा ध्यान रखें कि **इस साधना को हम कौन से मार्ग द्वारा करेंगे यह बात बहुत ही गौण है, इसलिये इस भ्रान्ति को तो अपने मन में स्थान बनाने ही मत दें** । कुछ लोग कहते हैं कि जैन धर्म बहुत ही पहुँचा हुआ धर्म है या बौद्ध धर्म में बड़ी विलक्षणता है अथवा आर्य समाजी ही तात्विकी होते हैं; किसी अन्य दूसरे के लिये मुसलमानों के फकीर सिद्ध होते हैं अथवा वे किसी विशेष मत के मानने वाले होते हैं और किसी अन्य के नहीं, ये तमाम बातें मेरे देखते फिजूल की हैं, क्योंकि यदि हममें हौसला है तो हम अपने हाथ का लाठी से डरे हुये इंसान की बंदूक को भी गिरा सकते हैं। क्योंकि हथियार थोड़े ही लड़ता है लड़ती तो हमारी हौसले की भावना है। इसलिये तो किसी ने कहा है कि **"जात-पात पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।"** इस दुनियां में जितने भी अध्यात्म मार्ग के शिक्षक पैदा हुये हैं सभी के सभी महान हैं। उनमें किसी की भी साधना पद्धति में किसी भी प्रकार की कमी नहीं है। क्योंकि जिस किसी ने होश पूर्वक उस परम् सत्ता की साधना के मार्ग में अपना **समर्पण** * कर दिया वही इस भवसागर से पार हो गया।

समर्पण—यहाँ इस समर्पण शब्द का अर्थ ठीक से समझ लें समर्पण का अर्थ है "समत्व भाव सहित अर्पण मतलब जिसमें कर्ता का भी भाव नहीं बचा, जबकि अर्पण में कर्ता मौजूद रहता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ८

साधन से सिद्धियों की प्राप्ति

मुझे एक ग्वाले की कहानी याद आ रही है जिसके मन में सदा एक ही विचार उठा करता था कि मैंने इस दुनियाँ में जन्म क्या केवल इसलिये ही लिया है, कि मैं रोजाना सुबह उठकर गायों को जंगल में ले जाऊं और शाम को घर वापिस पहुँच कर रोटी खाकर सो जाऊं। सुबह उठकर फिर पिछले दिन की ही तरह का काम; न कहीं जाना और न कहीं आना। यह भी कोई अर्थ हुआ इस जिन्दगी का ? इन तथ्य पूर्ण बातों के कारण वह अपने मन में बड़ा ही बेचैन रहा करता था। जितन-जितना वह इन प्रश्नों का उत्तर खोजता उतना-उतना ही उसका मन बेचैनी में डूबता जाता था, दिन ब दिन वह विक्षिप्त सा होता जा रहा था। उसे कोई राह ही नहीं सूझ रही थी कि वह इस भूल भुलैया से किस प्रकार से पार हो।

एक दिन वह इसी तरह जानवरों को लेकर इधर से उधर निरुउद्देश्य सा घूम रहा था, तभी वहाँ उसे एक गेरुआ वस्त्र धारी एक बाबाजी गुजरता हुआ मिला, उस ग्वाले ने उस बाबाजी को रोककर बड़ी नम्रता पूर्वक कहा, "आप तो भगवान के आदमी है मुझे भी उससे मिलने का कोई रास्ता बताओ, मैं बहुत परेशान हूँ," इतना कहकर वह ग्वाला उस बाबजी के पैरों में गिर गया। वह अनपढ़ तो था ही साथ ही भोला भी था। बाबाजी ने देखा कि परमात्मा को प्राप्त करने के लिये इसमें लौ तो खूब जल रही है। लेकिन जब मुझे ही आज तक कहीं नहीं मिला तो उसे क्या बताऊँ ? तभी उस बाबाजी की निगाह, ग्वाले के जानवरों में उसी दिन की ब्याही गाय पर पड़ी जिसका बछड़ा दूध पीने के लिये खड़े होने की कोशिश में बार-बार गिर रहा था, बाबा बोला "अच्छा उठ मैं रास्ता तो बता दूँगा परन्तु मुझे गुरू दक्षिणा में क्या देगा" ? इसको सुनकर ग्वाले को तो मानो मन की मुराद ही मिल गयी तुरन्त ही बोला—"आप आज्ञा करें मैं आपको क्या दूँ"।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"अच्छा यह बात है तो, सुन मैं, तुझे गुरू मन्त्र देता हूँ उसे तुझे अपने मन में आराम से बैठकर भजना होगा। लेकिन मेरे लिये इस गाय और बछड़े को तुझे गुरू-दक्षिणा के रूप में देना होगा। सोच ले नहीं तो मैं चला"। उस बाबाजी ने उस पर इस तरह से फंसाने के लिये एक पाँसा फेंका। ग्वाला बोला "आप इस एक गाय की क्या चिन्ता करते हैं इन सभी को हाँक कर ले जाईये, लेकिन मुझे गुरू मन्त्र तो दीजिये"। "अच्छा ला, अपना कान इधर ला"। इस प्रकार से उस बाबा ने उस ग्वाले के कान में गुरू मन्त्र के रूप में "गोपाल" कहा और शीघ्र ही उस गाय और बछड़े को लेकर वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया।

वह ग्वाला उस गुरू मन्त्र को लेकर ऐसा समझ रहा था कि अब तो वह निहाल ही हो गया है इसी प्रफुल्लता के दौर में थोड़ी देर बाद ही वह अपने उस गुरू मन्त्र को भूल गया। उसने इधर-उधर नजर दौड़ाई लेकिन गुरूजी का तो कहीं पता ही नहीं था। उसने अपनी खोपड़ी पर जोर डाला, तब बहुत देर याद करने के पश्चात् उसे वह गुरू मन्त्र याद हो आया लेकिन गोपाल के रूप में नहीं वह भोपाल को तो भूल ही गया था अब तो उसे भोपाल ही याद रहा। इस डर से कि कहीं अब इसे फिर से नहीं भूल जाउँ इसलिये वह उसी समय बिना कुछ सोचे विचारे तत्क्षण ही एक कूऐ की नेहची (जिसमें कूऐ से पानी का चरस खीचतें समय बैल नीचे की ओर जाते हैं) में कूऐ की तरफ मुँह करके दीवार का सहारा लेकर आँखे बन्द करके बैठ गया, और भोपाल, भोपाल, भोपाल ही भजने लगा। वह इस भोपाल शब्द के साथ इतना तन्मय हो गया था कि उसे अपने खाने, पीने, सोने, उठने बैठने तथा कहीं आने का भी होश नहीं रहा। इस प्रकार जब उसे भोपाल भजते-भजते तीन दिन व्यतीत हो गये तब कहानी अपने कथानक में कहती है कि उसकी तपस्या से प्रभावित होकर भगवान विष्णु ने अपनी पत्नी लक्ष्मी जी से कहा कि "चलो लक्ष्मी जी तुम्हें अपना भगत दिखायें" वे दोनों वहाँ उस कूऐ के पास आये भगवान विष्णु तो कूऐ पर बाहर की ओर पैर लटका कर बैठ गये और उन्होंने लक्ष्मी जी से कहा कि "जाओ नेहची में उधर की ओर बैठा है वहाँ देख आओं"। लक्ष्मी जी उधर गयी तो क्या देखती है कि एक गवाँर सा आदमी आलथी-पालथी मारे हुऐ तथा आँखें बन्द किये हुऐ दीवार का सिराहना लगाऐ हुऐ बैठा है। उन्होंने ऊंची आवाज में पुकार कर कहा कि "कौन है रे, क्या कर रहा है"। आँखे बन्द किये ही ग्वाले ने तुरन्त जबाब दिया "भजन कर रहो हूँ क्यों का बात है"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लक्ष्मी जी ने फिर कहा "किसका" प्रत्युत्तर" में ग्वाले ने कहा "तेरे खसम का" फिर वे पूछने लगी "वो कहाँ हैं"। इस पर तड़ाक से ग्वाले ने जबाब दिया कि 'होगो कहीं कूआ पोखर में, मैं का बाकै पीछे-पीछे डोलूँ हूँ।" लक्ष्मी जी उसी समय भगवान के पास लौट आयी और भगवान से कहने लगी "भगवन् इसकी तो वाणी सिद्ध हो गयी है मैंने इससे दो प्रश्न किये इसने दोनों का ही यथार्थ उत्तर दिया है, जब मैंने पूछा कि वह किसका भजन कर रहा है तो इसने कहा कि वह मेरे पति का भजन कर रहा है और जब मैंने यह पूछा कि वे कहां हैं तब उसने कहा कि होगा कहीं कूआ पोखर में, और मैं भगवान को देख रही हूं कि आप बैठे तो कूआ पर ही हैं लेकिन आपके पांव इस कूऐ के पानी से बनी इस पोखर में ही लटक रहे हैं"।

मेरा कहने का तात्पर्य इस विषय में केवल इतना सा ही है कि यदि हम अपनी श्रद्धा, लग्न और अपने होश को उस अज्ञात के लिये लगा दें तो घटना घट कर ही रहेगी, यह सिद्धांततः बिलकुल सत्य ही है, इसमें लेश मात्र भी संशय की आवश्यकता नहीं हैं। लेकिन प्रयोगात्मक रूप से इस साधना में उतरते समय हमें जिन कठिन परेशानियों का सामना करना पड़ता है उनको शब्दों का प्रयोग कर आपके सामने रखना बड़ा ही कठिन कार्य है। तथा इसके साथ ही अपनी साधना के दौरान हुऐ इन अनुभवों को ठीक-ठीक शब्द प्रदान नहीं कर पा सकने के कारण ही लोग इन अनुभवों को गुप्त ही रखना ठीक समझते हैं। क्योंकि यदि कोई बात जिस प्रकार से कहनी चाही है और यदि कहीं भाषा की गड़बड़ी के कारण उसका अर्थ बदल गया तो बात गलत होकर उलट सकती है। जिसकी जिम्मेदारी फिर इस कहने वाले के ऊपर ही तो आती है। इसलिये इस विषय में अनुभव कर लेने वाले बहुत होकर भी शिक्षकों की संख्या समाज में हमेशा नगण्य सी ही रहती है।

जैसे यदि हम इस ग्वाले से ही पूछें कि उन तीन दिनों दौरान उस पर क्या-क्या बीती तथा उसने कितनी-कितनी परेशानियों का सामना किया, तो वह गवाँर बिना पढ़ा लिखा किस प्रकार से उन अनुभवों को अपने शब्दों में पिरोयेगा। उसकी तो ठीक वैसी ही हालत हो जावेगी जिस प्रकार उस गूंगे व्यक्ति की हो जाती है;

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिसके मुँह में आपने बतासा रख दिया है, और हम उससे पूछ रहे हैं कि बताओं इसका स्वाद कैसा है। अब वह बेचारा गूँगा उस बतासे की मिठास का वर्णन किस प्रकार करे। इसके अलावा उन अनुभवों को गुप्त या रहस्य में रखने का एक कारण और भी है। वह यह है कि कुछ बातें ऐसी होती हैं जो प्रत्येक व्यक्ति पर एक जैसी ही घटित नहीं होती है जैसे माना कि दो साधकों को एक ही ढंग से साधना करने से एक ही तरह के अनुभव हुऐ। लेकिन उन अनुभवों के बाद पहला तो ऐसा हो सकता है जो प्राप्तियाँ उसे मिली हैं उन्हें परमात्मा का प्रसाद समझ कर आत्म सात कर लें; जबकि दूसरा उसको अपनी तपस्या का फल समझकर अपनी सात्विकी वृत्ति के कारण उनको बाँटने में लग जाऐ, माना कि बाँटना बुरा नहीं है लेकिन बाँटने की क्रिया होने में वहाँ कर्ता मौजूद रहता है जिसके कारण से उस साधक में उसके मन में अहम् की वृद्धि हो जाती है जो उसकी आगे की साधना में व्यवधान खड़े कर देता है।

फिर भी मैं स्वयं इन सब बातों को जानते हुऐ भी इस पुस्तक में उन्हीं बातों को यहाँ तथा आगे भी लिखने को उद्यत हो रहा हूँ जो मुझे अपने भले को सोचते हुए नहीं लिखनी चाहिये। क्योंकि इस साधना की गूढ़ तथा रहस्य की बातों को इस जगत में प्रगट कर देने के कारण अपने को मिली हुई शक्तियों के समाप्त होने की सम्भावना प्रायः हो जाती हैं, लेकिन चूंकि मैं गृहस्थ धर्म में रहकर इस समाज से जुड़ा हुआ हूँ, इसलिये न जाने कितने लोगों से मेरे मधुर या कटु सम्बन्ध होगें ही, उन सम्बन्धों का सामना करते समय अपने पास की उपलब्ध सामग्री का मैं जो भी उपयोग करूंगा या मुझे परिस्थितिवश करना पड़ सकता है। वह हर हालत में कालान्तर में दुरुपयोग ही सिद्ध होगा जिसके कारण मेरे संस्कारों की कड़िया घटने की बजाय और ज्यादा ही बढ़ेगी तथा इन नवगठित संस्कारों के वशीभूत होकर न जाने और कितने जन्मों तक मेरी साधना की अन्तिम घड़ियाँ आगे खिसक जावेंगी। इसी बात का ख्याल कर के ही सिद्धियों के खाते में मैंने कंगाल हो जाने की ठानी हैं, या इनके चंगुल से मुक्त रह जाने का यह मैंने खूब सोच विचार करके एक सुगम सा रास्ता निकाला है। यदि भूल बश मेरी यह धारणा गलत हो तब भी मैं इतना ही सोचूंगा कि पिछले जन्मों के या अन्य दूसरे दूसरे सिंचित संस्कारों के कारण ही मुझे यह भोग भोगना पड़ रहा है जिसके

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कारण से यह पुस्तक मेरे द्वारा लिखी जा रहीं है।

मई सन् १३८१ के गुरू के दिनों में मैं स्वयं इसी प्रकार की मिली-जुली सी साधना के अन्दर तीन दिनों के लिये रहा था। गिनती के उन तीन दिनों में मेरे मन पर, मेरे शरीर पर तथा मस्तिष्क पर क्या-क्या गुजरी उन सबको शब्दों का प्रयोग करके आपके सामने रखने की यहां मैं कोशिश कर रहा हूँ। तथा परमात्मा की कृपा से मैं सोचता हूँ कि उन दिनों की साधना का वर्णन करने में मैं येन केन प्रकारेण समर्थ हो ही जाऊंगा यदि फिर भी कोई कमी रह जाऐ तो मैं अपने आपको उस परम सत्ता का अपराधी समझ कर क्षमा प्रार्थी हूँ।

उन दिनों जब भी घर पर सुबह ध्यान पर बैठता था तो अपनी दुकान को समय से खोलने की जल्दी की वजह से, मन में ध्यान करते समय वह दुकान बाधा बन कर मेरे समक्ष उपस्थित हो जाया करती थी। इस कारण से मेरे मन में हमेशा यह आकांक्षा बनी ही रहती थी कि मैं लगातार काफी समय तक बिना विघ्न बाधा के ध्यान में ही बैठा रहूँ। इसी आकांक्षा की पूर्ति के लिये जब मैंने अपने मन में विचार किया तो यह पाया कि घर पर तो वह क्रिया क्रियान्वित होना असम्भव नहीं तो मुश्किल तो है ही। इसलिये इसकी पूर्ति के लिऐ मैंने अपने विचार में यह तय किया कि किसी इस प्रकार के स्थान पर साधना में बैठना उचित होगा जहां पर एकांत तो हो ही तथा वहां किसी अन्य की दखलन्दाजी भी नहीं हो, जैसे कि मैं वहां क्या कर रहा हूँ या मैं वह सब क्यों कर रहा हूँ। इन बातों को तय करते हुऐ मैंने अपने भीतर के विचारों में कुछ शंकाओं को भी उपजते हुऐ पाया जिनमें दो मुख्य थी, प्रथम यह कि साधना के दौरान यदि कोई अशरीरी आत्मा आ गई तो उससे बचाव का क्या रास्ता उस समय मुझे अपनाना होगा ? तथा द्वितीय यह कि यदि स्वयं मेरी ही कुण्डीलनी जागृत हो गई तो अकेले में मुझे वहां कौन संभालेगा ?

अपने मन की इन शंकाओं को शान्त करने के लिये जब अपने अनुभव की दृष्टि मैंने अपने भूतकाल की जानकारी पर दौड़ाई तो मुझे असफलता ही हाथ लगी, लेकिन एक दोहा जिसने मेरे अशांत मन को संयमित कर दिया याद आ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गया जिसके कारण मुझमें उत्साह की वृद्धि हुई, वह दोहा था :—

जिन खोजा तिन पाईयां गहरे पानी पैठ ।

मैं बैरन ऐसी ठगी गयी किनारे बैठ ॥

इस दोहे का मर्म, मेरे मन में उतरते ही बड़ी हिम्मत का संचार मुझमें हुआ, क्योंकि हमारा मस्तिष्क तो हमेशा कहता है कि पहले सीखों फिर करों लेकिन इस संसार में किसी कार्य को सीखने की एक मात्र शर्त ही **यह है कि उस कार्य में स्वयं उतर जाओ डूब जाओ, वह डूबना ही हमें उस कार्य में परांगत कर देगा ।** इस शर्त को पूर्ण किये बिना हम सदा ही असफल रहेंगे । जैसे यदि कोई व्यक्ति अपने मन में इस विचार को जमा ले कि मैं पहले तैरना सीखूगाँ, फिर उसके बाद ही पानी में अपना कदम उतारुगाँ, जब तक वह इस उपरोक्त मानसिकता से ग्रस्त है तब तक वह सदा असफल ही रहने वाला है । क्योंकि किनारे पर हमें बिठाकर हमारा शिक्षक पानी तथा उसमें तैरने के बारे में अपने असख्य शब्दों के द्वारा कितने ही प्रकार से हमें क्यों न समझा दें लेकिन पानी की गहराई में उतरने का अनुभव तो हमें तब ही होगा जब हम पानी को अपने शरीर से स्पर्श होने देंगे अथवा तैरने का अनुभव या आनन्द तो हमें तब ही मिलेगा जब हम स्वयं व्यक्तिगत् रूप से उसमें उतर कर तैरना जानेंगे ।

इन उपरोक्त बातों को अच्छी तरह से समझ लेने के पश्चात् मैं उस समय उत्पन्न हुई अपनी तमाम मानसिक कमजोरियों पर विजय प्राप्त कर चुका था । इस प्रकार की कमजोरियाँ ही हमारे मन के उत्साह को कम कर देती हैं । कहने का अर्थ यह है इस दोहे के द्वारा जो हौसला मुझे मिला वह मेरी इस साधना के अन्त तक मुझे काम आया था । इन शंकाओं के अतिरिक्त एक परेशानी मुझे और थीं, कि मैं क्या और किस तरह की प्रक्रिया अपनी साधना के दौरान अपनाऊँ । लेकिन शीघ्र ही इस शंका की पूर्ति के लिए एक विचार मुझे आया, वह यह कि परिणाम की किसी भी मंजिल के उद्देश्य को अपने मन में धारण करके पहले से नहीं चलना है । **क्योंकि यदि उसकी सफलता अक्षरशः मेरे अनुभव में नहीं आयी तो बिना वजह ही मेरी भविष्य की संभावनाओं पर मेरे ही मन के द्वारा आघात पहुँचेगा ।**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसलिये उस समय साधना करने से पहले उसके परिणाम के लिये उत्सुक अपने विचारों को त्याग देना ही श्रेयष्कर समझा, लेकिन फिर भी साधन या प्रक्रिया के प्रकार के बारे में निश्चय करना अभी शेष था। इस आखिरी बात को निश्चत करने से पहले स्वयं मुझे बड़ी कठिनाई हुई लेकिन बाद में बिना किसी विशेष उलझन में पड़े मैंने इस शृंखला में आये कितने ही विचारों में से एक विचार को ही ज्यादा महत्व देना उचित समझा, जिसके अर्न्तगत एक ही बात मुख्य थी कि मैं वहाँ अपनी साधना स्थली पर उस तरह का ही वातावरण तैयार करके रखूँ जैसे कि हमारे योगी, मुनि अनादि काल से अपने पास रखते आ रहे हैं। जिससे कि मैं उस तथाकथित वातावरण में ज्यादा समय तक अपने आपको स्थिर रख कर रह सकूँ।

चूंकि मेरे जीवन में इस प्रकार की साधना का अवसर पहली बार ही उपस्थित होना था इसलिये मैंने सोचा कि तीन दिन का समय ही पहले पहल काफी रहेगा। इन तीन दिनों में शुरू से अन्त तक तुझे मौन ही रहना था और वह मौन भी ऐसा जिसमें किसी भी प्रकार के इशारे करने की भी गुंजाइश न हो यानि की उच्च स्तरीय पूर्ण रूपेण मौन। इसके साथ ही यह भी निश्चय कर लिया था कि इन तीन दिनों की साधना के दौरान अपने उदर की पूर्ति के लिये अन्न तो ग्रहण करना ही नहीं है। चूँकि दही हर जगह उपलब्ध हो जाता है इसलिये उस समय मठा का सेवन उचित रहेगा लेकिन वह छाछ ऐसी होगी जिसमें न तो नमक मिलाना है और न ही चीनी। पानी तथा छाछ को छोड़कर अन्य किसी भी खाद्य एवं पेय पदार्थ का सेवन मुझे नहीं करना है। इसके अलावा साधना के उन तीन दिनों के अन्तराल के दौरान सतत् चौबीसों घन्टे घी का दीपक जला कर रखना है तथा यथा संभव धूप या अगरबत्ती जला कर रखनी है। अन्त में रही भजन और आसन की बात इनके लिये मैंने अपने मन में यह धारणा बना ली कि जैसी भी परिस्थितियाँ मेरे समक्ष उपस्थित होती जावेंगी उनके अनुसार ही मैं अपने आपको उनमें ढालता चला जाऊगाँ।

कहते हैं जब मनुष्य अपनी इच्छा की शक्ति को अपने किसी निश्चित विचार की पूर्णता में लगाकर उसी के स्तर पर जीने लगता है तब वह उसके रास्ते में आने वाली तमाम अड़चनों पर भी विजय प्राप्त कर ही लेता है। मेरे साथ भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ इसी प्रकार से ही उन दिनों घटा था क्योंकि अभी तक किसी सहायक का चयन नहीं हो सका था जो विश्वास पात्र तो हो ही तथा समझदार भी हो। इसके साथ साथ ऐसा भी हो जो मेरे मन के अनुरूप शिष्यवत् कार्य कर सके, और मुझे मेरी आवश्यकता के अनुरूप ही ऐसा एक व्यक्ति मिल भी गया। जिसकी स्वयं की पान की दुकान मेरी फोटो की दुकान से थोड़े ही फासले पर थी। इस प्रकरण में ही एक बात मेरे लिये और भी अच्छी थी एक तो यह कि विचारों से वह व्यक्ति उन दिनों मुझसे काफी प्रभावित हो गया था; जिसके कारण उसके मन में मेरे प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गयी थी। दूसरे उसकी मुझसे उम्र आठ या दस वर्ष अधिक थी। उसकी इस ज्यादा उम्र का मुझे फायदा यह हुआ, जहां मैं ३२ साल का होते हुये भी बिलकुल आजकल के लड़कों की तरह फेशनेबुल लगता था वहीं वह एक गृहस्थ एवं जिम्मेदार पूर्ण व्यक्तित्व वाला नजर आता था; उसका नाम तो बाबू लाल है लेकिन वह यहाँ लक्ष्मण जी के मन्दिर के चौराहें पर बबुआ पान वाले के नाम से मशहूर है, खैर.....

मन में अपने प्रोग्राम के प्रति उत्साह तो बहुत था लेकिन पूर्व का कुछ भी अनुभव नहीं होने के कारण से मन में कई प्रकार की धारणाऐं स्थान का चयन करने के बारे में भी। कभी तो विचार आता कि कहीं किसी गुफा में शरण ली जाये अथवा कहीं खुले में ही बैठ लिया जाये। अन्त में हम दोनों ने विचार विमर्श के बाद दो बातें निश्चित की पहली तो यह कि स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी जी का एक आश्रम जो जम्मू कशमीर के मन्तलाई क्षेत्र में है, उनसे आज्ञा लेकर वहाँ के एकान्त वातावरण में किसी एकान्त स्थान पर बैठ कर अपना कार्यक्रम किया जाये, और यदि वहाँ पर अपनी साधना के करने के की अनुमति किसी कारण वश नहीं मिले तो फिर दूसरी व्यवस्था के अनुसार ऋषिकेश पहुँचकर किसी धर्मशाला में कमरा लेकर रहें।

जिस उत्साह से प्रोग्राम को क्रियान्वित करने के लिये योजना चल रही थी उसी तीव्र गति से ही मेरी अर्थिक समस्या भी सुलझ गयी। हम दोनों के ऊपर आने, जाने, खाने, पीने एवं रहने के लिए कम से कम एक हजार रुपये चाहिये ही थे। बबुआ से तो इस बारे में मैं कुछ हीं नहीं कह सकता था क्योंकि एक तो वह स्वयं ही आर्थिक रूप से तंग था दूसरे उसकी मेरे ऊपर इतनी कृपा ही काफी थी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि वह अपनी दुकान और बच्चों को छोड़कर बिना अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए निस्वार्थ भाव से मेरे साथ चलने को राजी हो गया था।

इस प्रकार से पूर्ण तैयारी करने के बाद हम आठ मई सन् १९८१ को सुबह पाँच बजे भरतपुर से दिल्ली को बस से रवाना हुये। प्रोग्राम के अनुसार, हमें एक बार अर्पणा आश्रम जहाँ कि स्वामी धीरेन्द्र जी ब्रह्मचारी योग की कक्षायें चलाने के लिये आश्रम बनवा रहे थे। वहाँ रुककर उनसे उनके मन्ता लाई वाले अर्पणा आश्रम में रहने के लिये आज्ञा लेनी थी। लेकिन उनसे मिलने के बारे में मन में बड़ी अस्पष्ट सी कशमकश थी कि वे इतने बड़े प्रभुता सम्पन्न व्यक्तित्व के मालिक हैं जिसके कारण उनसे मिलना हमारा इस महानगरी में किस प्रकार से हो सकेगा! ईश्वर के ऊपर अपने कार्य का भार डालकर मन को सन्तोष दिया कि जो कुछ भी होगा वह ठीक ही होगा। बस के आश्रम के चौराहे पर पहुँचते ही हम अपने सामान सहित वहाँ उतर गये। सामान को बबुआ के पास छोड़कर मैं आश्रम के अन्दर गया वहाँ पूछने पर किसी व्यक्ति ने बताया कि स्वामी जी अभी-अभी ही यहाँ आये हैं, वहाँ जाकर मिल लो, यदि यहाँ से चले गये तो फिर कहाँ और कब मिलेंगे कुछ भी कहना मुश्किल है वैसे भी वे यहाँ तो महीने में एकाध बार ही आते हैं। मैं थोड़ा आश्चर्य चकित हुआ परमात्मा की अनुकम्पा के ऊपर। एक मिनट बाद ही मैं स्वामी जी के समक्ष पहुँच गया। उनके चरण स्पर्श करने के बाद मैंने अपने मिलने का प्रयोजन बताते हुये उनसे कहा कि "मैं तीन दिन तक मौन रहकर केवल छाछ के ऊपर आधारित रहकर आपके मन्तालाई वाले आश्रम के एकान्त में अपनी साधना करना चाहता हूँ इसलिये मैं आपसे वहाँ रहने दिये जाने की आज्ञा पाने की स्वीकृति चाहता हूँ।"

इतना सुनकर ही वह बोले, "वहाँ पर ही क्यों जाना चाहते हो, हरिद्वार चले जाओ।"

इस पर मैंने उनसे कहा कि, "मुझे खुले में आग लगाकर बैठना है और चूँकि मैं अपने आप में बाबा सदृश्य नहीं लगता हूँ। इसलिये कहीं कोई धोखा समझकर मेरी साधना में व्यवधान ही पैदा न कर दें। इसलिये आपके आश्रम का क्षेत्र मैंने चुना है।"

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वामी जी ने इसके जबाव में कहा कि "पागल हुये हो, खुले आकाश में वहाँ जाकर बैठोगे, वहाँ तो इतनी ठण्ड है कि एक रात में ही बर्फ में जम जाओगे।"

इतना कहकर वे वहाँ से वापिस चलने को अपनी जीप में बैठ गये, उन्होंने मुझसे मेरा व्यवसाय और रहने का स्थान पूछा और चल दिये। मैं कुछ सैकिण्ड के लिये ठिठका सा खड़ा रह गया, थोड़ी देर आगे जाकर स्वामी जी ने अपनी जीप रोक ली, तब मैंने अनुभव किया कि वे अपनी जीप के पीछे देखने वाले शीशे से मुझे देख भी रहे थे लेकिन फिर दुबारा से मेरे पैर आगे नहीं बढ़ सके थे क्योंकि जितना मैंने उनसे कह दिया था उससे ज्यादा मेरे पास कहने को अब कुछ भी नहीं था। स्वामी जी के वहाँ से चले जाने के पश्चात् मैं भी वापिस बबुआ के पास लौट आया। मेरे मन में उस समय एक ही भाव था कि परमात्मा ने शायद मेरे हक में यही ठीक समझा है। चूँकि मेरे ही मन में मन्तालाई के लिये स्वामी जी से मिलने का आग्रह था शायद इसीलिये ही उन्हें केवल कुछ मिनटों के लिये इस आश्रम में भेज कर मेरे मन में बनी घुण्डी को सुलझाने से मेरी इस तरह से सहायता की है।

उसी दिन शाम को हम ऋषीकेश पहुँच गये, गीता भवन में तो हमें जगह मिली नहीं क्योंकि वहाँ तो पहले से ही आरक्षण कराना पड़ता है तथा वहाँ के नित्य के नियमों एवं कार्यक्रमों के कारण मुझे वहाँ ठीक भी नहीं रहता। इसलिये वहाँ से चलकर हम भारत साधु समाज पर आये। जहाँ हमें बिना किसी परेशानी के हमारे अनुकूल जगह मिल गयी, वहाँ के कमरे बड़े ही साफ एवं रंग रोगन से एक-दम ताजा पुते हुये थे, सामान रखकर हम थोड़ा विश्राम करने के लिये बैठ गये। तभी थोड़ी देर बाद क्या देखते हैं कि दिन भर की गर्मी के बाद वहाँ पर तेज हवायें चलने लगीं ओर आधे घण्टे बाद ही वहाँ पर तेज वर्षा भी होने लगी, इस मौसम को देखकर मेरा आकाश के नीचे साधना करने का विचार तो अपने आप ही तिरो-हित हो गया। लेकिन उन कमरों की साज सज्जा देखकर मेरे मन में शंका हो रही थी कि ये लोग हवन की धुँआँ से शायद अपने कमरों को काला होने देने पर ऐत-राज उठायेंगे। इसलिये मैं रात्री को अपने मन की शंका के लिये वहाँ के व्यवस्था-पकगण जिन्होंने गेरुआ वस्त्र पहन रखे थे उनके पास गया। मैंने अपने ठहरने का प्रयोजन उनको बताया तथा अपनी साधना करने की पद्धति पर प्रकाश डाला तो उन्होंने यह कहते हुये अपनी स्वीकृति दे दी कि जब आप भगवत् भजन करने के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिये अपनी साधना के दौरान हमारे कमरों का गन्दा या काला करेंगे तो क्या हुआ। किसी न किसी रूप में यहाँ के समस्त वातावरण को स्वच्छ एवं पवित्र भी तो करेंगे, इसीलिये आप अपना कार्यक्रम निश्चिन्त होकर यहाँ करें।

मैंने यहाँ इस सन्दर्भ में ये तमाम बातें इसीलिए लिखी हैं क्योंकि यह मार्ग साधक के लिए शुरू-शुरू में अज्ञात मार्ग की तरह से होता है तथा प्रत्येक साधक को अपनी साधना को व्यवस्थित करने से पहले अनगिनत शंकाओं तथा समस्याओं का सामना करना पड़ता है इसलिए धैर्य एवं अपनी बुद्धि कौशल के द्वारा इन्हें हल कर लेना चाहिए अन्यथा शुरू से ही हमारे सामने ये बाधायें दीवाल सदृश्य विराम लगाकर खड़ी होकर हमारी साधना में विघ्न खड़े कर देती है।

उस दिन रात्रि को मैंने अपने खाने में सिर्फ दूध ही लिया, बबुआ को अगले तीन दिनों में सम्भावित होने वाली बातों को यथासम्भव मैंने समझा दिया। इसके अतिरिक्त जो कुछ बाजार से सामग्री खरीदनी थी वह खरीद ली। इस प्रकार वह दिन बीत गया।

दूसरे दिन यानि ९ मई, शनिवार को सुबह उठकर गंगा स्नान किया, तत्पश्चात् अपने कमरे में आकर जहाँ मेरा बिस्तर जमीन पर लगा था उसी पर आकर बैठ गया। दीपक अगरबत्तियाँ जलायीं फिर जैसा कि आपने घर पर मैं सिद्धासन पर बैठकर श्वांस को अन्दर खींचकर (जिसे अभ्यान्तर कुंभक के नाम से से भी कहा जाता है।) प्राणायाम किया करता था वैसे ही वहाँ करने लगा। घर पर मैं दो या तीन प्राणायाम ही कर पाता था या समयानुकूल वहाँ मेरी इतनी ही क्षमता थी। उन दो या तीन प्राणायामों में ही मुझे आधा घण्टा लग जाता था क्योंकि प्रत्येक प्राणायाम के कुभंक का मेरा समय तीन मिनट के करीब रहता था। अपने रोजाना के बराबर कार्यक्रम करने के पश्चात् मन ने अपनी आदत के मुताबिक इस आसन से उठना चाहा लेकिन अब यहाँ आसन से उठकर दुकान तो जाना नहीं था। इसलिए अब तो अपनी अधिकतम सामर्थ्य के अनुसार लगे ही रहना था, चाहे मेरे द्वारा किये जा रहे कुभंक का समय अब आधी मिनिट ही क्यों न रह जाये। आगे चलकर ऐसा हुआ भी, डेढ़ घण्टे बाद तो मेरा तमाम हौसला ही जबाव दे गया और जब मैं दिल में अपने आपको बिल्कुल ही सामर्थ्य हीन अनुभव

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करने लगा तो मैं वहीं उसी बिस्तर पर अपने सिद्धासन को खोलकर शवासन की स्थिति में लेट गया और अपनी आती जाती साँस पर लेटे-लेटे ही ध्यान करने लगा, कितनी देर तक उस समय मैं अपनी सांस पर अपना ध्यान केन्द्रित रख सका, मुझे यह ख्याल ही नहीं रहा, मुझे तो पता ही जब चला, जब दो घण्टे की गहरी नींद के बाद मेरी आँखें खुलीं। मैंने देखा, अगरबत्तियाँ जलकर समाप्त हो चुकी थीं। इसलिए मैंने नयी अगरबत्तियाँ जला दीं, दीपक में थोड़ा घी और बढ़ा दिया, तब तक बाजार खुल गया था। बबुआ बाजार से ताँबे का बना हुआ हवन कुण्ड ले आया, ११ बजे के करीब मैंने तीन गिलास छाछ के पीये। फिर आग डालकर हवनकुण्ड को बबुआ ने चेता दिया, उसकी अग्नि में धूप डालते ही कमरा चूँकि बन्द था, इसीलिए तमाम कमरे में धुँआँ ही धुँआँ भर गया। शुरू-शुरू में कमरे में व्याप्त धुयें के कारण मेरी आँखों में आँसू भी आ गये थे, लेकिन बहुत जल्दी ही मेरी आँखें उस धुयें की अभ्यस्त हो गयी लेकिन बबुआ का कमरे में ठहरना अब मुश्किल हो गया था इसलिए वह कमरे के बाहर बाजार की तरफ जहाँ बरामदा था, उसमें चला गया। मैं चूँकि फर्श पर ही था इसलिए मेरे ऊपर धुएँ का प्रभाव कम हो रहा था लेकिन फिर भी एक विचार मेरे मस्तिष्क में आया कि धुँआँ से तो इस कमरे में आक्सीजन की कमी हो जाएगी। इसके प्रति उत्तर के रूप में मेरे मस्तिष्क में से ही उत्तर मुझे मिला कि जब तक उस कमरे में दीपक जल रहा है तब तक आक्सीजन की कमी किस प्रकार से मानी जा सकती है।

इसी सन्दर्भ में एक बात और यह है कि चाय तो मैं पहले से ही नहीं पीता था तथा सिगरेट की आदत को मैं पिछले छः महीने से कतई त्याग चुका था। इसलिये सिगरेट की तलब का कोई मुझे सवाल ही नहीं था। शराब मेरी आदत के रूप में नहीं थी, इस प्रकार किसी भी प्रकार के नशीला पदार्थ लेने को मैं उस समय मजबूर नहीं था। इन पाँच छः घण्टों के दौरान ही मुझे पता चल गया था कि जिस तरह से मैं हौसला पूर्वक वहाँ प्राणायाम किया करता था, यहाँ ठीक इसी तरीके से नहीं चल पायेगा। लेकिन चूँकि मैंने अपनी मानसिकता को प्रत्येक आने वाली परिस्थिति के लिये तैयार करके रखा था इसलिये जब यह समस्या मेरे समक्ष आयी कि अब प्राणायाम तो होता नहीं है फिर मैं अब क्या साधन अपनाऊँ तो इसकी पूर्ति में मैंने सोचकर यह स्थिर किया कि अगर प्राणायाम नहीं चलता है तो न चले साँस तो चलेगी, उस साँस के साथ मैं राम का नाम साथ रखूंगा तथा इसको मैं अपने मान-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सिक जाप मैं बनाये रखूंगा। दूसरी तीसरी बैठक में तो मेरी जाँघ, कमर, गर्दन सब दुखने लगी साथ ही सिर भी कुछ भारी महसूस हुआ। बीच-बीच मे जब लघु-शंका वगैरहा की जरूरत महसूस हुई तो कमरे के पिछले दरवाजे से बाहर निकल कर अन्दर वाले बरामदे की बगल में ही स्नानघर एवं फ्लस का शौचालय बना था, उठकर जाता रहा। जैसे-जैसे शाम के चार बजे, गर्मियों के दिन थे इसलिए गंगा स्नान के लिए उठकर चलने को मुझे कमरे से बाहर निकलने का उपक्रम करते देखकर बबुआ भी मेरे साथ पीछे-पीछे चल दिया और गंगा के किनारे पर बनी हुई सीमेंट की बैंचों पर जाकर बैठ गये, करीब एक घन्टे तक मैं गंगा की बहती हुई धारा को देखता रहा जिसको केवल देखने मात्र से ही मन में बड़ा आनन्द आ रहा था बाद में वहां से उठकर घाट पर आकर स्नान किया, स्नान करने के पश्चात् अपने कमरे में आकर मैं अपने उसी आसन से बैठ गया। कमरे से बाहर जाते समय ही मैंने अपनी जीभ को उल्टी करके कंठ की ओर तालुये से खेचुरी मुद्रा के रूप में चिपका लिया था, जिससे कोई भी शब्द बाजार में किसी से टकराकर भी भूल से नहीं निकल जाये, कमरे में आकर दूसरी बार छाछ पी। जो कि बबुआ ने बनाकर रखी हुई थी। क्योंकि पेट में भूख अपना करतब अपने सम्पूर्ण वेग से दिखा रही थी, उसके बाद मैंने अपना वही सिद्धासन लगाया और राम के नाम के साथ प्राणायाम जैसा कुछ करने लगा थकने के बाद मैं वहीं पर लेट गया।

लेट जाने के बाद भी मैं अपने स्वास के साथ राम का नाम मन में चलाता रहा। इस प्रकार से करते करते चाहे थोड़ी देर के लिए ही सही मुझे नींद आ जाती थी। इस प्रकार की नींद में यही एक अनोखापन था कि राम का नाम लेते-लेते नींद आ जाती थी और जब मेरी नींद टूटती या मेरी चैतन्यता लौटती तो तब भी मैं अपनी जबान पर राम का नाम ही पाता था। कई बार तो मुझे ऐसा महसूस हुआ था कि बबुआ शायद मुझे हर समय अपने ध्यान में ही समझ रहा है जबकि मैं बीच बीच में निद्रा भी चला जाता था यह बात दूसरी है कि आध्यात्म में इस प्रकार की निद्रा को योग निद्रा कहते हैं।

रात्रि के करीब ७–८ बजे तीसरी बार छाछ और ली। इस प्रकार दस बजे तक कार्यक्रम चला। दस बजे सोने से पहले मैंने कुछ बदलाव लाने के ख्याल से दीपक जो मैंने कमरे में जला रखा था, उसे अपनी आंखों के बराबर ऊंचाई पर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रखकर कमरे की लाइट बन्द करके उस दीपक की लौ को अपनी आंखों से अपलक देखकर त्राटक करना शुरू कर दिया। मेरी सारी की सारी तैयारियाँ जो कि मैंने अपने पिछले दिनों में सीख रखी थीं यहां वे अपनी सम्पूर्ण क्षमताओं के साथ मेरे काम आ रही थी। आधे घन्टे के त्राटक करने में मुझे कोई भी नयापन महसूस नहीं हुआ, लेकिन बबुआ मेरी अपलक आँखों को देखकर विस्मित हुए बगैर नहीं रह सका। जिसकी परिणिति दूसरे दिन मेरे सामने आयी। मैं अपने शरीर पर मात्र दो अंगोछा– जिन्हें साफी भी कहते हैं लपेटे हुए था। दूसरे दिन वह मेरे लिए लकड़ी की नई खड़ांऊ खरीद लाया। तथा उसने अपने गायत्री मन्त्र के छपे हुए पीले कपड़े को खूब अच्छी तरह से धोकर मेरे सामने उसे स्तेमाल करने से लिए रख दिया था। जब भी मैं कमरे से बाहर निकलता वह गायत्री मन्त्र वाला दुपट्टा तथा वे खड़ाऊ मेरे साथ ही होती थी। कुछ तो नीचे दुकानदारों से मेरे बारे में बबुआ के द्वारा वार्तालाप किये जाने की वजह से तथा कुछ मेरी ६ फुट की देहराशि के कारण से जब भी मैं बाजार में होकर गंगा स्नान करने के लिए कमरे से बाहर जाता था तो भारत साधु समाज के मेरे कमरे के पड़ोसियों को तथा नीचे के दुकानदारों को अपने बारे में उन्हें इशारा करते हुए या चर्चा करते हुए पाता था।

कार्यक्रम के दूसरे दिन मुझे मेरी आँखों के सामने कमजोरी के कारण अंधेरा सा आना शुरू हो गया था। नित्यकर्म करने में भी मुझे अब संभलना पड़ रहा था। एक बार सीड़ियों से उतरते समय आंखों के सामने अंधेरा आ जाने के कारण मुझे दीवाल का सहारा लेना पड़ा। पहले तो मैं सोच रहा था कि दो चार पलों में ही यह अंधेरा मेरी आँखों ओर मस्तिष्क में से चला जायेगा, लेकिन जब उस अंधेरेपन का समय बढ़ता ही गया तो मुझे भय मिश्रित विचित्रता सी होने लगी। मैंने भी सोच लिया कि जब तक मैं खड़ा रह सकता हूँ तब तो कोई नुकसान होने वाला नहीं है। शायद इसीलिए ही इतनी ज्यादा देर के घनघोर अंधेरे और सन्नाहटपन को आते हुए, गहराते हुए और बाद में जाते हुए, अपने मन की आँखों से उसे देखता रह सका था।

जब मैं ठीक से उतर कर सड़क पर आ गया तो मैं परमात्मा को धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सका क्योंकि इस कठिनतम् घड़ी में भी मेरा होश जागृत रहा था, मैं सोचता हूँ कि साधारण अवस्था में वह थोड़ी सी देर की आती एवं जाती

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुई बेहोशी की ही अवस्था थी और चूंकि मैं आध्यात्मिक सिद्धांतों और उसकी कठिनताओं से शाब्दिक रूप से परिचित था इसलिये भी प्रेक्टिकली जब मुझे वह कठिनता मेरे समक्ष आयी तो उस समय मुझे अपने आपकी होश पूर्वक बनाये रखने में खुशी ही हुई थी जिसके कारण उस समय मुझमें मेरा उत्साह शायद, बल्लियों उछल रहा था। शारीरिक कमजोरी होने के बावजूद भी यही कारण था कि उस दिन शाम को गंगा स्नान भारत साधु समाज के सामने न करके धीरे-धीरे लक्ष्मण झूला के पार जाकर कोई तीन किलोमीटर पैदल चलकर किया। लक्ष्मण झूला तक पहुँचते-पहुँचते कुछ बातें मेरे मन में नयी स्थिर हो गयी पहली बात तो यह कि मैंने अपने मन में राम नाम को सदैव जपते पाया, हालाकि खेचुरी की मुद्रा में मेरी जीभ अब भी उसी तरह थी, इसलिए भूल की तो गुंजाइश ही नहीं थी कि मैं स्वयं नाम को जप रहा था। दूसरी बात मेरे कमरे के पास जो साधारण सी आवाज में बातचीतें या जो आवाजें हो रही थी वो मुझे बड़ी कोलाहल के रूप में लगने लगी थी उनके द्वार बार-बार मुझे व्यवधान सा लगने लगा था लेकिन उनका कोई उपचार मेरे पास नहीं था। फिर भी मेरी यह इच्छा अवश्य बलवती हो रही थी कि किसी न किसी तरह से इस कोलाहल से छुटकारा मुझे अवश्य मिलना ही चाहिये। वहाँ गंगा के किनारे पगडन्डी वाले रास्ते पर धीरे-धीरे चलते हुए बड़ा भारी सुकून मुझे मिल रहा था। उसके सामने मेरी शारीरिक थकान और कम-जोरी मुझे गौण लग रही थी।

कहने का मतलब है, साधना के अथवा तपश्चर्या के दूसरे दिन तीन बातों का एहसास मुझे हुआ था, पहला होश जागृत रखने की क्षमता में वृद्धि होना, दूसरी थी अजपा की स्थिति और तीसरी थी— मानसिक या वैचारिक शोर से मुक्ति की ओर कदम इसी कारण की वजह से मुझे अब बाहर का शोर खलने लगा था, क्योंकि जब तक हम अपने ही शोर से भरे हैं तब तक खला बाहर का शोर हमें कहा से सुनाई देगा ! बाहर तो का शोर तब ही हमें कष्ट पूर्ण लगता है जब हम स्वयं अन्दर से शान्त होते हैं।

दूसरा दिन बड़ा लम्बा हो गया था, बीतने में ही नहीं आ रहा था। कई बार मुझे ऐसे भी विचार आये थे कि क्या मामला है ? विश्वास ही नहीं हो पा रहा था कि दो दिन इतने लम्बे हो सकते हैं। खैर जैसे तैसे रात्रि आयी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परमपूज्य स्व० श्री मोतीलाल जी भगत जिनसे उनके जीवनकाल में लेखक को बचपन से ही हिन्दू संस्कृति का अथाह ज्ञान का प्रवाह प्राप्त हुआ ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्राटक करने से करीब एक घंटा पहले आखिरी बार छाछ ले ली थी। त्राटक के बाद जब दस बजे में सोने जगा तब अचानक मुझे ऐसा महसूस हुआ कि दिन में मुझे जितनी तेज भूख लगी थी अब उतनी नहीं है या उसमें अब उतनी तीक्ष्णता नहीं हैं। हालाकि मेरा पेट अब भी पीठ से ही लगा था। खैर कारण जो भी हो, इस बात को सोने से पहले स्पष्ट रूप से मैंने अनुभव किया था। इसी बात को सोचते-सोचते शायद मुझे नींद आ गयी होगी। चूंकि बबुआ सिगरेट पीता था। इसलिए वह अपने बिस्तर बाहर वाले बरामदे में जो कि सड़क या गंगा की ओर था लगाकर वहीं सो जाता था और कमरे को बाहर से ताला लगा देता था मुझे यदि कहीं बाथरूम वगैरहा जाना होता तो मैं पिछले दरवाजे से निकल कर चला जाता था, जिसकी चिटकनी कमरे के अन्दर से वह लगा जाता था।

आज भी बबुआ इसी प्रकार बाहर बरामदे में सोया हुआ था। रात्रि को सोते हुए मुझे एक अजीब सा स्वप्न दिखाई दिया, जिसके अनुसार मैं और अन्य लोग शमशान में थे, किसी शव की दाह-क्रिया का दृष्य था। तब क्या देखता हूँ कि जिस शव को जलाया जा रहा था उसकी अग्नि तो समाप्त हो गयी थी लेकिन मुर्दा अभी पूर्ण रूप से जला नहीं था। जब मैंने और गौर से देखने की कोशिश की तो मैं इस दृष्य को देखकर सकते में आये बिना नहीं रह सका क्योंकि मुर्दे के रूप में मेरे वहीं अन्धे ताऊजी थे, जिनकी मृत्यु करीब दस पहले ही हो गयी थी। अब तो मैंने उनको और गौर से देखा तो एक और भी आश्चर्य की बात मेरे सम्मुख आयी कि उस अधजली हालत में भी वे जीवित थे। जब मैंने उनको आवाज देकर पुकारा तो वे बोले भी और उन्होंने मेरी आवाज के प्रत्युत्तर में उत्तर भी दिया तो मुझे उनके जीवित होने में कोई सन्देह नहीं बचा तो मैंने पुकार कर अन्य व्यक्तियों को बुलाया और उन्हें दिखाकर कहा,....."आपने यह क्या कर दिया अब ऐसी हालत में न तो इनको बचा सकते हैं और न ही इनको जला सकते हैं।" बड़ी बैचेनी हो उठी। इसी बेचेनी की अवस्था में ही मेरी निद्रा खुल गई। लेकिन मेरा मस्तिष्क उसीं स्वप्न के चिन्तन में लगा रहा और बिना आँखें खोले पड़ा रहा। कुछ देर बाद मैंने किवाड़ों की आवाज सुनीं और लगा कि बबुआ बाहर के किवाड़ों को खोलकर बाथरूम जाने के लिये कमरे में आया है और इसलिए पिछले दरवाजे से बाथरूम गया है लेकिन काफी देर बाद जब वह नहीं लौटा तो मैंने सोचा क्या बात है? मैंने आंख खोली तो एक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलग ही प्रकार की अनुभूति हुई, पहली बात तो यह है कि कमरे में केवल दीपक का मद्धिम प्रकाश था। लाइट नहीं जली हुई थी। दूसरे कमरे के किवाड़ जो पीछे वाले दरवाजे के खुले होने चाहिये उस दरवाजे को चटकनी पूर्ववत: अन्दर से लगी हुई थी और बाहर के किवाड़ भी वैसे ही लगे हुये थे। बबुआ कमरे के अन्दर भी मौजूद नहीं था बल्कि बाहर उसकी साँसों के खर्राटों की आवाजों से उसके सोये हुये होने का निश्चित् आभास मुझे मिल रहा था। अगले ही पल प्रश्न उठा कि फिर कमरे में कौन आया ? ठीक उसी समय हल्की सी पारदर्शक सी आकृति हिली उससे पहले कि मैं लेटी हुई स्थिति से उठकर बैठ जाता वह आकृति दीवाल में समा गयी। इतना सब कुछ मेरी आँखों के सामने इतनी तीव्रता से गुजरा कि मैं अपने मस्तिष्क में किसी विशेष आकृति के स्वरूप को अपनी याददास्त में नहीं रख सका बस यही स्मरण रहा कि कोई झीने पारदर्शक से दूधिया सफेद कपड़े पहने था और वह कमरे के पीछे वाली दीवाल में समा गया। इससे तो मैं स्तब्ध था ही साथ-साथ कमरे के वातावरण में भी एक अजीव सा भारीपन था। अब चूंकि उसको मैंने स्वयं अपनी निगाहों के सामने से हटते देखा था इसलिऐ बड़ी ही तीव्रता से उस समय दो बातें मेरे मस्तिष्क में आयी पहली यह कि जब मैं सोया हुआ था तब कोई न कोई अशरीरी आत्मा यहाँ मौजूद थी, दूसरी अब जबकि मेरी आँखों के सामने से वह आत्मा स्वयं ही हट गयी है तो अब मुझे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है, इसलिए तब मैंने उठकर बैठ जाना और अपनी साधना में ही लग जाना श्रेयष्कर समझा। घड़ी की ओर देखा तो दो बजे का समय था दीपक में घी बढ़ाकर तथा अगरबत्तियाँ जलाकर मैंने अपना कार्यक्रम फिर से शुरू किया। लेकिन मैं अपने ध्यान को राम के नाम पर ज्यादा देर तक केन्द्रित नहीं रख सका क्योंकि मेरे विचार अभी थोड़ी देर पहले देखे गये स्वप्न और इस रहस्यमय उपस्थिति की तरफ बढ़े चले जा रहे थे।

ताऊजी जिनके अगाध प्रेम में मैं ओत प्रोत रहा करता था, वे आजीवन अविवाहित ही रहे थे, दूसरी बात उन्होंने मुझे अपना उत्तराधिकारी भी माना था तीसरी बात यह थी कि उनकी जब मृत्यु हुयी तब मैं भरतपुर में था जबकि उनकी बड़ी ही हार्दिक इच्छा थी कि जब वे मृत्यु को प्राप्त हों तो उन्हें मेरा हाथ लगे। चूंकि मैंने डीग से भरतपुर आकर दुकान खोल ली थी इसलिये जब उनकी मृत्यु हुई

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तब मैं भरतपुर ही था लेकिन भरतपुर से डीग बस द्वारा केवल एक घंटे का रास्ता होते हुये भी मुझे उनकी मृत्यु की सूचना समय पर नहीं मिल पाई इसलिये उनका दाह संस्कार मेरे द्वारा नहीं हो सका था। पगड़ी भी पिताजी ने बंधवा ली थी। मेरे मस्तिष्क में किसी तरह से भी इस दस साल पुरानी घटना के अवशेष इस समय नहीं थे, लेकिन न जाने क्यों ये तमाम बातें इस रात के विचित्र बोझिल से वातावरण में एक चलचित्र की भाति मेरे चित में घूम गई और ऐसा लगने लगा कि हो न हो यह सारा का सारा प्रोग्राम उनके इशारों पर ही चल रहा है।

बाद में मैंने अपने मन में यह निश्चित् किया कि यह उनके इशारों पर है या नहीं इससे मुझे कोई मतलब नहीं है लेकिन मैं अपने कार्यक्रम की समाप्ति पर खुद के खाना ग्रहण करने से पूर्व गंगा जी के नाम का परोसा धारा को अर्पित कर देने के पश्चात् दूसरा परोसा ताऊजी के नाम पर भी धारा को समर्पित करूँगा तब ही मैं स्वयं खाना खाऊँगा। इस विचार के मन में निश्चित् होते ही मैंने कमरे में छाई हुई बोझिलता को सामान्य होते हुये महसूस किया। अब मैं भी अपने आपको हल्का फुल्का महसूस कर रहा था लेकिन मन में एक शंका फिर भी रह गई थी कि मुझे इस बात का प्रत्यक्ष कैसे पता पड़ेगा। कि जिन ताऊजी को मैंने मन से परोसा अपर्ण करने की सोच ली है वे उसे ग्रहण करेंगे या नहीं। फिर भी मन में यह विश्वास भी जम सा गया था कि अवश्य कोई न कोई कारण ऐसा होगा, जिसकी वजह से मेरे विश्वास को ठेस तो कम से कम नहीं ही पहुँचेगी।

इतने सोच विचार के बाद ध्यान पर बैठे रहने का औचित्य कुछ बचा नहीं था इसलिये तीन बजे के कुछ पहले ही मैं फिर लेट गया। तीसरे दिन प्रातः जब आंखें खुली, सूर्योदय हुए बहुत समय व्यतीत हो चुका था नित्य कर्म के लिये उठा तो शारीरिक कमजोरी के कारण मुझे सहारे की भी आवश्यकता हुई। अब तो चलने-फिरने में ही नहीं; बल्कि बैठे-बैठे भी आंखों के सामने अंधेरा आ जाता था लेकिन ऐसी कोई स्थिति नहीं आयी, जिस पर मेरे मस्तिष्क पर काबू नहीं रहा हो। **कनपटी अग्दर को दबी जा रही थी, सबसे ज्यादा बेचैन करने वाली जो बात मुझे अभी तक याद है वह यह थी कि सिर के ऊपर का हिस्सा यानि भौंहों के ऊपर की खोपड़ी में बड़ी तीक्ष्ण जलन महसूस हो रही थी।** जैसे किसी ने तेज धार वाली तलवार से उतना भाग ऊपर ऊपर से तरबूज की तरह काट

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिया हो; उस तीक्ष्णता को कहने के लिए मुझे भाषा में शब्द ढूढने से भी नही मिल रहे हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि उसमें सुन्नाहट भी थी, जलन भी थी, भारीपन भी था अथवा इन तीनों का मिला जुला वह रूप था लेकिन जैसे भूख सहन हो रही थी उसी प्रकार से परमात्मा ने और सभी परेशानियों को सहने की भी क्षमता दे ही रखी थी। रात वाली घटना से मन में जहाँ कौतुहल था वहीं मन में भले ही थोड़ा सा ही सही अनुभव होने की वजह से उत्साह भी था तीसरा दिन शारीरिक दृष्टि से बड़ा कठिन चल रहा था लेकिन फिर भी इन अनन्य प्रकार की कठिनाईयों के बावजूद मैंने अपने मन में अपनी साधना के अन्तिम दिन निर्जला रहने का संकल्प कर लिया। इसके पीछे जो कारण था वह यही था कि मैं जितना अपने आप को इन परिस्थितियों में परखा सकूँ और परखा लूँ; इसलिए अब तक जो मैं आहार के नाम पर छाछ और पानी का सेवन कर रहा था, मेरे अब इस निर्जला के संकल्प लेने के कारण अब ये दोनों ही बन्द हो गये थे। वैसे तो मई का महीना था लेकिन एक दो दिन पहले बरसात हो जाने के कारण वातावरण में इतनी अधिक खुश्की नहीं थी, जितनी कि आमतौर पर मई के महिने में हो जाया करती है लेकिन मेरा शरीर पिछले दो दिनों से पहले ही अभाव ग्रस्त था इसलिए आज जब मैं इस बात को सोचता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है कि उस समय मेरे शरीर की इन्द्रियों ने मेरे मस्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव क्यों नहीं डाला अथवा इनके विपरीत मुझमें या मेरी इच्छा में इतनी दृढ़ता कहाँ से प्राप्त हुई। खैर जो हो प्रातः नौ बजे के करीब बबुआ ने छाछ से भरा जग मेरे सामने रख दिया। लेकिन मैं अपने कार्यक्रम में लगा रहा। और यह भी सोचता रहा था कि यह और भी अच्छा हुआ कि बबुआ को तो मेरे निर्जला रहने का पता नहीं है। अब मेरे सामने ताजा छाछ भी आ गयी थी जिसके कारण परीक्षा अब और भी कठिन हो गई थी। इस तरह से अब मेरी अब इच्छा शक्ति की असली परीक्षा की घड़ी आ गई थी। यही समय तो मेरा इन्द्रियों पर काबू पाने का समय था।

यदि हमें कैद में डाल दिया जाये और खाना नहीं दिया जाये तब हम उस अवस्था को उपवास थोड़े ही कहेंगे, उपवास तो हम उसे ही कहते हैं जिसमें पहले हम मन में संकल्प करते हैं और बाद में अपने मन पर संयम करके उसे निभाते हैं। पहली अवस्थ में हम कैद से छूटते ही खाने पर टूट पड़ते है, जबकि दूसरी अवस्था में समय हो जाने के पश्चात भी इन्तजार करते हैं तथा पहले

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भगवान को प्रेमपूर्वक प्रसाद चढ़ाने के पश्चात् ही हम भोजन करते है। इस प्रकार इन दोनों परिस्थितियों में जमीन आसमान का अन्तर है। एक अवस्था में जहाँ कि इन्द्रियाँ डन्डे के बल से रोकी जा रही है जबकि दूसरी अवस्था में अपने मन के संयम के द्वारा इन्द्रियाँ वश में रहती हैं। योग की प्रथम सीढ़ी ही यह है कि चित्त की वृत्तियों का विरोध नहीं बल्कि निरोध हो। विरोध में टकराव है, जैसे एक नदी बह रही हो उसको बाँध बनाकर या अवरोध खड़ा करके जबरदस्ती रोक रखा हो, यहाँ नदी अपने से ही नहीं रुकी हुई है, जैसे ही बाँध कमजोर होगा पानी का वेग बड़ी तीव्रता से टूट जावेगा। जबकि निरोध तो वह स्थिति है जिसमें कोई बांध नहीं बना रखा होता है, वहाँ तो नदी का प्रभाव अपने आप से ही रुका होता है, चाहे तो नदी अपना प्रभाव चालू कर भी सकती है।

ठीक यही स्थिति मेरी उस समय थी, चाहता तो बिना किसी परेशानी के मैं छाछ पी सकता था। किसी भी प्रकार से मेरे मान सम्मान में प्रत्यक्ष रूप से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला था और तो और बबुआ तक को मेरे संकल्प का पता नहीं था फिर मेरे बाँध के टूटने का उसे पता कैसे चलता। लेकिन मेरे अन्दर जो "मैं" मौजूद था, वह तो सब कुछ देख रहा था जिसके सामने मैंने संकल्प किया था। परिस्थिति अब मेरे समक्ष पूर्ण रूप से ठीक परीक्षा देने की आ गई थी। छाछ सामने रखी थी, पानी भी सामने रखा था, सारा का सारा सामान मौजूद था मेरे धैर्य की परीक्षा का अथवा मेरी इन्द्रियों को प्रलोभन में फँसाने का। मैं यहाँ इस स्थिति को भी अपने अनुभव में उतार सकने की स्थिति में था। जब यह स्थिति सामने आयी, तभी पता चला कि इन्द्रियाँ अपने प्रभाव को हटते देखकर कितनी परीक्षायें लेती है।

राम-नाम लेने की आवश्यकता अब मुझे नहीं हो रही थी, बल्कि इन विचारों को हटने के बाद जैसे ही मेरा ध्यान राम-नाम जपने को होता तो मैं उसको पहले से ही अपने अन्दर चलते हुए पाता था। छोटे-छोटे व्यवधान बीच में आते थे और ध्यान फिर वहीं चला जाता था। अब मुझे ध्यान ही नहीं करना पड़ रहा था बल्कि अन्दर एक प्रकार से राम-नाम की अहिनिश लौ जल रही थी, बहुत गहरे में इसी लौ ने ही मुझे उस कठिनाई के समय में संतुष्ट कर रखा था। समस्त परेशानियाँ उस संतुष्टि के रहते हुए बहुत ऊपर ऊपर मालुम पड़ रही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

थी। बहुत आश्चर्य भी हो रहा था कि मेरे बिना जपे यह सारा का सारा मामला क्या है ? कौन बैठा है भीतर ? कहां से यह ज्वाला जल रही है ? शरीर के स्तर पर मैं महसूस कर रहा हूं तो फिर क्या उस दूसरे किनारे पर वहां कोई और है। फिर कभी आश्चर्य यह भी होता है कि मैं होश में तो हूं ? कहीं मैं सोया हुआ तो नहीं हूं ? कई प्रकार से अपनी अवस्था का निरीक्षण कर रहा था, बबुआ को अपने काम में मस्त देख रहा था, बाहर से नीचे वाले दुकानदारों की आवाजें सुन रहा था, दीपक जल रहा था, बार-बार मैं हवन कुण्ड में घी और धूप भी डाल रहा था फिर मैं सुषुप्त अवस्था में तो हो ही नहीं सकता था, भूख लग रही थी, माथे में जलन भी थी। इन सबके रहते हुए मैं मैं तो जागृत अवस्था में ही था, पूर्ण रूप से चेतन्यावस्था में ही था, बल्कि इतना चेतन्य था कि अचेतन के कार्य कलापों को भी महसूस कर रहा था जो कि राम-नाम के साथ अहिनिश मेरे अन्दर अचेतन मन में चल रहा था। जैसे ही मेरी बुद्धि ने इतना जाना कि अचेतन के रूप में दूसरी कोई शक्ति जो मेरे अन्दर विराजमान है, तथा ये मेरी चेतनता से अलग है तथा मेरे अन्तस् में विराजमान है, उसे मैं अब भली भाँति जान रहा हूं जैसे मैं एक तरफ चेतन रूप से राम-नाम जपते हुए कर्म में लगे हुये दिख रहा हूं तो क्या दूसरी तरफ वह अचेतन किसी दूसरे कर्म में नहीं लग सकती है। वैसे ही अपने अन्दर से ही आवाज आयी, "हां, क्यों नहीं, अवश्य ही इसका उपयोग किया जा सकता है।"

आज भी मैं नहीं जानता कि उस समय वह मेरा दुर्भाग्य था या सौभाग्य ! मेरे विचार किसी की सेवा भाव में थे, वैराग्य में थे, अथवा पूर्ण रूप से राग में लिप्त थे, इसकी व्याख्या मैं स्वयं नहीं करना चाह रहा हूँ या नहीं कर पा रहा हूँ। उस "हां" की आवाज के साथ ही मैं अपने आप को या अपने विचारों को टटोलने लगा तो सबसे प्रथम बबुआ की ही सेवा भक्ति मेरे सामने आयी। शायद उसका कारण यही रहा होगा कि अगर वह न होता तो मैं शायद इस स्थिति को प्राप्त नहीं होता। इसलिये बिना किसी विशेष विचार को लिये पहला प्रश्न जो बाद में आखिरी भी हुआ, पूछा..... । प्रश्न को बताने से पहले दो तीन बातें बबुआ के बारे में मैं आपको बता रहा हूँ जिससे आपको इस प्रश्न को समझने में कठिनाई न हो क्योंकि उस समय भी बबुआ के बारे में इतनी जानकारी तो मुझे भी अवश्य थी, पहली यह कि बबुआ पान की दुकान चलाता है। दूसरे घर में लम्बा परिवार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होने की वजह से आर्थिक तंगी बनी ही रहती है इसके साथ ही घर में लड़की भी विवाह योग्य हो रही थी। तीसरी बात और एक जान लें कि उसे सट्टे के नम्बर लगाने का शौक भी था। इतनी जानकारी मैं आपको इसलिये दे रहा हूँ इन सब बातों का प्रभाव मेरी मानसिकता पर उस समय जब मैंने अपने विचारों को टटोला था तो मैंने पाया था, तो फौरन मेरे मन में एक विचार यह कौंधा ! क्यों न किसी सट्टे का नम्बर पूछ लिया जावे और इसको बता दिया जावे ! जिससे इसको पैसे रूप में सहायता हो जावे तथा इसके द्वारा की गई सेवा का फल भी उसे मिल जावे। उसके द्वारा किये गये कृत्य से भी मैं उऋण हो जाऊँगा। मेरे स्वयं के लिये तो जो कुछ भी घटेगा वहीं मेरे जीवन को धन्य करने के लिये काफी होगा; ऐसी विचारणा मेरी बनी। बैठे-बैठे ही मैंने अपने आप की अविचार की सी स्थिति बनाने की कोशिश की। तभी बिजली की गति से दो शब्द मेरे मस्तिष्क में चमत्कारिक रूप से चमके "पन्द्रह मुण्डा" मैं तो कुछ समझ ही नहीं पाया— ये भी जबाब हुआ ? क्योंकि मैं जितना जानता था, उसके हिसाब से मुण्डा एक से नौ तक होते हैं। जबकि यहाँ शब्द आया था "पन्द्रह मुण्डा" ! मेरा चकराना कुछ जरूरी ही था। इसलिये मैंने फिर दोबारा अपने चेतन से अचेतन को और एक और प्रश्न फेंका। इस तरह काम नहीं चलेगा। अगर बताना है तो साफ करो। यह कहाँ आयेगा और कैसे आयेगा। किस दिन आयेगा और असली बात यह कि या तो यह पन्द्रह रहे या फिर केवल मुण्डा। फिर उसी विद्युत गति से साफ हुआ। पन्द्रह तारीख को भरतपुर पहुंचोगे। उस दिन शुक्रवार होगा, उसी दिन हंड़िया खुलेगी। पन्द्रह या "पन्द्रह मुण्डे" की बात फिर भी अधूरी रह गई। मुझे विस्मृत करने की एक बात यह और हो गयी थी। क्योंकि आज मेरे कार्यक्रम का आखिरी दिन है। तारीख आज हुई है केवल ग्यारह। फिर हम पन्द्रह तारीख तक यहाँ क्या करेंगे। ज्यादा से ज्यादा १२ को भरतपुर पहुंच जावेंगे। जब कुछ भी समझ नहीं आया तब मैं शान्त होकर आराम से लेट गया। दोपहर बारह बजे होंगे। शायद नींद नहीं आयी थी भूख या अन्य किसी अभाव से उठ बैठा। मेरे उठते ही बबुआ जिसको कि कुछ भी बोलने की या लिखकर देने की कठोर निषेधाज्ञा थी, लेकिन फिर भी उसने एक कागज पर लिखकर दिया— बद्रीनाथ जी के दर्शन करने की इच्छा है। पहले से बस में बुकिंग करानी पड़ती है। अगर आपकी इच्छा हो तो कल की टिकिट ले आऊँ। वैसे भी आपने अपना कार्यक्रम तीन दिन का ही करने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का रक्खा था। आज उसका आखिरी दिन है। केवल हाँ या ना में जवाब लिख दें।"

जैसे ही मैंने पढ़ा। कितने सारे विचारों के ढेर में आकर मैं गिरा एक बार तो बाबू लाल (बबुआ) पर क्रोध भी आया क्योंकि जो स्थिति मेरी चल रही थी; वह व्यवधानित हो गई थी लेकिन ईश्वर की इच्छा मानकर मैंने इसको भी अंगीकार कर लिया और पलट कर दो वाक्य मैंने भी लिख दिये। पहला यह कि "आज निर्जला है"। दूसरा— यात्रा के बारे में लिखा कि "ईश्वर की जैसी इच्छा"।

बबुआ ने जो बद्रीनाथ की बात चलाई, उससे कुछ लगने लग गया था कि शायद पन्द्रह तारीख वाली बात सच हो जाये। खैर जो भी होगा देखा जायेगा। अब दो बातें मन में घूम रही थी। एक तो रात वाली घटना जिसके अन्तर्गत ताऊजी गंगा जी को परोसा समर्पित करते समय या उसके पहले किस प्रकार से मुझे चेटक देंगे या अपनी उपस्थिति का विश्वास दिलायेंगे। दूसरी बात थी..... "पन्द्रह मुण्डा"। पन्द्रह तारीख को भरतपुर पहुँचना। लेकिन दोनों बातें भविष्य की थी। उनका वर्तमान से कोई सम्बन्ध नहीं था। इसलिये भविष्य की चिन्ता छोड़कर फिर से मैं अपने आपको संयत करने की कोशिश करने लगा लेकिन अब मन में यह निश्चित हो गया था कि आज शाम को ही खाना खाना है। इसलिये अब मन में यही बात घूमने लगी थी कब शाम होगी कब भोजन खाने को मिलेगा। कई बार तो ऐसे विचार भी मन में आये कि अब दोपहर और शाम में क्या फर्क है ? दिन तो तीसरा आ ही गया और प्रातः काल निकल ही गया है। अब तो चाहे अभी समाप्त कर दो अथवा शाम को। खाना तो एक बार ही खाना है फिर विचार आता है कि अब आखिरी परीक्षा की घड़ी पर अपना धैर्य नहीं छोड़ना चाहिये। यही तो समय है अपने आपको तपाने का। बहुत देर बाद जब घड़ी देखता तो बड़ा भारी आश्चर्य होता कि अभी पाँच मिनट ही गुजरे हैं। उसी दिन मालुम हुआ कि **जब हम समय के प्रति जागृत रहते हैं तो वह क्षण कितने ज्यादा लम्बे होते हैं। उस थोड़े से समय में कितना ज्यादा काम हम कर सकते हैं जबकि बेहोशी में सारा जीवन यों ही निकल जाता है और हम कुछ भी नहीं कर पाते, रोते हुए इस संसार में आते हैं और पछताते हुए इस संसार से**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पलायन कर जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि दोपहर के दो बजे से लेकर चार बजने तक का समय मेरे लिये सबसे कष्ट कारक समय रहा और वह कष्ट पूर्ण समय जिसके द्वारा मैं, मेरे शरीर की प्रत्येक हरकत के प्रति ही नहीं बल्कि मन की प्रत्येक विचारणा, प्रत्येक आशंका एवं मन की चपलताओं के प्रति होशपूर्वक उनका साक्षात्कार कर रहा था और उनसे केवल इस प्रकार की कठिन परिस्थितियों में ही सामना किया जा सकता है। तपश्चर्या का महत्व और उसका हमारे मन पर पड़ने वाला प्रभाव, उसी दिन ठीक से समझ में आया कि क्यों हमारे योगियों ने, मुनियों ने अभाव का रास्ता चुना ? क्योंकि अभाव के रास्ते को तपश्चर्या को साधते-साधते "जीवन" के अभाव को भी हम साधने को तैयार हो जाते हैं।

जैसे तैसे चार बजे और समय काटने की गरज से तीन-चार दिन की बढ़ी हुई दाढ़ी काटने के बाद शीशे में जब पहली बार शक्ल देखी तो चेहरा काफी अन्दर धंसा हुआ सा तो लगा लेकिन किसी भविष्य के आशा ने मन पर उस समय लीपा-पोती कर दी। अब मैंने इशारों से बाबू लाल को बाल्टी लेने के लिये कहा और गंगा स्नान के लिये, कमरे से बाहर निकला और नीचे उतर कर बाजार में पंचामृत बनाने के लिये सामान खरीदा और लिखकर बाबू लाल को बताया कि दो जगह खाना ले ले दोने में मिठाई पूड़ी साग अचार सब कुछ होना चाहिये। दूध-दही शहद, घी को बाल्टी में डालकर गंगा जी पर चल दिया। पंचामृत का पांचवा भाग गंगाजल छान कर वहां डालना था।

जब मैं और बाबू लाल गंगा घाट पर पहुंचे। घाट पर कोई पांच सात आदमी ही होंगे। कोई भजन कर रहा था, कोई स्नान कर रहा था, कोई-कोई बैठे-बैठे गंगाजी को देखकर आनन्द मग्न हो रहा था। धारा से चार पाच सीढ़ी ऊपर मैंने अपना सामान रख दिया। सामान के पास बाबू लाल बैठ गया। मैं धारा में उतर कर गोता लगाने लगा। जब दो-तीन डुबकी लगा ली तब बाबू लाल ने कहा, "धारा में वेग अधिक है। ऊपर आ जाओ।" मैंने भी यही उचित समझा। ऊपर आकर मैंने अपने कपड़ों पर, बबुआ पर तथा सभी सामान पर पवित्र करने के उद्देश्य से गंगा जल के छींटे मारे, तत्पश्चात् पंचामृत तैयार करके गंगाजी के नाम पर परोसा लेकर उसमें एक रुपया रखकर और थोड़ा सा पंचामृत डालकर धारा के जल में खड़े होकर महारानी गंगे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का नाम लिया और धीरे से धारा में छोड़ दिया वह थोड़ी दूर कोई एक डेढ़ मीटर तक तैरा और बाद में डूब गया। लेकिन थोड़ी देर बाद ही पत्ते की पत्तल जिसमें वह सामान रखा हुआ था ऊपर तैर आयी और जल के तीव्र वेग के साथ बह गयी। इसमें तो कोई खास बात नहीं थी। क्योंकि बजन होने के कारण से पहले तो डूब गयी। बाद में बजन नीचे पानी में रह गया तो हल्की पत्तल ऊपर तैर कर बह गई। मेरे दिल की धड़कनें शायद कुछ तेज हो गई थी क्योंकि अब ही वह समय था जब मुझे किसी प्रकार से, ताऊजी की तरफ से कोई संकेत मिल सकता था। खैर मैं फिर ऊपर सीढ़ियों पर आया दूसरी पत्तल में रखा सामान उठाया। एक रुपया का सिक्का रखा, थोड़ा सा पंचामृत डाल कर सीढ़ियां उतरने लगा। इस सारे के सारे कार्यक्रम को वहां उपस्थित लोग कौतुहल से देख रहे थे क्योंकि अभी तक मैं मौन था और बबुआ से मैं केवल जरूरत भर के इशारों से काम चला रहा था। देखने में मैं कोई बाबा टाइप अथवा साधु-सन्यासी टाइप भी नहीं लग रहा था इसलिए अन्य लोगों का मेरे उस समय के क्रिया कलापों में अनायास ही उत्कण्ठा जाग जाना कोई विशेष बात नहीं थी। दूसरे परोसा के सामान को लेकर कमर-कमर जल में पहुंचा। जिस प्रकार से भी ताऊजी के चित्र अथवा स्मरण मैं अपने मन में ला सका लाया। एक क्षण को मन में ही कहा यदि आपने वास्तव में मुझसे यह सब कुछ चाहा है तो मुझे भी संतुष्ट ही रखना, इतना सोचकर मैंने ठीक पहले की तरह ही सारा सामान बहती तेज धारा में छोड़ दिया मेरे छोड़ने भर की देर थी कि "मेरे सामने कोई तीन फुट दूर— लगभग पांच फीट की लम्बाई में और दो फीट या डेढ फीट की चौड़ाई में पानी में एक गहरी दरार बनी और सारा सामान उसमें समा गया। मेरे पैरों के पास के पानी में कुछ भी बदलाव उस समय नहीं आया। न ही कोई डर व घबराहट मुझे लगी। बल्कि जैसा कि मेरे मन में विश्वास था, वह ही इस रूप में प्रकट हुआ था। उस स्थान पर खड़े-खड़े में तो उल्टे खुशी से झूम उठा था जबकि बगल में नहाने वाला एक अन्य व्यक्ति जैस-तैसे अपनी जान बचाकर सीढ़ियों की तरफ भागा था। बबुआ भी वहीं बैठा यह सारा का तमाशा देख रहा था। उसने तो गंगा महारानी की जय जोर-जोर से बोलना शुरू कर दिया था अन्य लोगों का ध्यान भी इस घटना की तरफ हो गया था क्योंकि वह आदमी जो डर कर भागा था सबसे कह रहा था, "कितने ही महिनों से मैं यहां स्नान कर रहा हूँ लेकिन किसी जन्तु को नहीं देखा और न महसूस किया, लेकिन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आज तो पता नहीं यहां मगर आ गया था या कोई अन्य बाधा ? परमात्मा ही जानता है।" दूसरे किसी ने भी उसकी बातों को नहीं काटा लेकिन मैं चुप रहकर भी सारी स्थिति समझ रहा था। अब जबकि सारा कार्यक्रम सफलता पूर्वक समापन की ओर था। अब केवल इतनी सी बात ही शेष थी कि कहीं भी महादेव जी के मन्दिर में शिवलिंग की पूजा करके मैं भी प्रसाद ग्रहण करूँ। पास ही एक बड़ा शिव मन्दिर था। मेरा विचार था कि पंचामृत से शिवलिंग को अच्छी तरह स्नान कराके फिर जलहरी से प्राप्त पंचामृत को ग्रहण करूँगा। जब बबुआ ने पुजारी को अपना यह कार्यक्रम बताया तब पुजारी ने साफ इन्कार कर दिया था क्योंकि अब तो चार बज रहे थे और रोजाना दो बजे तक ही शिवलिंग को स्नान कराये जा सकते थे। दो बजे बाद तो भगवान का फूलों से अभिषेक हो जाता है। इस समय तो आप केवल आप दर्शन मात्र ही कर सकते हैं। कोई जल या पंचामृत नहीं चढ़ा सकते हैं। वहां जब बिलकुल मना हो गई तो हमने सोचा, कोई बात नहीं। किसी दूसरे मन्दिर में जाकर अपना कार्यक्रम करेंगे। लेकिन हमें बड़ी निराशा हाथ लगी। जब दसियों मन्दिरों में हमें वही कोरा जबाब मिला और लगा कि जैसा मैं चाहता हूँ वैसा होना शायद आज तो सम्भव नहीं है, कल प्रातः भले ही हो। मेरे सामने यह बात एक चुनौती के रूप में मुझे लगी, हो सकता है साधना के इस अन्तिम सोपान पर मेरी परीक्षा ही ली जा रही है और जैसे ही यह विचार मेरे मन में आया; भूख तथा निर्जला की वजह से प्यास से व्याकुल होते हुए भी मैंने एक संकल्प फिर से ले लिया। यदि प्रभु को ऐसी ही इच्छा हो तो मुझे यह भी स्वीकार है। लेकिन प्रथम प्रसाद तो जलहरी से ही प्राप्त करूँगा तब ही जल ग्रहण करूँगा। तथा तब ही मौन तोड़ूँगा। भले ही कल तक यह सब कुछ और क्यों न झेलना पड़े।

तभी एक बड़ा सुन्दर सा सन्यासी गली में से निकल कर बबुआ से बातें करने लगा। बबुआ ने सारी स्थिति उसे समझाई तब उसने एक रास्ता सुझाया कि ऐसा करो कि तुम्हें श्रद्धा से मतलब है। प्रसाद की एक बूद मिले या पाव भर उससे क्या अन्तर पड़ता है। एक चम्मच के बराबर शिवलिंग पर चढ़ा दो और चम्मच के बराबर ही शिवलिंग की जड़ में चढ़ा दो और जो कुछ उसके बाद जल-हरी में टपक जाये उसे प्रसाद ग्रहण करके आप अपना कार्य सिद्ध करो। इसमें तुम्हें अड़ने की क्या आवश्यता है ? फिर दुबारा से पुजारी से बातें करों। इसके बाद जब हमने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फिर दुबारा उसी पुजारी से बातें की तो आश्चर्य यह हुआ जो पुजारी पहले रूखा होकर बोला था। अब उसने सहज ही स्वीकृति दे दी। मन ही मन मैं उस सन्यासी का धन्यवाद दिये बगैर रह न सका।

जब से गंगाजी में वह परोसा वाली घटना घटी तब से मैं अपने आंसूओं को बड़ी मुश्किल से रोक पा रहा था आंसू बार-बार बाहर आकर छलक छलक रहे थे। शिवलिंग पर पंचामृत चढ़ाकर जैसे ही सिर झुकाया आंसुओं का अटूट श्रोत आंखों से फूट पड़ा। बड़ी मुश्किल से हिचकियां रुकी। तब कहीं जाकर सिर ऊपर उठा सका। मन्दिर से बाहर निकलकर प्रसाद पाने वालों में सबसे पहले वही सन्यासी खड़ा था। उसने प्रसाद लेने के बाद इशारे से बता दिया कि यह औरों को बांट दो उसके बाद वह सन्यासी फिर कभी दिखाई नहीं पड़ा। सबसे अन्त में बबुआ के बाद मैंने थोड़ा सा पंचामृत लिया भारत साधु समाज के कमरों के नीचे साधु समाज की ही दुकानों में पूड़ी कचौरी वालों की ही दुकान हैं। वहीं से थोड़ा सा ही अन्न मैंने लिया। इन दो एक पूरी कचौरियों ने ही मुझे बहुत कुछ परेशानी में डाल दिया। उनका इतना भारी नशा उस समय मुझे हुआ कि मुझे उसका सहन करना भी कठिन हो गया था इसकी आशंका मुझे भी थी लेकिन उस समय सादा कच्चा खाना मिलना भी संभव नहीं था। मेरा चेहरा, जो पहले– जब मैं दाढ़ी बना रहा था। सूखा हुआ और पीला लग रहा था। इस थोड़े से अन्न खाने के बाद ही सुर्ख गुलाबी लगने लगा था। बबुआ तो क्या मैं स्वयं भी उस आभा को देखकर आश्चर्यचकित हुये बगैर नहीं रह सका था।

घंटे आधे घंटे के बाद जब मैं संयत हुआ तो बबुआ से पूछा, "बद्रीनाथ की टिकिट बुक करा आये" ? "करा आया ? तुमने तो जवाब में लिखा था कि ईश्वर की इच्छा। मैंने सोचा इनकी इच्छा जाने की नहीं है। इसलिये नहीं गया।" मैंने कहा, नहीं ऐसी बात नहीं है। अभी मई का दूसरा हफ्ता चल रहा है। हो सकता है कि बर्फ से अभी रास्ता ठीक नही बन पाया हो तथा बरसात भी अभी पड़ कर चुकी है। ऐसी बरसात में पहाड़ों में फिसलने की भी बीमारी रहती है। मैंने तो इसलिये लिखा था। रही मेरी इच्छा की बात— नर नारायण की तपस्थली को कौन तपस्वी अपने कार्यक्रम पूरा करने के बाद नहीं जाना चाहेगा। अब तो शाम होने को आयी है। कल सुबह अगर कल की ही बुकिंग मिल जाये

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तो चुक करा आना। अगर आगे की मिले तो वापिस भरतपुर चलेंगे।

एक बात और जो मुझे बबुआ के कानों में डालनी थी १५ मुण्डा वाली लेकिन उसके सीधे सीधे कहने में मुझे एक शंका खड़ी हो गयी थी। वह यह कि अगर यह बात सत्य निकल आती है तो यह फिर जिन्दगी भर मेरा पीछा उस रूप में नहीं छोड़ने वाला है। रही बात किसी के भले और बुरे की, ईश्वर की इच्छा के बिना कौन किसी का भला चाह सकता है और कोन किसी का बुरा कर सकता है लेकिन फिर भी इतना तो मैं अपने से भी इच्छा रखता था कि थोड़ा सा इशारा इसको अवश्य दिया जावे जिसके जब वह बात यदि सत्य निकले तो उसको याद दिलाकर तपस्या की प्राप्ति की ओर इशारा दिखाया जा सके।

इसलिये काफी सोच समझकर तथा अपने आपको बिल्कुल सहज बनाते हुये बहुत ही सहज भाव में मैंने बातचीत के दौरान बबुआ से पूछा, "क्यों बबुआ मुण्डे कितने और कौन से होते हैं? "वह बोला, "एक से नौ तक के होते हैं।" बात आयी गई हो गई। अगले दिन बारह मई को बारह बजे की सीट लेकर हम बद्रीनाथ रवाना हुये। रात्रि को किसी जगह रूककर तेरह तारीख को दोपहर दो बजे बद्रीनाथ पहुंचे। सीधे गर्म कुण्ड पर जाकर स्नान किया। स्नान करने के बाद हम ३ बजे मन्दिर की सीढ़ियों पर पट खुलने का इन्तार कर रहे थे। साढ़े तीन बजे से दर्शन शुरू हुये। चार बजे प्रसाद वगैराह लेकर प्रसन्न चित्त वापिस बस स्टेण्ड की तरफ इसलिये चल दिये शायद वापसी के लिये कोई बस मिल जावे और ऐसा ही हुआ। पौने पाँच बजे के करीब आखिरी बस हमें मिल गई। इस प्रकार हमने तेरह तारीख को ही वापिस ऋषिकेश की ओर लौटना शुरू कर दिया। रात्रि में फिर रास्ते में रूके। चौदह तारीख को ग्यारह या बारह बजे दोपहर को ऋषिकेश आ गये। ऋषिकेश से हरिद्वार आये वहाँ से बम्बई देहरादून हमसे निकल गई थी। हमने बस में बैठकर दिल्ली की यात्रा शुरू की, नई दिल्ली स्टेशन से हमें वह देहरादून मिल गई। इस प्रकार १५ तारीख की सुबह साढ़े चार बजे या पांच बजे लेट होने की वजह से हम भरतपुर में थे। दिन भी शुक्रवार था। अभी तक तो सारी की सारी बातें सच ही सिद्ध होती जा रही थी। करीब तीन-चार दिन बाद मैंने बबुआ से पूछा कि "बबुआ जिस दिन हम आये थे उस दिन यहां हंड़िया खुली

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होगी ?" मेरा तो इतना कहना था जैसे वह सोते से जागा । बड़ी ही शोचनीय दशा बनाकर बोला, "गुरु हमसे तो गलती हो गई और नुकसान भी हो गया ।" मैंने पूछा, "क्या बात हो गयी ?" तो बोला, " मेरे भाग्य में ही नहीं था। तुमने तो मुझसे चलाकर पूछा था कि मुण्डे कितने प्रकार के होते हैं ? लेकिन मेरे दिमाग में ही भूसा भर गया था ।"

मैंने कहा, "पागल ! इसमें ऐसी क्या बात है ? मेरे पास कोई नम्बर थोड़े ही था क्योंकि अगर मैं कुछ कहता भी तो यही कहता, १५ मुण्डा ! जबकि मुण्डा एक से नौ तक ही तो होते हैं ।"

" बस-बस ; अब और कुछ मत कहो। इतना ही कह देते तो काम बन जाता। १५ की इकाई ५ ही तो हुई वही पांच मुण्डा तो आया था ।" बबुआ के इतने हिसाब किताब की बात जो मेरे मन में अभी तक किसी प्रकार से भी नहीं आयी थी। इसको सुनकर मैं भी अन्दर-अन्दर से रोमांचित हुये बगैर नहीं रह सका। तभी मुझे महात्मा गाँधी की वह तथाकथित मानसिक आवाज जो उन्हें कभी-कभी आकर मार्ग प्रदर्शित किया करती थी, मुझे सत्य लगने लगी थी, क्योंकि महात्मा गाँधी ने भी तो अफ्रीका के समुद्र तट पर आश्रम बनाकर भारत के स्वतन्त्रता के आन्दोलन को हाथ में लेने से पहले सन्यासियों जैसा जीवन बिताकर अपने आपको तपा लिया था और तभी उन्हें अर्न्तमन की आवाज को पढ़ने की कला समझ में आ गयी होगी कि बुद्धि की आवाज कौनसी है तथा अर्न्तमन की कौनसी ? हमेशा ही मैंने आज तक बुद्धि के कला कौशल को अर्न्तमन के अनजाने से बिल्कुल असम्भव से दिखने वाले दो चार शब्दों के सामने हारते हुए पाया है। कितनी ही बार इस प्रकार की बातों के द्वारा प्रभावित होकर मेरे मित्रगण मुझ से प्रभावित होते रहे हैं ।

यहां कुछ बातें मैं साफ कर देना चाहता हूँ क्यों कि इस मार्ग से अनजान लोग ऐसी अप्रत्याशित बातों को किसी व्यक्ति विशेष से सुनकर उसे भगवान या ईश्वर पुत्र या पैगम्बर या सिद्ध, फकीर और न जाने क्या क्या मानने लग जाते है और ऐसा मानकर अनजान लोग अपने मन में यह धारणा बैठा लेते हैं कि सिद्ध इस संसार में जिस प्रकार से चाहे घटनातों को बदल सकते हैं लेकिन यह गलत है जबकि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सत्य तो यह है इनको भविष्य की जानकारी वर्तमान में हो जाती है बस वह उसी के अनुरूप अपना कार्य पहले से शुरू कर देते हैं। इसमें से इस मिथ्या धारणा को बिल्कुल निकाल देना चाहिये कि उसने अपनी बात को बड़ी सिद्ध कराने के लिये उन परिस्थितियों को अपने अनुकूल मोड़ लिया था जबकि वह परिस्थितियों के अनुकूल स्वयं बहुत पहले मुड़ गया था। महात्मा गाँधी मस्तिष्क तो से यह कभी नहीं चाहते थे कि हिन्दुस्तान के टुकड़े कर दिये कर जायें एक बार तो उन्होंने यहाँ तक कह दिया था कि हिदुस्तान के टुकड़े करने से पहले मेरे टुकड़े करने होंगे। लेकिन वह किस प्रकार इस सबको रोकेंगे उन्हें खुद पता नहीं था? उस समय अपने मस्तिष्क के पक्ष में उस आवाज की बड़ी बेचैनी से प्रतीक्षा कर रहे थे लेकिन समय की धारा में कुछ और ही होना निश्चित था। आवाज कहाँ से आती अथवा मार्ग दर्शन क्यों कर होता और यही कारण था कि गाँधी के देखते देखते हिदुस्तान का विभाजन हो गया और वे देखते रहे एक निरीह बालक की तरह। इसलिए यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि कोई भी सिद्ध हो, जो कुछ भी होना है इस प्रकृति में उसके खिलाफ वह भी नहीं जा सकता है। अगर पिछला इतिहास उठा कर देखें तो पता चलेगा कि कृष्ण न तो स्वयं महाभारत में हुये जन विनाश को रोक सके और न ही अपने तथाकथित छप्पन करोड़ यादवों में फैली अव्यवस्था को ही रोक सके। राम अपना प्रभुत्व आज सारे संसार पर छोड़ रहे है लेकिन अपने समय में अपने प्रजा के धोबी को नहीं समझा सके। क्या गाँधी, राम, कृष्ण ये सब तपस्वी कहलाने लायक भी नहीं थे। क्या गांधी अपने मन की चंचलताओं पर विजय प्राप्त किये बिना ही आमरण सत्याग्रह का व्रत लेते थे और इतने लम्बे-लम्बे उपवास क्या एक भोजन भट्ट ले सकता था। राम चौदह वर्ष तक वन में रहकर तपस्वी ही तो हो गये थे। कृष्ण जिनको हम योगावतार ही कहते हैं। क्या पूर्व जन्म की तपस्या के बिना अपने बालपन से लेकर आजीवन अपने चमत्कारों से चमत्कारित कर सकते थे। तो कहने का मतलब सिर्फ इतना है— प्रार्थना के रास्ते से हम अपने मन की लहरों को पढ़ पाने में समर्थ होते हैं। क्योंकि तपश्चर्या के द्वारा हम विजातीय तत्वों से अपना बचाव करना सीख जाते हैं या दूसरे शब्दों में तपश्चर्या के द्वारा हम अपनी उगी हुई फसल में से खरपतवार को उखाड़ कर फेंकने में समर्थ हो जाते हैं। फिर हमारा शुद्धतम् स्वरूप बचता है जिसके अन्दर असीम सम्भावनों की आहट सुनाई देती है अर्न्तमन की शक्तियों की पग ध्वनि सुनाई देती है। जिसके कारण हमारी क्षमताओं में असीमित वृद्धि हो जाती है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसकी सहन शीलता बढ़ जाती है अब वह दुखों की परवाह नहीं करता। जब उसको सुख ही विचलित नहीं करते तो सुख भी उस पथिक को पथ से नहीं भटका सकते। वह अपने शब्दों पर, अपने आवतों पर, अपने शरीर की क्रिया कलापों पर, अपने मान सम्मान की परवाह किये बिना, अपनी साधना की शक्ति से चित्त की वृत्तियों पर संयम बरतने लगता है।

ये तमाम बातें एक ब्रह्म ज्ञानी के लिये खेत में खरपतवार के समान ही तो है और इनसे साधक अपनी क्षमतानुसार छुटकारा पाकर और मग्न होकर प्रभु की लीला का रसास्वादन करता रहता है **वह इन्द्रियों में रहते हुये भी** इन्द्रियतीत रहता है। जैसे कीचड़ में रहते हुये कमल का फूल। उस कीचड़ से बिना कोई सम्बन्ध बनाये एक दम साफ सुथरा और सुन्दर रहता है। कमल को देखकर तो लगता ही नहीं कि यह प्यारा सा फूल इस कीचड़ में से ही जन्मा है। वह कीचड़ में रहकर भी किसी दूसरे प्रकार की आभा, किसी दूसरी दुनियां के अनोखे आनन्द की खबर देता है। हम जब जब प्रार्थना में उतरते हैं हमारे ऊपर से इन्द्रियों की पकड़ कम होती चली जाती है। प्रार्थना के द्वारा हमें **जो प्राप्ति होती है। उसका सबसे बड़ा पहलू ही यह है कि उसके बाद हम इन्द्रियों के गुलाम न रहकर इन्द्रियों को सवारी के रूप में इस्तेमाल करते हैं। क्योंकि उनकी व्यर्थता का हमें पता चल जाता है। जब हमें किसी के स्वरूप का पता विजातीय के रूप में चल जाता है तो हम उसे या उसकी साक्षाज्ञता को क्यों कर सहन करेंगे? अगर कुछ बचाकर भी रख छोड़ेंगे तो वह भी जानबूझ कर** इसलिये कि सिर्फ उनसे जो फायदे लिये जा सकते हैं वे ले लिये जायें क्योंकि प्रत्येक स्थिति के दो पहलू होते हैं एक अच्छा दूसरा बुरा। **जब हम अपना होश जागृत कर लेते हैं तब हम उज्वल पृष्ठ का उपयोग करने के लिये ही इन्द्रियों का उपयोग करते हैं। इसी स्थिति को हम इन्द्रियों रूपी घोड़ों को शरीरिक रूप में स्वयं सवार बनकर जोतना कहते हैं।** इसमें ध्यान रखें—इन इंद्रियों का संसार इतना विस्तृत या इतना मायावी है कि कई बार आपको लगेगा कि हम इन्हें जोत रहे हैं लेकिन ऐसा भी हो जाता है बाद में हमें पता चलता है कि वास्तव में सही बात हो तो यही रही कि "अप्रत्यक्ष रूप से हम ही जुतते रहे हैं।

आप किसी अनजान मुहल्ले से गुजरते हैं तो उस मौहल्ले के कुत्ते आप पर भौंकते हैं। अगर आप उनसे कतरा कर भागना चाहते हैं तो समझ लीजिये आपका

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पीछा वे कभी भी नहीं छोड़ने वाले हैं और जितना आप उनसे भागोगे उतना-उतना और आप उनको अपने पीछे-पीछे पाओगे। लेकिन एक और दूसरी परिस्थिति है। यदि आप हिम्मत से होशपूर्वक गौर से उन कुत्तों की आँखों में आँखें डालकर देखना शुरू कर दें तो वे आँखों के जरिए ही वे आपसे पराजित हो जायेंगे। वे आपके ऊपर भौंकना तो छोड़ ही देंगे साथ ही थोड़ी देर बाद आपके सामने से वे नदारद भी हो जायेंगे। लेकिन ध्यान रखना ! **ऐसा तभी होगा जब आप उनसे भागेंगे नहीं बल्कि उनका हिम्मतपूर्वक सामना करेंगे।**

ठीक ऐसी ही स्थिति इन एन्द्रिक वासनाओं की है। अगर आप बचकर भागना चाहते हैं तो भागोगे कहाँ ? क्योंकि ये तो हमारे अन्दर हैं जहाँ-जहाँ हम जायेंगे वहाँ-वहाँ इनको भी पायेंगे अपने आपके अन्दर। इनसे आप भाग तो नहीं सकते ! अगर मेरे मन को क्रोध की बीमारी है तो जिस समाज में जिस देश में जाऊँगा; क्रोध भी मेरे चित्त के साथ ही जाएगा। यह ऐसा नहीं है कि एक पैर खराब है तो उसे कटवा दिया, पीछा छूटा इस बीमारी से। आप सारा का सारा शरीर भी विच्छेद कर दें तब भी आप अपने मन की बीमारियों तक नहीं पहुँच सकेंगे। ये बीमारियाँ शारीरिक नहीं हैं ये अशरीरी हैं और इनका स्थल है हमारा मन, ध्यान रहे मस्तिष्क नहीं ! क्योंकि मस्तिष्क यन्त्र है शारीरिक। इसलिए इनका उपाय शारीरिक नहीं हो सकता। इनका उपाय भी मानसिक ही होगा। **मन के किसी कोने से ही मानसिक यन्त्र खोजना होगा और यह उपाय प्राप्त होता है तपश्चर्या से, प्रार्थना से, होश पूर्वक जागरण से, चिन्तन से मानसिक शक्ति के रूप में। दूसरे शब्दों में प्रार्थना से सिद्धियों की प्राप्ति होती है।** सिद्धियाँ क्या हैं ? उनके स्वरूप की वास्तविक परिभाषा या व्याख्या क्या है ? इस बारे में जब हम गौर करते हैं तो हम अपने आपको फिर वहीं खड़ा पाते हैं। जहाँ मन पर विजय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को ही हम सिद्ध मानते हैं।

संशय सिर्फ इतना है वह किन ऊँचाइयों तक अपनी सामर्थ्य बढ़ा चुका है या वह कितना सामर्थ्यवान है। मन की ऊँचाइयों को छूने में जितना ऊँचा पुरुष उठता जाता है। उसकी पहुँच उतनी गहरी होती चली जाती है। जैसे कोई साधक अपनी उस मानसिक शक्ति को शारीरिक उपयोग में लेता है तो वह अपनी काया को निरोगी रखने में सक्षम हो जाता है, जैसेकि दयानन्दसरस्वती, इसी प्रकार यदि कोई अन्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधक इसी मानसिक शक्ति को अपनी बुद्धि के विकास में लगा देता है फिर तो उसके मुँह से जैसे साक्षात माँ सरस्वती ही बोलती है। जैसे विवेकानन्द, रजनीश। कोई अन्य इसका उपयोग अपनी तपस्या में ही लगा देते हैं जिसके द्वारा वह और ज्यादा कठिन तप करने के लिए अपने आहार के संयम पर इतनी क्षमता बढ़ा लेता है कि वहाँ तमाम शारीरिक विज्ञान फेल हो जाता है कि तमाम शरीर जिन्दा रहने के खिलाफ है फिर भी प्राण कहाँ अटके रह जाते हैं ऐसे कई एक अवसर गाँधीजी के जीवन में आए हैं। विनोबा ने भी इसी प्रक्रिया को भली-भाँति परखा था। कुछ लोग अपनी मानसिक क्षमता बढ़ाते हैं जो एक जगह ही बैठे-बैठे अपने विचारों को टैलीपैथी के द्वारा अपने इच्छित व्यक्ति के पास भेज देने की क्षमता रखते हैं इस प्रकार के कितने ही सन्त हमारी संस्कृति की कथाओं में मौजूद हैं तथा आज भी यदा कदा प्रत्यक्ष दर्शियों द्वारा ऐसे व्यक्तियों से मिलन होना बताया जाता है कि फलां सन्यासी के पास पहुँचने पर उसने हमारा नाम गाँव आने का प्रयोजन एक प्रकार से हमारे मन को पढ़कर ही बता दिया। कुछ लोग अपनी आँखों के रास्ते से आपकी चेतना को प्रभावित करने की क्षमता जागृत कर लेते हैं और अपने सामने वाले व्यक्ति की आँखों में आँखें डालकर ही उसे अपने इच्छानुसार प्रभावित कर देते हैं अथवा सम्मोहित कर देते हैं। **ये सब सिद्धियों के अनन्य रूप हैं जो हमें अपनी लगन, मेहनत और तपन से प्राप्त होती है।**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ६

कुण्डलिनी का स्थान

बहुत से व्यक्तियों में एक प्रकार की बीमारी रहती है जिसमें वे अपनी बुद्धि कौशल से प्रत्येक अच्छी या बुरी बात की काट करना अपना अधिकार समझते हैं। परन्तु क्यों चाहते हैं, वे ऐसा ?

इस बात का तो स्वयं उनको भी पता नहीं रहता, यह सच है कि बुद्धि तक की बातों से तो वे पूर्णतया परिचित अच्छी तरह से रहते हैं। परन्तु बुद्धि से बाहर की बातों को जब उनके समक्ष रखा जाता है तो उनमें बात की गहराई तक समझने की अपेक्षा अपना फैसला देने की तत्परता ज्यादा रहती है और कहते हैं—ये सब मिथ्याभ्रम की बातें हैं बिना बुद्धि के कुछ भी नहीं हो सकता। इस प्रकार के बुद्धि जीवी उस बात को तो मान्यता प्रदान करते हैं। जिसको इस संसार के गिनती के दस बीस वैज्ञानिकों ने ही जाना है। लेकिन ये लोग उस कथन की पुष्टि करने को तैयार नहीं होते, जिसको संसार के लाखों व्यक्तियों ने स्वयं अपने अनुभव से ही जाना है।

वैज्ञानिक डार्विन ने एक बात अपनी समझ से जानकर कि मनुष्य बन्दर की सन्तति है अथवा सूर्य से पृथ्वी के अलग होकर ठण्डा होने के बाद(सूक्ष्म एवं कोशिकी माइक्रोस्कोपिक जीवों से हुई) वर्षा से उत्पन्न कीचड़ में से आदमी पनपा है; यह कहकर इस संसार को पूरी एक शताब्दी तक भ्रम में डाले रखा। लेकिन आज सर फ्रेह हाइले ने डार्विन के मनुष्य की उत्पत्ति के सिद्धान्त की रूपरेखा ही बदल दी है। उनका तो यहाँ तक कहना मेरे अनुसार यह सिद्धान्त ज्यों का त्यों कायम ही नहीं है। वे कहते हैं कि मनुष्य जैसा जीव एवं अद्भुत क्षमताओं वाला प्राणी ब्रह्माण्ड के किसी अन्य नक्षत्र से ही इस पृथ्वी पर उतरा है। और यहाँ आकर उसने अपनी वंश वृद्धि की है। पहले ये बुद्धि की बीमारी से ग्रस्त लोग डार्विन को मानते रहे थे, अब ये ही बीमार सर फ्रेह हाइले की बातों को मानने लग जावेंगे। कुछ बहुत ज्यादा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अन्तर नहीं है; डार्विन और हाइले की बातों में, क्योंकि न तो डार्विन ने ही कीचड़ से आदमी पैदा करके दिखाया था और न ही हाइले ही ब्रह्माण्ड के किसी नक्षत्र से मानव को उतारकर दिखा रहे हैं। दोनों ने ही बुद्धि, कल्पना और अपनी वैज्ञानिक क्षमताओं का ही उपयोग करके अपना सिद्धान्त प्रतिपादित किया और दोनों ही तथ्यों से परे रहे हैं आज भी। सभी ने मानव की उत्पत्ति या प्रकृति में जीव की उत्पत्ति को जानने के लिए इस मानव देह से बाहरी तथ्यों पर अपना समय खर्च किया है, उन्होंने सोचा है कि कहीं न कहीं कीचड़ में अथवा ब्रह्माण्ड में इसका कारण होना ही चाहिए।

जबकि हमारे ऋषियों ने, हमारी देश की संस्कृति के शिक्षकों ने हमें स्वयं पर जोर देने के लिए कहा है। उन्होंने हमेशा कहा कि यदि तुम इस प्रकृति के ज्ञान के बारे में जानना चाहते हो तो उसे बाहर मत खोजना नहीं तो तुम्हें भ्रम के अलावा कुछ नहीं प्राप्त होगा। **यदि तुम्हें प्रकृति के द्वार पर दस्तक देनी है या प्रकृति के ज्ञान के कपाट तुम्हें खोलने हैं तो तुम स्वयं से ही उस यात्रा को शुरू करना। क्योंकि तुम स्वयं भी तो प्रकृति के एक अंश ही हो और जितना ज्यादा अच्छी तरह से प्रयोग तुम अपने ऊपर कर सकते हो, दूसरे के ऊपर प्रयोग करने का कोई भी तरीका तुम्हारे पास कहाँ है?** लेकिन बुद्धिवादी लोग यह कहते हैं सिर तो हम किसी दूसरे का मूड़ें और सीख जायें हम। हमेशा बुद्धि हमें अनुभव करने से बचाती है। क्योंकि सबसे ज्यादा कठिनाई अनुभव के दौरान उसको ही झेलनी पड़ती है। हम कोई नया काम शुरू करते हैं तो हमें उस योजना पर हजारों बार सोचना पड़ता है। बड़ी रिस्क उठानी पड़ती है, बड़ी तैयारी करनी पड़ती है, तब भी क्या भरोसा कि हम सफल होंगे ही। केवल इसी झंझट की वजह से ही बुद्धि हमें हमेशा बचाती रहती है। जहाँ हम हैं ठीक हैं। खूब खाना मिल रहा है। खूब मजे हो रहे हैं। क्या जरूरी है कि बेकार में हम अपने जीवन का समय बर्बाद करें। लेकिन जो खोजी पुरुष होते हैं वे कुछ और तरह के होते हैं जिन्हें कुछ करना होता है वे इन सवालों को व्यर्थ का बोझ मानकर ऐसे उतारकर रख देते हैं जिस प्रकार सम्राट रात्रि को सोते समय अपने मुकुट को उतारकर रख देता है।

इसलिए हमें अपने अस्तित्व के श्रोत को यदि जानना है तो व्यर्थ के प्रश्नों के बोझ से अपने मस्तिष्क की शक्ति को व्यय होने से बचाना होगा, जो विचार हमें

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रास्ते पर यात्रा शुरू करते समय हतोत्साहित करें उन्हें वे जिस प्रकार आपके मस्तिष्क में आयें उसी प्रकार उनको गौर पूर्वक ध्यान देकर देखें और अपने मानस पटल पर से तिरोहित हो जाने दें। विचारों से छुटटी पा जाने का सर्वोत्तम साधन यदि कोई इस दुनियाँ में है तो वह है "ध्यान" !

ध्यान की अवस्था में हम अपने आपको विचार शून्य पाते हैं। लगनपूर्वक ध्यान का केवल साल छः महीने अभ्यास करने के पश्चात् ही हम जान जाते हैं कि ध्यान ही वह साधना है जिसके द्वारा हम अपने मस्तिष्क पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं। अब तक हम अपने मस्तिष्क को ही इस देह का संचालक मानते रहे हैं। जबकि ध्यान सिद्ध करने के पश्चात् हम अपने मन को अपने ऊपर संचालित करते हुए पाते हैं। तब ही इस बात को ठीक से जान पाते हैं कि बुद्धि और मन दो अलग अलग चीजें हैं तभी हम इस बात से भी परिचित होते हैं कि बुद्धि कुछ अलग ही कहती है हमसे और मन हमें और कहीं ले जाना चाहता है। बुद्धि के द्वारा हम अपने शरीर को लेकर बैठते हैं अपने कमरे में ध्यान करने को लेकिन मन के द्वारा हम स्वयं पहुँच जाते हैं हजारों मील दूर। वहीं के दृष्य से हम अपना इस कदर सामंजस्य बैठा लेते हैं कि यह भूलना भी कठिन हो जाता है कि हम अभी थोड़ी देर पहले उस स्थान पर नहीं थे। लेकिन इस कल्पना की शक्ति को या इन मानसिक शक्तियों को हमारा विज्ञान मस्तिष्क की ही शक्तियाँ मानता है। इसी बात का सहारा लेकर बुद्धिजीवी अपने अहम् में रह जाते हैं और मन की शक्तियों को भी बुद्धि की शक्तियाँ ही मान लेने की गलतियाँ कर जाते हैं। चूंकि उनके मस्तिष्क के द्वारा कोई चमत्कार उन स्वयं को नहीं होता है इसलिए दूसरे अनपढ़-गंवार बाबाजी अथवा सन्यासियों के द्वारा कथित चमत्कारों को ये लोग अन्धविश्वास, ढोंग या धोखा-धड़ी की उपमा देते हैं, और हम सभी देखते हैं, इस वैज्ञानिक युग में भी आध्यात्म की शक्ति का प्रचार कम नहीं बल्कि ज्यादा ही हुआ है। इस विशय में रुचि अब हमारे देश के ही नहीं, सारे संसार के पढ़े लिखे विद्वानों में (बींसवी सदी जिसको हम वैज्ञानिक सदी के रूप में जानते हैं। जिसका आधार अनन्य महान वैज्ञानिक हैं) शुरू हो चुकी हैं।

जितना-जितना भारतीय दर्शन पर आघात किया गया उतना-उतना ही यह दर्शन सर्वमान्य होता गया है। अगर फिर भी कोई कमी दिखाई देती है तो वह है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय दर्शन के सिद्धान्त का समय के अनुसार उसके प्रचार का नहीं होना अथवा उसकी व्याख्या आज की वैज्ञानिक भाषा में नहीं होना ही रहा है। ध्यान की इन्हीं शक्तियों के बारे में मैंने पहले भी लिखा है और यहाँ भी यह प्रसंग इसलिये ही उठाया है क्योंकि बुद्धिजीवी मस्तिष्क के अलावा किन्हीं अन्य मानसिक शक्तियों को मानता ही नहीं है। शरीर में फेफड़ों से नीचे और मल मूत्र केन्द्रों से ऊपर के हिस्से को यदि हम अपने अज्ञानवश पेट कहें तो यह हमारी ही नासमझी है। माना कि यह पेट है लेकिन उसमें आमाशय भी है, आँतें भी हैं, गुर्दे भी हैं। अगर हमें पेट को आन्तरिक और सूक्ष्म रूप से जानना है तो इसके अन्दर के विभिन्न अवयवों को अलग-अलग करके समझना ही होगा। नहीं तो हम समझकर भी तथ्य से चूक जायेंगे।

यदि हमने ठीक इसी प्रकार अलग-अलग भाग करके अपने आप को नहीं समझा तो वही गलती यहाँ भी हो ही जाएगी। इस बात को बार-बार और अलग-अलग तरह से लिखने का मेरा मतलब बड़ा गहन है और वह यह है कि तुलनात्मक रूप से आध्यात्म और विज्ञान के सिद्धान्तों में कुछ अन्तर है.....समझ का। **विज्ञान तो तथ्य चाहता है और तथ्य भी ऐसे, जिनको हम अपने पाँचों कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा जान सकें। जबकि आध्यात्म 'अतिन्द्रय' के अनुभवों में आई बातों को भी मानता है। इसी कारण से जब तक विज्ञान अपने समझने के तरीके को नहीं बदल लेता तब तक यह आध्यात्म के मुकाबले में अधूरा ही रहेगा। यही कारण है कि पश्चिम में लोग विज्ञान के द्वारा असंख्य ऐशो-आराम की चीजों को प्राप्त करने के पश्चात् भी अपने आपको अधूरा ही महसूस करते हैं।** तब वे हार-कर प्रकृति की शरण में आश्रय लेते हैं अथवा आध्यात्म की दुनियाँ में आत्मा कहे जाने वाले भारत की शरण लेते हैं। इसी कारण से आध्यात्म के हमारे भारतीय शिक्षकों को सारे संसार में सम्मान मिलता है। उनमें चाहे विवेकानन्द हों, महेश योगी हों, रजनीश हों या धीरेन्द्र ब्रह्मचारी।

आध्यात्म को समझने के लिए यदि हम आज के विज्ञान से प्रभावित रहकर इसको समझने की कोशिश करेंगे तो करीब-करीब असम्भव ही होगा क्योंकि आज का विज्ञान मानसिक शक्तियों को भी सीधी निगाह से नहीं देखता जो कि इन्द्रियों के अन्दर ही है। फिर कैसे माना जाए कि यह मन के पार की बातों को मानने को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तैयार हो जाएगा। इसलिए मेरी प्रार्थना आपसे यह है कि आध्यात्म में आगे के अध्यायों को समझने के लिये आप किसी भी पद्धति से अप्रभावित रहें इससे मेरा तात्पर्य यह है कि आप किसी भी पूर्वाग्रह से ग्रसित न रहें।

हमारे शरीर विज्ञानी कहते हैं कि हमारे शरीर में जो ताकत पैदा होती है वह हमारे शरीर के कोषों में पैदा होती है। यानि कि हमारे शरीर के हाड़ मांस का प्रत्येक कोष अपने आप में एक इकाई है या एक बिजलीघर है। हमारा शरीर इन कोषों की वजह से ही जीवित दिखाई पड़ता है और इन्हीं की शक्ति के द्वारा ही हमारे शरीर के अंग प्रत्यंग क्रियाशील रहकर इस संसार का अनन्य कार्य करते हैं। इसके विपरीत आध्यात्म में हमारे शरीर में जीवित रूप में दिखाई देती ऊर्जा का एक स्रोत होता है। इसी ऊर्जा के स्रोत से सम्पूर्ण शरीर को अथवा सम्पूर्ण कोषों को ताकत पहुँचती है। अगर हम इन मैडीकल साइंस वालों की बात मान भी लें तो भी बात पूरी नहीं हो जाती क्योंकि हमारे मन में एक शंका पैदा होती है। जिसका जवाब मैडीकल साइंस वालों के पास नहीं है। जैसे वे कहते कि प्रत्येक कोष अपने आप में एक पावर इकाई है। यानि कि वह अपनी शक्ति आप पैदा करता है स्वतन्त्र रूप से। स्वतन्त्र अस्तित्व में इसका मतलब है यदि उसे अपने शरीर के बाहर निकाल दें तो उसे जीवित रहना चाहिए लेकिन ऐसा नहीं होता। फिर क्या हम यह मानें कि वह अपने आप में "पावर हाउस" नहीं है। हमारे शरीर में असंख्य कोष मृत अवस्था में भी रहते हैं। लेकिन हम मर नहीं जाते। जबकि हमारे शरीर के बिना एक भी कोष जिन्दा नहीं रह सकता।

सीधी-सी सरल बुद्धि भी इस बात को समझ कर यह निष्कर्ष निकाल लेगी कि कहीं न कहीं से किसी न किसी प्रकार इन छोटे-छोटे कोषों को जीवित रहने के लिये शक्ति हमारे शरीर से ही मिलती है। अब जब हम यह मान लेते हैं कि हमारे शरीर में से ही इनको ताकत मिलती है। तब हमारे सामने एक तथ्य उभरकर आता है कि हमारे शरीर के किसी न किसी कोने में कहीं न कहीं ऐसा केन्द्र होना चाहिये जहाँ से प्रत्येक कोष को ताकत मिलती है लेकिन यह शरीर तो सारा का सारा कोषों से ही तो मिलकर बना है। ऐसी कोई जगह खाली ही नहीं जिसमें कोई कोष नहीं हो। मैडिकल-साइंस को तो मिली नहीं है। और मिल भी नहीं सकती है। क्योंकि जिन आधारों को आधार बनाकर उस केन्द्र को वे ढूँढ़ते हैं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह उन आधारों की पकड़ में नहीं आ सकता है। जबकि वह हमारी मानसिक अनुभव की पकड़ में आ जाता है। उसको अपने अनुभव में लाने के लिये तथा उसका पता चलाने के लिये भी हमें बड़ी विचित्र स्थिति में से होकर गुजरना होता है।

जैसे इसे ऐसे समझें, हमें अपनी आँख का पता तब चलता है जब हमारी आँख में कोई बाधा पैदा हो जाती है अन्यथा सारे दिन इन आँखों से देखने या कार्य लेने के पश्चात् भी हमें हमारी आँखों के होने का आभास हमें नहीं होता। इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक अंगों के बारे में जानने के लिये इसी सिद्धाँत को ठीक से समझें। हमें हमारे शरीर का पता तब ही चलता है जब वह रुग्ण हो जाता है जब उसको कोई रोग या बाधा आ घेरती है, हम दिन भर में एक बार भी शरीर के बारे में बात-चीत नहीं करते। यदि आप किसी बीमार व्यक्ति से मिलने जायें तो जब तक आप उसके पास रहेंगे। वह अपने शरीर से सम्बन्धित बातचीत ही करता रहेगा। कभी कहेगा, पड़े–पड़े कमर दर्द कर रही है, कभी कहेगा सर फटा जा रहा है। ऐसे क्यों कहता है वह ? वह इसलिए कहता है कि उसका शरीर सामान्य नहीं है और जो चीज सामान्य नहीं होती हमारे शरीर में यह सबसे प्रथम हमारे अनुभव की दृष्टि में आ जाती है। ठीक इसी सिद्धांत के अनुसार यदि इस उर्जा के स्रोत या केन्द्र पर दृष्टिपात करना है तो अपने अनुभव में लाकर किसी न किसी प्रकार से हमें केन्द्र पर बाधा उपस्थित करके वहाँ उस केन्द्र की स्थिति को असामान्य करना ही होगा, और जैसे ही उस केन्द्र को हम असामान्य अवस्था में ले आयेंगे तो निश्चय ही हमें उसकी जानकारी हमें अपने अनुभव में हो ही जावेगी। इसमें कोई शंका या संशय की गुंजाइश किसी भी स्थिति में नहीं है।

अब चूँकि वह शरीर के किसी भी अंग विशेष का मामला नहीं है। वह तो हमारी जीवनी शक्ति का मामला है। इसलिए हमें अपने जीवन पर ही खतरा मोल लेकर अनुभव करना होगा। तभी हम उस केन्द्र को जान सकेंगे। आध्यात्म में इसी सैद्धान्तिक प्रक्रिया को योग साधना के द्वारा अपनाकर हम उस शक्ति के केन्द्र को जान लेते हैं।

आप कभी न कभी नुमायश में इंजन से या आदमियों द्वारा चलाये जाने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाले झूलों में या रहट जिनमें ऊपर से नीचे की तरफ और नीचे से ऊपर की तरफ चक्कर लगाते हैं, अवश्य ही बैठे होंगे। बहुत से लोगों को, औरतों को, बच्चों को उनमें बैठने में डर भी लगता है। बहुतों को तो मैंने आँसुओं से रोते हुये भी देखा है। बहुतों का तो उस समय अपने सामान्य बन्धनों पर से संयम तक हट जाता है। कभी सोचा आपने ऐसा क्यों होता है? आखिर ऐसा क्या हो जाता है? झूले में बैठे-बैठे की हमारी सारी बुद्धिमानी, हमारी सारी की सारी शारीरिक ताकत, हमारा अहम्, हमारा तेज, हमारी विद्या का उस समय कहीं कुछ पता नहीं चलता और जिन-जिन बातों के द्वारा हमारी अपनी पहचान होती है। हम सब भूल जाते हैं। अगर हमें कुछ समय का अनुभव जो हमारी याददास्त में रहता है वह केवल यही रहता है कि बहुत तेज गुलगुली हमें अपने शरीर में महसूस होती है और वह इतनी तेज होती है कि वह हमको अपनी सामान्य अवस्था में भी नहीं रहने देती है। ध्यान रहे **वहाँ शरीर बिल्कुल ठीक रहता है उसके लिये कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती। अगर कोई बाधा उत्पन्न होती है तो वह हमारे स्वयं के लिये, न कि शरीर के लिए। इसलिए उस समय हमें शरीर का ध्यान नहीं आता बल्कि ध्यान आता है हमें अपने स्वयं के अस्तित्व की असामान्यता के प्रभाव का जो तेज गुलगुली या सन्नाहट के रूप में हमारे सामने उपस्थित होता है।** अब जरा गौर करें वह झूला हमारे अस्तित्व को किस प्रकार बीमार कर देता है?

वैज्ञानिक रूप से तो नहीं लेकिन आध्यात्मिक रूप से हम इस स्थूल शरीर के अलावा सूक्ष्म शरीर मानते हैं और जो लोग उसके अनुभवों को प्राप्त कर लेते हैं। वे इसे हकीकत भी मानते हैं ये दोनों शरीर हमारी देह में सामंजस्य बनाकर एक दूसरे में समाये रहते हैं। जब तक हमारा मस्तिष्क बिल्कुल स्वस्थ्य अवस्था में रहता है तब तक इन दोनों में कोई प्रतिरोध नहीं होता। लेकिन जैसे ही किसी बाहरी या आन्तरिक कारणों से मस्तिष्क की क्षमता चुक जाती है। सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर को छोड़कर बाहर निकलने लगता है। क्योंकि मस्तिष्क के फेल हो जाने के पश्चात् हमारे मन का सामंजस्य जो कि मस्तिष्क के साथ था उसमें बिगड़ाव आ जाता है। **यही कारण है कि मन पर आधारित सूक्ष्म शरीर में और मस्तिष्क पर आधारित स्थूल शरीर के बीच की सन्धि में दरार पड़ने लगती है।** झूले पर झूलते समय जब हम ऊपर से नीचे की ओर आते हैं एकदम गिरने के समान। तब इस अप्रत्याशित घटना के कारण मस्तिष्क अपना सन्तुलन खो ही तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बैठता है। ठीक उसी समय हमारा शरीर अपने केन्द्र से जहाँ सूक्ष्म शरीर अपनी शक्ति के साथ केन्द्रित रहता है स्थूल शरीर से बाहर निकलने की तैयारी करता है और यही तैयारी हमें अजीब सी तीक्ष्णता गुलगुली या सनसनाहट के रूप में महसूस होती है।

आपने स्वयं भी महसूस किया होगा कि जिस समय हम झूले से एकदम नीचे आते हैं तब हमारी गुदा एवं योनि का क्षेत्र अपने आप अन्दर की ओर भिंच जाता है। क्योंकि सूक्ष्म शरीर के साथ-साथ ही हमारी प्राणों की शक्ति इस शरीर के बाहर निकलती है। इसलिए **यथार्थ में हमारा शरीर उस सूक्ष्म प्राणवीय शक्ति को शरीर से बाहर जाने से रोकने के लिए ही इस क्रिया को अपने आप सम्पन्न करता है। आध्यात्म में हम इसी प्रक्रिया को मूल बन्ध लगाना कहते हैं और जिस केन्द्र पर हमारे प्राण असामान्य होते हैं उस शक्ति के केन्द्र को हम (योनि और गुदा के बीच का क्षेत्र) कुण्डलिनी क्षेत्र कहते हैं।** हमारे शरीर में यही है वह कुण्ड जिसमें से हमारे सम्पूर्ण शरीर को जीवनी शक्ति मिलती है उस केन्द्र से जो शक्ति संचालित होती है उस शक्ति को "कुन्डलिनी शक्ति" कहते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १०

जीव की संरचना

अब हम इस बात पर गौर करेगें कि वह कुन्डलिनि शक्ति हमारे शरीर में कहाँ से, किस रूप में तथा किस तरह से आकर विराज गई है। हमारा शरीर पांच तत्वों से बना है जिनमें जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी और आकाश तत्व शामिल हैं। इन पांचों तत्वों में से चार तत्वों को तो हम अपनी बुद्धि से भी जानते हैं। जैसे हमारे शरीर के खून में जितना भी द्रव्य रूप है वह जल ही है। हमारा तापमान जो सदा एक जैसा कन्ट्रोल होता रहता है वह अग्नि है। वायु या प्राण वायु को हम निरन्तर उपयोग में लाते हैं। पृथ्वी तत्व का अर्थ है ठोस रूप। वह हमारे शरीर का यह भाग है जिसमें मांस, अस्थि आदि आती है लेकिन पाँचवाँ तत्व जब तक इनमें नहीं मिल जाता तब तक इस शरीर का चक्र पूरा नहीं होता। क्योंकि जब तक आकाश तत्व के रूप में प्राण ही नहीं होंगे तो इस शरीर में सारा सामान रहते हुये भी वे स्थूल तत्व स्वतः ही मिट जायेंगे।

जैसे मृत व्यक्ति का तापमान एकदम तो गिर नहीं जाता उसमें भी घण्टे दो घण्टे लग ही जाते हैं। हाड़ मांस तो सब रहते ही हैं जल भी कहीं उड़ नहीं जाता, रही बात वायु की उसको भी कृत्रिम रूप से लगातार दिये रह सकते हैं। फिर क्या कारण है कि तुरन्त मृत हुये व्यक्ति के शरीर की आन्तरिक क्रियायें भी तुरन्त ही बन्द हो जाती हैं। इसका कारण है वह पाँचवाँ आकाश तत्व। वह इस शरीर में से निकल जाता है, जीवन और मृत्यु इसके द्वारा ही प्रभावित होते हैं।

दूसरे शब्दों में आकाश तत्व का आधार बनाकर हमारी आत्मिक-शक्ति ही कुन्डलिनी शक्ति के रूप में प्रकृति से बने ऐसे परम निर्वात में खिचकर आ जाती है जो कि प्रकृति में शुक्र और डिम्ब के आपस में समायोजन के पश्चात् उपस्थित होता है इस परम निर्वात की यह विशेषता है कि वायु या अन्य किसी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चीज से नहीं भरता है। यह केवल आकाश तत्व से ही भरता है। इस प्रकार पैदा हुआ परम निर्वात इस प्रकृति में से प्राणों की शक्ति को अपनी संरचना की क्षमता के अनुसार अपने अन्दर खींचने की ताकत रखता है। यही कारण है कि जैसे ही शुक्र और डिम्ब मिलकर उस परम निर्वात को इस प्रकृति में पैदा करते हैं। पास में गुजरती प्रत्येक आत्मिक शक्ति (शरीर में आने के बाद जिसे हम कुण्डलिनी शक्ति के रूप में जानते हैं।) आकाश तत्व को आधार बनाकर उस निर्वात में प्रवेश कर जाती है। **इस प्रकार शुक्र और डिम्ब से बना प्रत्येक कोष अपने निर्वात के द्वारा उस आकाश तत्व को अपनी तरफ आकर्षित करके स्वयं पावर हाउस बन जाता है।** लेकिन इस प्रकार के प्रथम कोष से जब अन्य कोष बनते हैं। वे स्वतन्त्र रूप से पावर हाउस नहीं होते बल्कि इस प्रथम कोष में से निकलने के कारण से उसके आधीन होकर रहते हैं। और यही कारण है, इन दूसरे कोषों को इस प्रकृति से शक्ति·····उस प्रथम कोष के द्वारा ही श्रंखलाबद्ध होकर पहुँचती है। जैसे कहीं कोई नया स्कूल खोला गया। पहले वहाँ एक अध्यापक आया, बाद में आवश्यकतानुसार और अध्यापक वहाँ आते गये। सर्वप्रथम आने वाला अध्यापक चूँकि सबसे पहले आया था। अपनी योग्यता के आधार पर स्कूल के केन्द्र में बैठकर प्रधानाध्यापक बन जाता है। इसी प्रकार इस शरीर के केन्द्र में बैठे हुये प्रथम कोष की ही अपनी क्षमता होती है कि वह स्वयं अंशी बनकर अपने में से और अंश पैदा करे। **क्योंकि उसकी संरचना शुक्र और डिम्ब से हुई होती है जबकि अन्य इसके बाई प्राडक्ट होते हैं। इसी कारण से वह प्रथम होते हुए विशेष भी होता है। तब दूसरे अंश किस कारण से उस प्रथम कोष के अंशी स्वरूप को स्वीकार नहीं करेंगे। उनको तो उसका आदेश मानने को बाध्य होना ही पड़ेगा।**

इस प्रकार यह देह तो बनना शुरू हो जाती है लेकिन हमारा मन हमारे संस्कार और हमारी इच्छा शक्ति किस प्रकार इस देह से सम्बन्धित होते हैं। इस बात को समझने के लिये हमें फिर से आकाश तत्व को गहरे में जानना होगा। **विज्ञान ने कुछ-कुछ इसको जाना है लेकिन दिशा भ्रमित है।** वह इसी आकाशी तत्व के सहारे ही तो अपनी संचार व्यवस्था बनाये हुये है। इस संसार में हम उपग्रह छोड़ते हैं, उनसे सूचनायें लेते हैं, उन्हें प्रेषित भी करते हैं। क्या आधार बनाते हैं ? वहाँ तक उन्हें पहुँचाने को, क्या वायु को, किसी तार को जलधारा को या तापमान को ? नहीं इनमें से कोई आधार इतना सक्षम नहीं होता है। जो इस पृथ्वी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की परिधि के बाहर अपनी कार्य क्षमता बनाये रख सके क्योंकि इन उपरोक्त आधारों की अपनी सीमाएँ हैं। जबकि पृथ्वी की परिधी के बाहर अन्तरिक्ष में केवल आकाश तत्व ही आधार बन सकता है। अन्य कोई साधन इस बीच और है ही नहीं। जिसे हम आधार बनाकर अपने शब्दों को संप्रेषित इस ब्रह्माण्ड के किसी कोने में कर सकें। यह आकाश तत्व ही वह है जिसके द्वारा हम जुड़े हैं इस असीमित ब्रह्मांड में एक दूसरे से अरबों खरबों प्रकाश वर्ष दूरी पर स्थिति रहते हुए भी। **अगर यह आकाश तत्व नहीं होता तो हम अपनी पृथ्वी तक ही सीमित रह जाते। या दूसरे शब्दों में फिर इस ब्रह्मांड की कल्पना ही असंभव होती। इसके बिना इस सृष्टि का क्या स्वरूप होता, परमात्मा ही जानता है।**

तो ध्यान रहे, यह आकाश तत्व अन्य चारों तत्वों से अलग है और इसका प्रवाह वहाँ भी निर्बाध जारी रहता है जहाँ कुछ भी नहीं सिवाय अन्तरिक्ष के यह उन तमाम स्थूल की सीमाओं के बाहर है इसे किसी भी बन्धन में बाँधा नहीं जा सकता और नहीं जलाया जा सकता है **लेकिन इसे मानसिक क्रियाओं के द्वारा प्रभावित किया जा सकता है।** मानसिक रूप से तरंगित करके अथवा वैज्ञानिक क्रियाओं रेडियो ट्रांसमीशन पद्धति के द्वारा इसमें बदलाव लाया जा सकता है। यह स्वयं वैद्युतिक नहीं है। इसलिये इसे न तो हम ऋणात्मक मान सकते और न ही धनात्मक। लेकिन इसको ऋणात्मक या धनात्मक, जिस रूप में हम चाहते हैं उसी तरह का प्रभाव देकर, उसके स्वरूप को हम प्राप्त कर सकते हैं। उसके अलावा इसमें एक क्षमता और है, इसकी दूरी पर विजय प्राप्त होने के कारण यह उतनी सी देर में ही उस जगह पहुँच जाता है जितनी देर में हम अपने विचार से पहुँचते हैं।

हमारे सूक्ष्म शरीर को लेकर गर्भ में पनपते हुए स्थूल शरीर के अन्दर हमें पहुँचाना और बाद में फिर उसी मृत प्रायः देह से वापिस हमें निकाल कर फिर सूक्ष्म में ले आना इसी आकाश तत्व का ही कार्य है। **क्योंकि असीमित क्षमताओं वाला अस्तित्व ही उस दुष्कर कार्य को सम्पन्न कर सकता है।** असल में **आकाश तत्व ही तो प्राण है। कुछ लोग प्राणों को ही हमारा अपना अस्तित्व मान लेते हैं जबकि प्राण तो वह आधार है जिसको आधार बनाकर हम स्वयं इस देह के अन्दर आते और जाते हैं। अगर हमें स्वयं को समझना है तो इन प्राणों के साथ हमें अपने अन्दर तीन चीजों को और समझना होगा। प्रथम है मन, दूसरे हमारे**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संस्कार और तीसरी है हमारी इच्छा शक्ति।

इस प्रकार हमारे अन्दर प्राणों के अलावा ये तीन चीज हमेशा विद्यमान रहती हैं। इनके बिना हम बिल्कुल अधूरे ही रहेंगे। मन के द्वारा हमारे स्वभाव का निर्माण होता है जो कि इनमें सबसे हल्की अवस्था है लेकिन हमारे साथ इसका चौबीसों घण्टे का सम्पर्क रहता है। यही मन इन्द्रियों के अधीन होकर सांसारिक कार्यों में लिप्त रखता है अथवा इसके विपरीत यह इन्द्रियों को अपने अधीन करके, संसार से विरक्ति की भावना की ओर हमारा मार्ग प्रशस्त करने में पहली सीढ़ी के रूप में हमारी मदद करता है। हमको इसकी प्राप्ति हमारे माता-पिता से विरासत में मिलती है। इसी के द्वारा हमारी वृत्तियाँ हमारी आदतें प्रभावित होती हैं।

माँ, पित, पूत, पिता, पति घोड़ा, और नहीं तो थोड़ा-थोड़ा।

संस्कारों के द्वारा हमारे भाग्य का निर्माण होता है। इसी के द्वारा ही हमें हमारे कर्मों का फल या प्रतिफल मिलता है मान, सम्मान, यश, कीर्ति, अपकीर्ति, प्रतिष्ठा, लाभ, हानि, जीवन, मरण, बीमारी, सुख-दुःख, वैभव, दरिद्रता और न जाने संसार की कितनी-कितनी बातें संस्कारों के द्वारा ही हमारे भाग्य में जुड़ती हैं। यह हमें हमारे जन्म के समय इस प्रकृति में उपस्थिति ग्रहों या नक्षत्रों के प्रभाव से मिलती हैं। इच्छा शक्ति वह प्रेरणा है जिसके द्वारा हमें संकल्प शक्ति की प्राप्ति होती है। संकल्प शक्ति के द्वारा ही हम विपरीत परिस्थितियों में भी अपने मार्ग पर अविचल होकर बढ़ते ही जाते हैं। इस संकल्प शक्ति की शक्ति से ही हम अपनी आत्मिक-शक्ति जाग्रत करते हैं और उसी से हम अपनी समस्त इच्छाओं अभिलाषाओं एवं आकांक्षाओं के विपरीत योग में प्रविष्ट कर पाते हैं। यह इच्छा शक्ति ही वह शक्ति है जिसके जन्म लेने की प्रवृत्ति बलवती होने के कारण ही हम इस दुनियाँ में जन्म लेते हैं। यही वह शक्ति है जिसे हम बहुत गहरे में मन और संस्कारों के बाद भी अपनी प्रज्ञा, अस्मिता आदि के नाम से जानते हैं अथवा यही है **हमारा बीज** स्वरूप इसकी प्राप्ति हमें कहीं से नहीं होती यही तो हम हैं। इसका प्रथम उद्देश्य है प्रकृति में जन्म लेना और अन्तिम उद्देश्य है मुक्ति की प्राप्ति। **इस प्रकार से यह प्राण रूपी आकाश तत्व हमारी इच्छा शक्ति संस्कारों और मन**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से प्रभावित होकर सूक्ष्म शरीर का रूप धारण करके उस प्रथम कोष में बने निर्वात में उतर जाता है जो शुक्र और डिम्ब के द्वारा बनाया हुआ है। सूक्ष्म शरीर के इसमें उतरते ही इस कोष का अस्तित्व स्वतन्त्र हो जाता है। जिसके कारण एक से दो और दो से असंख्य कोषों की रचना वहाँ होती है। और नौ मास तक गर्भ के अन्दर इन कोषों की संख्या बढ़ते-बढ़ते जब इस अवस्था तक आ जाती है कि वह नवनिर्मित स्थूल देह बिना किसी आवरण के इस पृथ्वी पर रह सके तब वह गर्भ से बाहर आ जाती है।

यहाँ यह भी बताना जरूरी है कि कुछ ग्रन्थों में "आत्मा" को गर्भ में सातवें महीने में उतरना बताया जाता है। जबकि सात महिने तक तो उसमें उसके शरीर के तमाम अवयव तैयार हो जाते हैं। जिनके कारण वह हिलने-डुलने लगता है क्योंकि यदि उसमें अब तक जीवन नहीं होता तो वह कब का सड़ गल कर माँ को भी परेशानी में डाल चुका होता, और हम देखते भी हैं कि जैसे ही यदि किसी माँ के पेट में बच्चा यदि किसी कारण से छटे महीने या पाँचवे महीने में ही मर जाता है तो तुरन्त सफाई करानी पड़ती है नहीं तो माँ के शरीर में उसका जहर घुल जाने की सम्भावना बन जाती है। एक बात और .....कुछ विद्वान यह भी कहते हैं कि प्राण और जीव अलग-अलग हैं। इसलिए शुरू के शुक्र और डिम्ब के मिलने के समय प्राण तो आ जाते हैं। लेकिन जीव आत्मा सातवें महीने में ही आती है और तब से ही वह दुख सुख अनुभव करने लगती है। मेरा यहाँ कुछ भिन्न मत है। यह ठीक है कि जीव और प्राण अलग-अलग हैं और ऐसा मैंने भी लिखा भी है लेकिन जिस तरह प्राणों के इस शरीर से बाहर निकलने के साथ आत्मा भी निकल जाती है, ठीक इसी प्रकार जब प्राण इस शरीर में पाँचवे आकाश तत्व के रूप में प्रवेश करते हैं; **ठीक तभी उन प्राणों के ऊपर सवार होकर आत्मा भी इस देह के उस सूक्ष्मतम स्वरूप गर्भ में प्रवेश कर जाती है।**

कई लोग कहते हैं कि बच्चा माँ के गर्भ में एक विजातीय शरीर के रूप में पनपता है जैसे कि हमारे शरीर में कभी-कभी मस्सा इतना बड़ा हो जाता है जो काफी बड़ा होकर लटकता रहता है। ठीक इसी प्रकार बच्चा बढ़ता रहता है उसका पोषण शरीर के मस्से की तरह माँ के शरीर से होता रहता है और सात महीने पश्चात उसमें प्राण आ जाते हैं तब वह स्वतन्त्र हो जाता है। उसके पश्चात

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह उस गर्भ से बाहर निकलने का उपक्रम करने लगता है।

यदि बात इस तरह से भी है तब भी अड़चन है क्योंकि हम देखते हैं एक तो माँ और बच्चे के खून का ग्रुप नम्बर एक ही हो यह जरूरी नहीं है जबकि मस्से और उसके अलावा शरीर के खून का ग्रुप एक ही होना जरूरी है। दूसरी बात मस्सा केवल एक माँस का पिण्ड मात्र होता है। जबकि गर्भस्थ शिशु में मानव के सम्पूर्ण अवयव तथा साथ ही मन और बुद्धि भी जो कि मस्से में किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं है होती है और तीसरी बात मस्सा हमारे शरीर के साथ जन्म से आता है और मृत्यु पर्यन्त तक अपनी बृद्धि को प्राप्त होता रहता है। यानि वह जीव के सम्पूर्ण जीवन तक ही रहता है जबकि गर्भ केवल सीमित अवधि तक के लिये ही गर्भ में ठहरता है और आखिरी बात यह है कि मस्सा हमारे शरीर में बिना बीज के प्राप्त होता है जबकि गर्भ बाहरी शुक्र के द्वारा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मस्से को हम टैस्ट ट्यूब बेबी की तरह से प्राप्त नहीं कर सकते हैं जबकि भ्रूण टैस्ट ट्यूब प्रणाली के द्वारा प्रयोगशाला में विकास किया जा सकता है। इसलिये यह बात बिल्कुल साफ है कि शुक्र और डिम्ब के मिलन के साथ ही उसमें प्राण तथा जीव उतर आते हैं और वह सम्पूर्ण स्वतन्त्र जीव हो जाता है। फिर उसे माँ के गर्भाशय में रखें या प्रयोगशाला में। ठीक उसी प्रकार जैसे किसी बीज को आप गमले में लगा दें अथवा जमीन में बो दें। वह अपनी बढ़वार शुरू कर देता है।

तो कहने का मतलब यह है कि **आत्मा अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा प्रकृति से प्राण रूपी पाँचवें आकाश तत्व को साथ लेकर या उसमें समाकर मन से उत्पन्न संस्कारों एवं प्रारब्ध से उत्पन्न सूक्ष्म शरीर का आवरण ओढ़ कर शुक्र और डिम्ब से उत्पन्न हुए परम निर्वात में उसके निर्मित होने के तुरन्त बाद ही उसमें खिच आती है या उसमें प्रवेश कर जाती है।** इतनी प्रक्रिया हो चुकने के बाद वह प्रथम कोष अब प्रधान कोष बन जाता है और चूँकि हमारे प्राण और हमारा सूक्ष्म शरीर इसी के रास्ते से आए थे। इसलिए इस देह के रहने तक यहीं से वह बाद के तमाम कोषों की प्रकृति से आकाश की प्राणवीय शक्ति को इड़ा पिंघला और सुषमणा नाड़ियों के द्वारा भेजता रहता है। इस प्रकार से हमारे शरीर में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थित उस प्रधान कोष की शक्ति को ही हम कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं इस शरीर के प्रत्येक कार्य कुण्डलिनी शक्ति के द्वारा ही सम्पन्न होते हैं। हमारे जीवन मरण से सम्बन्धित जितने भी स्थूल या भौतिक कार्य हैं, वे इस शक्ति के इड़ा और पिंघला नाड़ी में प्रवेश से संचालित रहते हैं। जबकि इसके विपरीत यही कुण्डलिनी शक्ति जब इड़ा और पिंघला से अपने प्रथम केन्द्र या कुण्डलिनी के स्थान पर वापिस लौट कर सुषमणा नाड़ी में प्रवेश करती है। तब हमारे सूक्ष्म शरीर के कार्य भी इसी शक्ति के द्वारा ही सम्पन्न होते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय ११

इड़ा पिंघला और सुषमणा नाड़ियों का अस्तित्व तथा प्रभाव

मैडीकल साइंस जानता है कि दो अलग-अलग रंग की नाड़ियों का जाल हमारे सम्पूर्ण शरीर के जर्रे-जर्रे में फैला हुआ है, जिसको कि हम "नर्वस सिस्टम" (नाड़ी तन्त्र) के नाम से जानते हैं। इन दोनों नाडियों का प्रारम्भ मेरुदण्ड के अंतिम और निचले सिरे पर से दायीं तथा बायीं दिशा में जाकर होता है। इन्हीं दोनों नाडियों को हम इड़ा और पिंघला नाड़ियों के नाम से जानते हैं। ठीक उसी स्थान से एक और नाड़ी जिसे हम सुषमणा के नाम से जानते हैं वह मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) के अन्दर से होती हुई हमारी गर्दन और हमारे मस्तिष्क के पिछले भाग से होती हुई मस्तिष्क में जाकर विलीन हो जाती है।

इतनी बात की पुष्टि तो हमारे शरीर विज्ञानी भी करते हैं। महर्षियों ने इस बारे में इससे और अधिक ज्यादा खोज की है, वह यह कि जिस प्रकार से ये तीनों नाड़ियाँ रीढ़ की हड्डी के बिलकुल अंतिम हिस्से से शुरू होती है। (उस स्थान को हमारी आध्यात्मिक भाषा में मुक्त त्रिवेणी कहा जाता है) उसी प्रकार ये तीनों नाड़ियाँ हमारी दोनों आँखों की भवों के मध्य में माथे के अन्दर फिर दुबारा आकर मिलती हैं (इस स्थान को युक्त त्रिवेणी कहा जाता है) इड़ा तथा पिंघला नाड़ी तो अपने चलने की विपरीत दिशा दायें तथा बायें से आकर मिलती है और सुषमणा हमारी गर्दन के पिछले सिरे से मस्तिष्क के ऊपरी खोल के ऊपर से आकर फिर इन दोनों भवों के स्थान पर आकर उतरती हैं मस्तिष्क के ऊपर से गुजरते हुए नाड़ी का कहीं कोई प्रत्यक्ष में पता नहीं चलता है क्योंकि वह यहाँ इस प्रदेश में आकर इस कदर इतने सूक्ष्म जर्रों में या सूक्ष्म तंतुओं में विभाजित हो जाती है जिसकी वजह से इसका दिखाई देना आज तक कठिन ही रहा है लेकिन न दिखाई देते हुये भी उसका प्रभाव चूँकि वहाँ अनुभव में आता रहता है इसलिये उसके अनुपस्थित रहने का कोई प्रश्न ही नहीं है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुण्डलिनी शक्ति जब अपनी शक्ति को इड़ा और पिंघला में डाल देती है तब वे दोनों इड़ा और पिंघला जो कि सम्पूर्ण शरीर के प्रत्येक कोष तक पहुँचती है, उन में जीवनी शक्ति का संचार करती रहती हैं, जिसकी वजह से हम जीवित रहते है। लेकिन यदि यह शक्ति इन दोनों नाड़ियों से निकल जावे तो सारा का सारा शरीर मृत प्रायः उसी क्षण हो जावेगा। इस स्थूल शरीर को यदि हम जीवित अवस्था में देखते हैं तो उसका कारण है इन दोनों नाड़ियों का समूह जाल जो कुन्डलिनी शक्ति के द्वारा हमें जो शक्ति प्राप्त होती है उसके लिए आधार बनता है यदि कोई अंग विशेष मृत प्रायः दिखने लगे तो समझना चाहिये कि कुन्डलिनी शक्ति तो मौजूद है जो दूसरे अंगों को तो पहुँच रही है लेकिन उस विशेष अंग को जाने वाली नाड़ियों के समूह में कहीं किसी प्रकार से कोई रुकावट आ जाने के कारण से वह अंग मृत प्रायः हो गया है। कुछ लोग कहते हैं कि वहाँ खून का संचार ठीक नहीं रहा होगा लेकिन यह गलत है। वह अंग बिलकुल स्वस्थ लगता है कटने पर रक्त भी निकलता है। शारीरिक रूप से वहाँ सभी कुछ मौजूद है। यानि स्थूल रूप से सब सामान वहाँ उपलब्ध है लेकिन सूक्ष्म रूप से प्राणों को प्रभावित करने वाली नाड़ियाँ खराब हो जाती हैं। तो इस बात का खयाल रखें कि हम इन इड़ा पिंघला नाड़ियों में अवरोध आ जाने पर जीवित होते हुये मृत दिखाई देते हैं। ऐसा अनुभव हमारे समक्ष इस दुनिया में भी देखने को मिलता है कभी आंशिक रूप से मृत और कभी पूर्ण रूप से मृत लोगों में इस प्रकार के अनेक उदाहरण शरीर विज्ञानियों के पास फाईलों में हैं कि फलाँ आदमी मृत घोषित कर दिया था लेकिन बाद में जीवित हो गया और कुछ देर बाद फिर मर गया।

इस प्रकार का एक उदाहरण स्वयं मेरी स्मृति में है। डीग (भरतपुर) के पुजारी पं० बाबू लाल के पिता जो बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति के बुजुर्ग थे उनकी मृत्यु के समय उन्हें (चार पाँच घण्टों के भीतर ही) तीन चार बार जमीन पर ले लिया गया था, होता इस तरह था कि जब वे निष्प्राण हो जाते उनको जमीन पर उतार लेते लेकिन कुछ देर बाद ही उनमें चेतन्यता लौट आती साँस चलने लगती, हृदय की धड़कन शुरू हो जाती तब उनको फिर से चारपाई पर ले लेते। इस तरह अन्तिम मृत्यु से पहले वे तीन बार मरे और जीवित हुये थे। तो मेरा कहने का मतलब सिर्फ यहाँ इतना है कि जब तक कुन्डलिनी शक्ति इड़ा पिंघला में रहती है हम जीवित रहते हैं, क्रियाशील रहते हैं। इसके विपरीत यह शक्ति इन दोनों नाड़ियों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से निकल कर इस स्थूल शरीर के केन्द्रों से बाहर निकल जाए तो मृत्यु हो जाती है लेकिन यदि यही शक्ति इड़ा पिंगला में से निकल कर शरीर से बाहर निकलने की बजाय सुषमणा में ऊपर की ओर चढ़ जाती है तब हम मृत्यु को तो प्राप्त नहीं होते, लेकिन हमारा शरीर ऐसी अवस्था में मृत प्रायः दिखाई देने लगता है। जीवित होने की हमारी तमाम पहचानें समाप्त हो जाती हैं। इसी अवस्था को हम समाधि की अवस्था कहते हैं। इस समाधिस्थ अवस्था में हम चूँकि स्थूल शरीर से सुषमणा के द्वारा सूक्ष्म शरीर पर पहुँच जाते हैं। इसलिए नाना प्रकार के अनुभव या दृश्यों का आनन्द हम उठाते हैं। जिनको फिर हम दोबारा होश में आ जाने के बाद भी जिन्दगी भर नहीं भुला पाते हैं। जिनकी वजह से हम बाद में अपने आपको एक प्रकार से विशेष परिस्थिति में पाते हैं। जितनी ज्यादा देर तक हम उस सूक्ष्म शरीर के द्वारा सूक्ष्म जगत में रहते हैं। उसके बारे में हमें और ज्यादा जानकारी या उसकी शक्तियों से हम ओत-प्रोत स्वतः ही हो जाते हैं। इस प्रकार की शक्तियों के हमें मिल जाने से हम इस संसार में अन्य लोगों की अपेक्षा कुछ विशेष हो जाते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व साप्ताहिक हिन्दुस्तान के "रहस्य रोमांच विशेषांक" में मैंने एक अमरीकी "पीटर हारकौस" की कथा पढ़ी थी। इस कथा की विशेष बात यह है कि कथा का हीरो यानि पीटर हारकौस अभी तक जीवित है और पीटर हारकौस फाउण्डेशन न्यूयार्क यू० एस० ए० का वह अध्यक्ष है। घटना के अनुसार अपनी जवानी के दिनों में बेहद गरीब लेकिन शरीर से स्वस्थ मजदूर था। वह दीवालों पर रंग पुताई का कार्य किया करता था। एक बार उसे सेना की बैरिकों की पुताई का काम मिला। जिनकी ऊँचाई तीन-तीन मंजिल की थी। दोनों तरफ की बैरिकों की लाईन के बीच में तीस फुट की गली थी। दोनों ओर उसे एक जैसा रंग ही करना था। कोई भी सहायक उसके पास नहीं था। उसने अपनी एक तीस फुट की सीढ़ी तथा ब्रुश और रंग का डिब्बा लेकर काम शुरू कर दिया। बीच गली में उसने सीढ़ी को इस प्रकार से खड़ा किया था कि वह सीढ़ी पर चढ़े-चढ़े ही जब वह एक तरफ की दीवाल पर पुताई कर लेता तो वह उतनी ही ऊँचाई की दूसरी तरफ वाली दीवाल पर पुताई करने के लिए सीढ़ी पर से नीचे उतरे बगैर ही इस तरफ से जोर से झटका लेता और अपने डिब्बे और सीढ़ी सहित दूसरी तरफ की दीवाल पर पहुँच जाता था। इस तरकीब के द्वारा वह बार-बार के सीढ़ी पर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लुढ़कने चढ़ने की परेशानी से बच जाता।

इस तरह कार्य करते-करते उसे शायद महीनों गुजर गये थे। उसे इस कार्यकलाप का अच्छा अभ्यास भी हो गया था। यानि कि पहले जहाँ एक दीवाल से दूसरी दीवाल पर पहुँचने पर उसकी आँखें बन्द हो जाती थीं, कुछ धड़कनें तेज हो जाती थीं, अब उसे यह कार्य खेल के समान हो गया था। वह अपने सम्पूर्ण होश हवाश के साथ एक तरफ से दूसरी तरफ पहुँच जाता था। इसी प्रकार एक दिन जब वह करीब २५ फीट ऊपर से एक तरफ की दीवाल से दूसरी तरफ की दीवाल पर आ रहा था, उसकी सीढ़ी का एक पाया जमीन से उठ गया। जिसके कारण उसकी सीढ़ी एक तरफ से टेढ़ी हो गयी उसके लाख कोशिश करने के पश्चात् भी वह उस सीढ़ी को वापिस, उसकी दोनों टाँगों पर खड़ा नहीं कर सका, जिसके परिणामस्वरूप वह उस सीढ़ी के साथ ही दीवाल के सहारे घिसट कर अगले कुछ सैकिण्डों में धड़ाम से जमीन पर आ गिरा। जब वह जमीन पर आकर टकराया उससे पहले तक वह अपनी पूरी ताकत से अपना बचाव होशपूर्वक करता रहा था लेकिन सिर फटते ही वह अपना होश हवाश खो बैठा।

अस्पताल पहुँचने के बाद कथा के अनुसार वह कई दिनों तक बिस्तर पर पड़ा रहा। जिस समय उसे पहली बार होश हुआ, उसने एक नर्स को अपनी सेवा करते हुये पाया, होश में आने के पन्द्रह बीस मिनट के अन्दर ही वह मानसिक रूप से संयत हो गया उसे पिछला सब भली-भाँति याद हो आया था कि वह पुताई करते हुये सीढ़ी से गिर गया था। उसका नाम पीटर हारकौस है। तारीख याद करने की कोशिश की तो पूछने पर नर्स ने उस दिन की तारीख उसे बताते हुये कहा, "आप तीन दिन तक बेहोश रहने के पश्चात ही आज होश में आये हैं।" घटना के अनुसार यहाँ तक तो सब कुछ सामान्य ही था। उसने पानी माँगा, नर्स ने गिलास में पानी भरकर उसके मुँह के ऊपर से डाला, पानी की कुछ बूँदें पीटर के लेटे होने के कारण मुँह पर गिर गयीं, उन्हें पोंछने के लिये नर्स ने इधर-उधर कुछ देखा। उसे कहीं कोई तौलिया वगैरहा नहीं दिखाई दिया। तब वह स्वयं अपना रूमाल निकालकर पानी की बूँदों को पोंछने को हुयी तो पीटर ने स्वयं हाथ बढ़ाकर रूमाल, नर्स के हाथों में से ले लिया और धन्यवाद कहकर पानी की बूँदों को स्वयं ही पोंछने लगा। तभी उसे एक दृश्य दिखाई देने लगा। उस दृश्य के मुताबिक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक कमरे में कोई व्यक्ति अन्दर बन्द है, बाहर से ताला लगा है। भूख और प्यास के कारण उसकी हालत अब मृत प्रायः हो चली है। वह बहुत ही धीमी गति से कराह रहा है। इस दृश्य को जब पीटर अपने मस्तिष्क पर जोर देकर देखने लगा तो चार दिन पहली तारीख बदल गयी तो वही आदमी उस कमरे के अन्दर बिल्कुल ठीक हालत में था और यही नर्स जिसने अभी मुँह साफ करने के लिये उसे अपना रूमाल दिया है उसको कमरे में बन्द करके बाहर से उसके दरवाजे का ताला लगा रही है। कभी वह उस दृश्य में उपस्थित उस औरत को देखता, कभी अपने सामने साक्षात् खड़ी नर्स को ! इन दोनों में वह जरासा भी अन्तर नहीं कर पा रहा था। इसी कशमकश को लेकर जब पीटर उस नर्स के चेहरे को बार-बार ताक रहा था तो वह नर्स कुछ भयभीत सी हुयी। उसने जल्दी ही पीटर के हाथों में से अपना रूमाल लेकर अपनी जेब में रख लिया। रूमाल के पीटर की हाथों में से हटते ही ,उसे वह दृश्य दिखाई देना बन्द हो गया। लेकिन तब तक वह सारी स्थिति से वाफिक हो चुका था।

वह उस नर्स से बोला, "सिस्टर। दिखने में तो तुम बड़ी दयालु लग रही हो लेकिन तुम उस आदमी को उस कमरे में क्यों बन्द कर आयी हो ? बेचारा बस थोड़ी बहुत देर में अब मरने ही वाला है" इस बात को सुनकर वह नर्स हारकौस पर बहुत क्रोधित हुयी, बाद में तो उसने पीटर की शिकायत अपने सीनियर डाक्टर से भी कर दी। लेकिन डाक्टर इस नर्स की शिकायत सुनकर बोला, "सिस्टर आपको पता है, उसका सिर फट गया था। आज ही उसे होश आया है। हो सकता है कि बेचारा पगला गया हो और शायद इसी कारण से वह आपके साथ ठीक से पेश नहीं आ सका इसलिये आप घबरायें नहीं और जब तक वह शरीरिक रूप से स्वस्थ नहीं हो जाता है तब तक तो उसकी सेवा करनी ही पड़ेगी। फिर भले ही उसे हम पागलखाने के लिये स्थानान्तरित कर देंगे।" इतनी बात सुनकर वह नर्स उस डाक्टर के सामने से तो चली आयी लेकिन पीटर की बातों से वह स्वयं बड़ी भयभीत हो गयी थी। इसलिये उसने अपना आकस्मिक छुट्टी का प्रार्थना पत्र लिखा और छुट्टी चली गयी।

दूसरे दिन डाक्टर ने अपने नियमित दौरे के समय उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। हारकौस को तो फिर से दृश्य दिखाई देने शुरू हो गये। उस दृश्य में वह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डाक्टर इसी अस्पताल की किसी नर्स के साथ रंगरेलियां मना रहा था। हारकौस से नहीं रहा गया। उसने यह बात भी, सभी के सामने उस डाक्टर से कह दी। डाक्टर का तो चेहरा जैसे एकदम से सफेद पड़ गया लेकिन डाक्टर अपने आपको सभांल कर बोला, "लगता है कल वह नर्स ठीक ही कह रही थी, यह पागल ही हो गया है।" डाक्टर ने कुछ और भी भलाबुरा पीटर से कहा और शीघ्र ही वह उसके पलंग के पास से खिसक लिया। डाक्टर के जाने के बाद उसने सोचा, "मैंने उसको ऐसा क्यों कह दिया इन बेचारों ने तो मिलकर मेरी जान बचाई है। कितनी मेहनत इन्होंने की होगी उस समय, जब मैं बेहोश था। यदि उनको मेरे इस व्यवहार का मेरे होश में आने के पहले ही पता चल गया होता कि मैं उनके साथ होश में आने के पश्चात इस तरह का दुर्व्यवहार करूंगा तो शायद मेरे जीवन की उन कठिनाईयों में ये मेरी परवाह ही नहीं करते। इस बात को सोचकर पीटर ने निश्चय किया कि अब कैसा भी दृश्य उसके समक्ष आयेगा तो भी वह उसका जिक्र किसी से भी और किसी भी हालत में नहीं करेगा। इसके अलावा अब तो पीटर स्वयं भी इन अजनबी दृश्यों से भयभीत होने लगा था। आखिर मुझे क्या हो गया है, कि मुझे जागते हुये भी ये सपने से दिखाई देने लग जाते हैं।

जब भी किसी को कोई व्यक्तिगत वस्तु अथवा किसी का हाथ उसके हाथ में आ जाता, बस तभी से उस वस्तु से सम्बन्धित व्यक्ति के सारे के सारे दृश्य उसके मस्तिष्क में घूमने लगते और वह उन्हीं में खोकर रह जाता। कई बार तो उसे अपने पागल होने का शक भी होता कि हो न हो डाक्टर ठीक ही कहता होगा, मैं पागल ही तो हो गया हूँ। पागलपन में भी तो आदमी स्वयं के ख्यालों में ही तो खोया रहता है और न जाने क्या अनाप-शनाप बकता रहता है इतना सब कुछ सोच ने के बावजूद भी वह अपनी इस नई आदत पर काबू नहीं रख सका जिसके कारण से उसने उस बार्ड के डाक्टरों तथा नर्सों को व्यक्तिगत रूप से अपना शत्रु बना लिया था।

खैर जैसे तैसे उन अस्पताल वालों के कुछ दिन और गुजार दिये। लेकिन जब उसकी हरकतों से सभी इतने परेशान हो गये कि उसको वार्ड में सहन करना उनके लिये बिलकुल ही कठिन हो गया तब उन्होंने पीटर हरकौस की एक बार उंग से ड्रेसिंग करके अस्पताल के बाहर फुटपाथ पर डाल दिया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यहाँ फुटपाथ पर उसकी सहायता के लिये न तो कोई सरकारी कर्मचारी ही था और न ही उसका कोई मित्र। उसमें स्वयं में तो उठने बैठने की शक्ति न थी। जिस प्रकार से अस्पताल वालों ने उसे उल्टा सीधा फुटपाथ पर डाल दिया था वह वैसा ही वहाँ पड़ा हुआ था। कुछ लोग भिखारी समझकर उसके पास सिक्के डाल जाते, तो कुछ लोग बड़ी दया भरी नजरों से उसे देखते निकल जाते थे। उसे सम्पूर्ण होश अपने बारे में उस समय था लेकिन शारीरिक कमजोरी ही उसकी तमाम परेशानी का कारण थी।

इसी अवस्था में पड़े-पड़े जब उसे ६-७ घन्टे गुजर गये और शाम ढलने को आयी तब एक दयालु व्यक्ति उसके पास आया, उसने अपने थैले में से कुछ डबल रोटियाँ एवं कुछ बिस्कुट उसके हाथ में रखे। जैसे ही उस व्यक्ति का हाथ पीटर के हाथों में आया, पीटर अपनी उसी दुनिया में चला गया, जिसमें से अनन्य प्रकार के दृश्य वह देखा करता था। वह क्या देखता है कि इस व्यक्ति के घर पर एक अन्य व्यक्ति काफी देर से उसका इन्तजार करते-करते थक गया है इसलिये अब वह उठकर जाना ही चाहता है। इसकी पत्नी उस व्यक्ति को अब और ज्यादा देर तक रोकने में अपने आपको असमर्थ पा रही है क्योंकि, वह कह रहा है कि, "अब तो पता नहीं, कब आयेंगे ? मैं चलता हूँ।" इतना दृश्य देखने के बाद पीटर उस बिस्कुट लाने वाले व्यक्ति से बोला, "कृपया आप एक भी सैकेण्ड बर्बाद किये बगैर सीधे अपने घर जायें क्योंकि वहाँ कोई बड़ा ही महत्वपूर्ण व्यक्ति आपका काफी देर से इन्तजार कर रहा है। आपकी पत्नी अब उसे और अधिक देर तक रोके रखने में सफल नहीं हो पा रही है, इसके अलावा मैं यह भी सोचता हूँ कि उससे आपको मिलना बहुत ही जरूरी है। जाइये जिस बात का आप बहुत दिनों से इन्तजार कर रहे थे, आज उसका समय आ गया है।" पीटर ने उस आगन्तुक की शक्ल-सूरत के बारे में भी बता दिया। वह व्यक्ति कुछ आश्चर्य के से भाव लिये वहाँ से जल्दी ही चला गया।

करीब एक घंटे भर बाद वह व्यक्ति फिर वापिस पीटर के पास लौटा वापिस आने के बाद उसने बहुत गर्म जोशी के साथ पीटर को धन्यवाद दिया और पूछने लगा, "आपने यह सब कैसे जाना ? पीटर इस बात पर कहाँ से और किस प्रकार से प्रकाश डालता। वह केवल इतना ही कह सका, "जब किसी का हाथ या

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अन्य कोई निजी वस्तु उसके हाथों में आ जाती है तब उस व्यक्ति के भूत, भविष्य और वर्तमान की परिस्थितियाँ दृश्य बन कर उसके सामने आने लगती हैं ।" वह व्यक्ति कुछ तो दयालु स्वभाव का था ही, कुछ अभी घन्टे भर पहले चमत्कार देख ही चुका था । उसे पीटर की बातों पर विश्वास हो गया था । उसने पीटर हारकौस को इसी हालत में अपनी गाड़ी में, दूसरों की मदद से लिटाया और सीधे अपने घर ले गया ।

यहाँ से नई जिन्दगी शुरू हुई पीटर की । वह जब तक बिस्तर पर से ठीक होकर उठा, तब तक तो वह अमरीका के अखबारों में अपने चमत्कारों की वजह से सुर्खियों में आ चुका था । सबसे ज्यादा महत्व की बात यह थी कि उसके द्वारा बताई गई तमाम बातें सौफीसदी सत्य सिद्ध हो रही थीं । उसकी इस चमत्कारिक प्रसद्धि से जो उसे अकस्मात एक दुर्घटना के बाद मिली थी उसके पास मिलने के लिये इतने लोग आने लगे थे कि उन मेजबान सज्जन का तो सारा का सारा घर ही अस्त-व्यस्त हो गया । बाद में पीटर हारकौस की सुरक्षा के लिये भी इन्तजाम रखना पड़ा । क्योंकि उसे अपराधी जगत के लोग भी उतना ही चाह रहे थे, जितनी कि सरकारी गुप्तचर संस्थायें । कई गुप्तचर संस्थाओं ने उससे सरकार के लिये काम करने की कई बार पेशकश की । लेकिन उसने इसे परमात्मा का प्रसाद माना था इसलिये केवल सरकार के लिये ही इसका उपयोग किसी भी हालत में उसे उचित नहीं लगा लेकिन उसने आश्वासन दिया कि वह सरकारी संस्थाओं द्वारा लाई गई गुत्थियों को भी सुलझायेगा ।

एक बार कोई हत्यारा अच्छी तरह से जानकारी करके कि फलां घर में वह औरत आज अकेली है । घर में घुस गया, वहाँ उसने उस अकेली औरत को काबू में करके उसका गला घोंट कर हत्या कर दी । उसके बाद उसने सारे घर को फिर से व्यवस्थित किया, लाश को गुशलखाने में बन्द किया और जितना भी माल वहाँ मिला उसे लेकर वह रफूचक्कर हो गया । तीन दिन बाद, जब लाश की बदबू फैली, तब हत्या का पता चला । जब तक पुलिस वहाँ पहुँचती वहाँ बहुत से लोग आ जा चुके थे । कोई सुराग उन्हें मिल नहीं रहा था । बड़ी कठिन समस्या सामने थी, इस मामले में खोजी कुत्ते भी कुछ नहीं कर सके । बहुत सूक्ष्म जाँच के बाद उन्हें लाश के गले पर किसी पुराने गले कपड़े का बहुत पतला सा हिस्सा चिपका हुआ मिला । उन्होंने उसे लाश पर से ले लिया लेकिन लगातार पन्द्रह दिन तक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेहनत करने के पश्चात् भी जब पुलिस कोई खबर नहीं ले सकी तब वह पीटर के पास उस पतले से कपड़े को लेकर पहुँची। मेहनताना तय हुआ। उस पुराने गले कपड़े की जरा सी चिन्दी को उसने अपने हाथ में लिया तो वह क्या देखता है, कि एक नाटा सा भूरे रंग के उलझे-उलझे बालों वाला व्यक्ति अमुक रेस्तराँ की तीसरी मंजिल पर अमुक नम्बर की सीट पर काफी पी रहा है। उसकी टेबल पर और भी एक व्यक्ति बैठा है लेकिन लगता है कि उससे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। उसने पीली शर्ट पहन रखी है। पुलिस फौरन हरकत में आ गई। उन्होंने वायरलैस करके अगले पाँच मिनट में ही पीटर हारकौस द्वारा बताए गए हुलिए के व्यक्ति को वहाँ पा लिया, लेकिन बिना किसी शंका अथवा सबूत के उसे कैसे गिरफ्तार किया जावे। समय कम था, इसके अतिरिक्त वह काफी पीकर उठने ही वाला। उसको केवल पूछताछ करने के उद्देश्य से थाने लाया गया। वहाँ पुलिस की पूछपाछ के सामने वह सब कुछ कबूल कर गया। जिस कपड़े से उसने फंदा बनाया, गला घोंटने के लिए वह भी उसने बाद में बरामद करा दिया। इसी तरह की जाने कितनी घटनायें उसकी जिन्दगी से जुड़ी हैं।

बम्बई में किसी उद्योगपति का लड़का खो गया। लगभग छः महीने तक उन्होंने खूब तलाश किया, सारे हिन्दुस्तान में ढूंढ़ मारा लेकिन उसके माता-पिता को कोई सफलता हाथ न लगी। उन्होंने सोचा या तो वह मर गया अथवा उसे कोई हिन्दुस्तान से बाहर ले गया। जब हिन्दुस्तान से बाहर खोजने की बात आयी, तब समस्या आई कि बिना सुराग के उसे वे कौन से देश में ढूंढें। इस बात पर उनके किसी मित्र ने उन्हें पीटर हारकौस का नाम सुझाया और बोला, "उस लड़के की कोई व्यक्तिगत चीज उसके पास भेज दी जाये तो वह निश्चित रूप से बता देगा कि वह लड़का इस समय कहाँ है? हिन्दुओं में प्रत्येक लड़के का मुण्डन संस्कार होता है। जिसके तहत बच्चे के पाँच साल तक शुरू-शुरू में आये बालों को अपने कुल देवता के समक्ष जाकर कटवाते हैं। बहुत से व्यक्ति उन्हें वहीं छोड़ आते हैं जबकि कुछ लोग हिफाजत से अपने घर लाकर रखते हैं। उस खोये हुए लड़के के बाल इत्तफाक से सुरक्षित रूप से उनके घर में रखे हुए थे। उन्होंने डाक द्वारा अपने मित्र के जरिए वे बाल तथा दस हजार रुपये समतुल्य के अमरीकी डालर भेज दिए। इनके पत्र के भेजने की तारीख से पन्द्रह दिन बाद ही जवाब आ गया कि आप अपने लड़के को बम्बई में ही फलाँ सर्कस से ले लें। वह अभी एक महीने और बम्बई में रहेगा। उसके बाद वह सर्कस सुदूर पूर्व की यात्रा पर निकल जाएगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपने अपने लड़के को सब जगह, गली, मौहल्लों में ढूंढ़ा लेकिन सर्कस में नहीं ढूंढ़ा। मैं उस लड़के को घोड़े की सवारी करते हुए देख रहा हूँ। लड़के के माता-पिता को उसी दिन, अपना लड़का घोड़े के करतब दिखाते हुए उसी सर्कस में मिल गया।

इस सम्पूर्ण संसार में इस शताब्दी का सबसे ज्यादा सही भविष्यवाणी करने वाला कोई व्यक्ति यदि है तो उसका नाम है पीटर हारकौस। अन्य सभी इससे नीचे हैं। वह कोई खास पढ़ा लिखा भी नहीं है। कहीं उसने किसी सिद्ध पुरुष के पास बैठकर तपस्या भी नहीं की है। फिर ऐसा क्या कारण है? जिसकी वजह से उसमें इस प्रकार की चमत्कारिक शक्ति आ गयी, मात्र अपना सिर तुड़वाने के बाद।

वह अपने आपको अपनी इस नई जिन्दगी में कितनी ही बार इस संसार के जाने माने शरीर विज्ञानियों के सामने प्रस्तुत कर चुका है। लेकिन कोई भी यह नहीं जान सका कि उसके दिखायी देने वाले दृश्यों का रहस्य क्या है। उनके लिए जैसे यह पहेली पूर्व में थी उनके बाद का निष्कर्ष भी उन्हें वही अनबूझ पहेली के रूप में ही रहा। विज्ञान के पास इस बात को समझने का आधार अभी नहीं है। कौन जानता है, वह उसे कब मिलेगा? लेकिन मिलेगा अवश्य ही। क्योंकि विज्ञान खोज में लगा है वह पहुँचेगा अवश्य ही क्योंकि अब जो समय इस काल में विज्ञान का चल रहा है। वह भी निश्चित रूप से अच्छा समय है क्योंकि वे अपने दूसरे विज्ञानियों द्वारा पूर्व में की गलतियों को सुधारने में संकोच नहीं कर रहे हैं।

लेकिन आध्यात्म के पास पीटर हारकौस की स्थिति का जवाब सदियों पहले से रहा है। कुण्डलिनी जागरण के रूप में।

कुण्डलिनी की जागृति अवस्था कौन सी है और सुषप्ती की कौन सी है? यहाँ इस बात पर हम गौर करेंगे कि किस प्रकार से कुण्डलिनी जागृत होती है अथवा इसको जागरण करने में क्या क्रिया प्रक्रिया हमें अपनानी पड़ती हैं। यदि हम कुण्डलिनी जागरण की सारी व्यवस्था एवं बाद में उसके फलितों पर विचार करेंगे तब ही हमें पीटर हारकौस की स्थिति ठीक प्रकार से समझ आयेगी, अन्यथा हम भी पीटर हारकौस को जादुई इन्सान की पदवी देकर ना समझी में ही रह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कायेंगे।

मैंने पूर्व में लिखा है कि कुण्डलिनी शक्ति की इस शरीर में एक निश्चित जगह है। वहाँ से ही वह शक्ति इड़ा पिंघला नाड़ियों के द्वारा हमारे शरीर में प्रवाहित होकर हमारे शरीर को जीवित रखती है। इस प्रकार की अवस्था इस कुण्डलिनी की सुषप्त अवस्था कहलाती है क्योंकि अभी तक इसने केवल स्थूल शरीर को ही जीवित बनाए रखने के लिए अपनी शक्ति लगा रखी है जो कि इसकी साधारण अवस्था है। लेकिन यही कुण्डलिनी शक्ति जब इड़ा पिंगला से निकलकर तीसरी सुषमणा नाड़ी में प्रवेश कर जाती है तब वह हमें हमारे सूक्ष्म शरीर को जिसका पहले हमें पता ही नहीं चलता था उसको हमारे अनुभव में लाकर साक्षात् कर देती है, हम वहाँ उस सूक्ष्म जगत में मस्तिष्क के स्तर पर नहीं बल्कि मन के स्तर पर अपने अस्तित्व में रहते हैं। उस समय पहली बार हम मस्तिष्क से अलग हटकर अनुभव करते हैं क्योंकि मस्तिष्क तो इस स्थूल शरीर के साथ ही इड़ा पिंघला में से प्राणों के निकलते ही निष्प्राण हो जाता है। इसके उपरान्त हमारे पास मन ही तो बचता है। इस अनुभव से पहले हम मन की बातों को भी मस्तिष्क की ही क्षमता के अन्दर समझते थे। जब यही अनुभव ठीक-ठीक और मूलभूत रूप से होने लगता है। तब इस सूक्ष्म संसार में प्रवेश की स्थिति को ही हम कुण्डलिनी जागरण की अवस्था कहते हैं। चूँकि मस्तिष्क की अपेक्षा हमारा मन ज्यादा क्रियाशील है तथा उसकी पहुँच स्थूल और सूक्ष्म जगत दोनों में समान रूप से होती है। इसी कारण की वजह से साधक सूक्ष्म जगत के रहस्यों को इस स्थूल जगत में उनके प्रकट होने से पहले ही अपनी कुण्डलिनी शक्ति के द्वारा जान लेता है और जैसे-जैसे उसका अभ्यास सिद्ध अवस्था में पहुँचता जाता है उसको ये सारे कार्य-कलाप खेल के समान लगते हैं। साधक की इसी अवस्था को हम त्रिकाल दर्शी की अवस्था कहते हैं। इतना सारा जान लेने के पश्चात ही हम पीटर हार-कौस के चमत्कारिक रूप में भविष्यता होने के कारण को जान सकेंगे कि वह किस प्रकार से भूतकाल की जो गुजर गयीं हैं और जो आगे भविष्य में हमारे सामने आने वाली बातों को बता देता है। अब यहाँ यह शंका उठती है कि हम यह किस प्रकार मानें कि आज जो हमारे सामने घटित हो रहा है वर्तमान में, उसका पिछले भूत-काल अथवा भविष्य में होने वाली घटनाओं से कोई अन्तर्सम्बन्ध है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि हम किसी तालाब के किनारे खड़े होकर पानी में एक बड़ा सा पत्थर जोर से डालें तो उस पत्थर के पानी में डालने के कारण से उस पानी में तरंगें या लहरें उठने लगती हैं जो एक किनारे से दूसरे किनारे तक बाद में पहुँचती भी दिखाई देती हैं। इस समय हमारे द्वारा पानी में डाला गया वह पत्थर समय के हिसाब से भूतकाल में है। तथा जिस समय हमने वह पत्थर पानी में डाला था। वह वर्तमान था उस पत्थर से उठने वाली लहरों का दूसरे किनारे से टकराना भविष्य कहलावेगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे सामने जो भी कर्म होता है, वह होता तो काल की वर्तमान अवस्था में है। लेकिन उस कर्म का भूत एवं भविष्य से भी सूक्ष्म रूप की अवस्था में अवश्य ही सम्बन्ध होता ही है। यदि आज इस दुनियाँ में हम मौजूद हैं तो निश्चित रूप से भूत में वह स्रोत जहाँ से हम यहाँ तक आये हैं भले ही सूक्ष्म अवस्था में ही सही लेकिन होना ही चाहिये। ठीक इसी प्रकार हमारे आज वर्तमान में रहने के कारण ही भविष्य के गर्भ में हमारा स्वस्थ क्या होगा सूक्ष्म रूप में इस समय भी विद्यमान रहना ही चाहिये लेकिन सूक्ष्म अप्रकट रहता है जबकि स्थूल प्रकट। ध्वनि की तरंगें एक बार इस संसार में उठने के पश्चात समाप्त नहीं होती बल्कि वह इस ब्रह्माण्ड के किसी न किसी कोने में हमेशा रहती हैं। लेकिन क्योंकि वे समय की वर्तमान अवस्था में नहीं हैं इसलिये उनका सुनाई देना हमें असंभव है क्योंकि अब इतने समय बाद उसका स्वरूप अब स्थूल न होकर सूक्ष्म हो जाता है और सीधी सी बात है स्थूल, स्थूल को जान सकता है और सूक्ष्म, सूक्ष्म को। इस संदर्भ में यहाँ समझने की बात यह है कि हमारा मस्तिष्क तो स्थूल है लेकिन हमारा मन का स्वरूप सूक्ष्म है। और प्रत्येक भूतकाल तथा भविष्य काल सूक्ष्म अवस्था में ही होते हैं, इसी कारण से जो लोग भविष्य वक्ता होते हैं उनके मन सुषप्त अवस्था में नहीं बल्कि जाग्रत अवस्था में होता है जिसके कारण उनको चमत्कार करना असंभव नहीं होता है।

एक बात इसी संदर्भ में अवश्य ही ध्यान रखने योग्य है, मन की शक्तियां असंख्य प्रकार की होती हैं इसलिये अनन्य व्यक्तियों में अपनी मानसिक क्षमता के अनुसार ही अनन्य प्रकार से उनके मन के चेतन्य होने के लक्षण दिखाई पड़ते हैं इसलिये ध्यान रखना, इस दुनिया में पीटर हारकौस की बिलकुल हूबहू दूसरी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कभी देखने को नहीं मिल सकती है। अगर दूसरे व्यक्ति में हमें मानसिक चेतन्यता के लक्षण देखने हैं तो उसका स्वरूप कुछ दूसरे ही प्रकार का ही होगा जैसे कोई व्यक्ति केवल आपकी आँखों में आँखें डालकर ही आपके भविष्य के बारे में बता देगा दूसरा कोई स्वयं अपने मुंह से नहीं बतायेगा बल्कि आपको ही उस सूक्ष्म अवस्था में पहुँचा देगा जिसके कारण आप स्वयं अपने भविष्य का दर्शन अपने आप ही कर लेंगें। **जिस प्रकार बगीचे का माली एक ही तरीके और समान रूप से भी प्रत्येक पौधों को पानी देता है लेकिन प्रत्येक पौधे में एक जैसे रंग के तथा एक जैसे आकार के फूल नहीं खिलते। इसी प्रकार एक ही तरह की मानसिक चेतन्यता के आधार पर अलग-अलग व्यक्तियों में उसका प्रभाव भी अलग-अलग देखने को ही हमें मिलेगा।**

मैंने सुना है हिमालय में बद्रिकाश्रम के पास ही किसी गुफा में कोई बाबा रहते हैं। उनके पास इस संसार के किसी भी भाग का अथवा किसी भी भाषा को बोलने वाला व्यक्ति पहुँचता है तो उसकी भाषा को समझकर वे उससे बात करने लगते हैं। १५०० आश्चर्य नामक पुस्तक में इसका विवरण दिया हुआ है। हमारे भारतवर्ष का अध्यात्मिक इतिहास इस प्रकार की अनगिनत घटनाओं से भरा पड़ा है। मीरा को जब ज्ञान प्राप्त हो चुका था तब उसके पास उस समय का महान सम्राट अकबर और उसका महान संगीतज्ञ तानसैन दोनों वेश बदलकर मीरा के सामने पहुँचे। उन्होंने मीरा की परीक्षा लेने के लिए ही तो अपना छद्म वेश बनाया था। वे मीरा की आँखों को तो धोखा दे सकते थे? लेकिन क्या वे मीरा के मन की चेतन्यता को धोखा दे सकते थे? वही हुआ, मीरा ने दोनों को सिर के झुकाते ही पहिचान लिया। जिससे प्रभावित होकर ही वह दुश्मन की पत्नी के चरणों में गिर कर अपनी भेट जो वह अपने साथ लाया था, स्वीकार किये जाने की मीरा से मिन्नतें मांगने लगा। भगवान बुद्ध के पीछे उस समय का नर पिशाच अंगुलिमाल उनको मारने के लिये दौड़ा, जिसके डर से आदमियों के प्राण सूख जाते थे, लेकिन भगवान बुद्ध अपनी उसी मन्द-मन्द चाल से चलते रहे। अब बड़ी अजीब बात हुयी बुद्ध तो धीरे-धीरे बिलकुल सामान्य गति से चले जा रहे थे लेकिन, वह नर पिशाच अंगुलिमान उनके पीछे पूरी ताकत लगा कर दौड़ रहा था फिर भी भगवान बुद्ध उसके हाथ नहीं लग रहे थे। जब वह दौड़ते-दौड़ते बुरी तरह थक गया तब भगवान बुद्ध ने ठहरकर उसे अपनी चेतन्य शक्ति से ही उसके हृदय के कपाट खोल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिये जिसके कारण ही वह मानव जाति का खूँखार हत्यारा जो अभी थोड़ी देर पहले बुद्ध को जान से मारने के लिये ही तो आया था बुद्ध से दृष्टि मिलते ही उनके चरणों में बैठकर दया की भीख माँगने लगा। महर्षि अरविंद ने अपनी चेतन्य शक्ति के द्वारा ही भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान अपने शत्रु पक्ष के क्रूर अंग्रेज अफ़सर को अपना भक्त बना लिया था और न जाने कितने ही असंख्य उदाहरण हमारी इस भारत की मिट्टी में आपको मिल जायेंगें क्योंकि **सारे संसार में भारत ही एक मात्र वह देश है जहाँ मानसिक चेतन्यता प्राप्त करने का क्रमबद्ध तरीका यहाँ की हिन्दू संस्कृति में विद्यमान है।**

यहाँ आपको यह शंका उत्पन्न होगी कि पीटर हारकौस को तो वह मानसिक चेतना की शक्ति एक दुर्घटना के कारण मिली थी न कि किसी तथाकथित क्रमबद्ध साधना करने के पश्चात्, फिर इन बहुत से उदाहरणों से पीटर की स्थिति का सामंजस्य किस प्रकार से बैठता है? इस शंका का निवारण करने के लिए मैं आपके समक्ष महाकवि कालिदास का उदाहरण देना चाहूँगा। जिनको उस चेतन्यता के मिलने के पहले पीटर हारकौस जैसी ही दुर्घटना का शिकार अपनी पत्नी के क्रोध के कारण बनना पड़ा था।

हमारे भारतवर्ष में ही एक रजवाड़े की राजकुमारी अपूर्व सुन्दरी तो थी ही साथ ही साथ वह अद्वितीय विद्वान भी थी। उसने अपनी विद्वता से अपने राज्य के दरबारियों को तो हरा ही रखा था। आस पास के क्षेत्र में भी उसकी टक्कर का कोई भी पुरुष नहीं था। इससे भी ऊपर एक आफत और थी अपने पिता के सामने इस राजकुमारी ने प्रतिज्ञा कर रखी थी कि जो मुझे ज्ञान में हरा देगा मैं उसी पुरुष से विवाह करूँगी अन्यथा किसी मूर्ख से विवाह करने की अपेक्षा कुवाँरी ही रहना ज्यादा पसन्द करूँगी।

बार-बार राजा अपने दरबारियों को इस राजकुमारी के लिए किसी योग्य वर की तलाश में भेजता लेकिन हर बार आगन्तुक उम्मीदवार लड़की के हाथों पराजित होकर चला जाता। जिस कारण से अच्छे घरानों के यहाँ से उसके लिये उम्मीदवार मिलने भी बन्द हो गये थे। क्योंकि कोई भी अपनी बेइज्जती, अपनी होने वाली पत्नी से नहीं कराना चाहता था। इस कारण से दरबारी इस लड़की की हठधर्मी से बड़े भारी परेशान थे लेकिन राजा के हुकुम को मानकर बार-बार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूर-दूर की यात्राएँ वर की तलाश के लिए उन्हें करनी ही पड़ती थी। इसी प्रकार एक बार राजकुमारी के लिए योग्य वर ढूंढने के लिये निकलने वाले लोग बड़े परेशान होकर एक पेड़ के नीचे विश्राम के लिए बैठे थे उसी पेड़ पर एक सुन्दर सा लड़का अपनी कुल्हाड़ी के द्वारा धुन में मस्त होकर जिस डाल पर बैठा था उसी डाल को काटे जा रहा था। इन दरबारियों का ध्यान जैसे ही उधर गया उसको पुकार कर नीचे उतार लिया। लड़का बोला, "कहिए क्या काम है ? वे बोले, "पागल है क्या ? जिस डाली पर बैठा है उसी को काट रहा है। डाली के कटकर गिरने के साथ-साथ तू भी उसके साथ नीचे गिरकर मर जाता और उल्टे हमी से पूछ रहा है कि क्या काम है ?

जब यह बात उस लड़के ने समझी तो वह उन लोगों से बहुत प्रभावित हुआ। उनमें से एक दरबारी ने दूसरे से कहा, "इस लड़के को ही ले चलो, राजकुमारी के लिए। अब और कोई तो मिलता नहीं है। देखने में यह खूबसूरत भी है। दूसरे ने भी उसकी बात का समर्थन किया। इतना आपसी विचार विमर्श करने के पश्चात उन्होंने उस मूर्ख लड़के से कहा, "हम तुम्हारा विवाह अपनी राजकुमारी से करवा सकते हैं लेकिन हमारी एक शर्त है, कोई तुमसे कितना भी कहे या कुछ भी पूछे, तुम्हें अपना मुँह बन्द रखना पड़ेगा। यानि तुम एक शब्द भी नहीं बोलोगे, जब तक कि तुम्हारा उस राजकुमारी से विवाह नहीं हो जाता।

अच्छी तरह से समझाकर राजदरबार में वे दरबारी उस लड़के को ले आए। जब राजकुमारी को पता चला कि उसके साथ विवाह करने की गरज से कोई उम्मीदवार आया है तो उसकी परीक्षा लेने के लिए स्वयं भी दरबार में पहुँच गयी। उस लड़के की सुन्दरता को देखकर एक बार तो वह भी हतप्रभ रह गयी। कितना सुन्दर गठीला शरीर है इसके पास, वह मन ही मन कुछ नरम हो गयी थी उसके प्रति। इस बात को इस राजकुमारी की भूल कहलें या उसका भाग्य। खैर वह उसके सामने ही बैठ गयी।

लड़के ने तो आज तक इस प्रकार की परिस्थिति की स्वप्न में भी कल्पना तक नहीं की थी। उस बेचारे को अनुभव तो होता ही कहाँ से ? वह तो संकोच से अपने आप में सिकुड़ कर दोहरा हो गया था। इस बात को उस राजकुमारी ने भी भाँप लिया था। इस बात को जानकर उनमें से मुख्य दरबारी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बोला, "राजकुमारी जी इन्होंने तो बहुत कहा था कि कहीं बहस करने से किसी के ज्ञान का पता चलता है। लगता है तुम्हारी राजकुमारी मूर्ख ही है इन्होंने तो मना ही कर दिया था, यहाँ आने को लेकिन हम ही इनको बड़ी मुश्किल से यहाँ मना कर लाए हैं वह भी इनकी एक शर्त पर कि मैं कुछ भी अपने मुँह से नहीं बोलूँगा। अगर आपकी राजकुमारी इतनी मेधा हैं तो उसे मुझसे मूक भाषा मे ही बातें करनी होंगी, यह हमारी शर्त है। अन्यथा हम बिना बात किये ही लौट आवेंगे इसलिए राजकुमारी जी हमारी आपसे विनती है कि इनकी शर्त को स्वीकार करके अपनी विद्वता की छाप इनके ऊपर छोड़ दीजिए।

राजकुमारी एक तो इस लड़के के रंग रुप को देखकर पहले से ही प्रभावित थी। इसके साथ-साथ राजकुमारी ने यह भी सोचा कि यह मुझे प्रतिद्वन्दिता के लिए ललकार रहा है? इस प्रकार की हिम्मत तो आज तक किसी की नहीं हुई थी कि कोई उल्टा उसे ही ललकारे खैर उसने लड़के की शर्त जो दरबारियों ने उसे बतायी थी मानली। वह कोई गूगों की पढ़ाई जाने वाली भाषा की अध्यापक तो थी नहीं कि अनगिनत प्रश्न इस लड़के के खिलाफ खड़े कर सकती इसके अलावा यहाँ एक बात और थी कि उस राजदरबार में सभी दरबारीगण उस लड़की को पराजित या बेइज्जत हुआ मन से चाहते थे क्योंकि इसने सभी की नाक में दम कर रखा था। प्रतियोगिता शुरू हुई।

राजकुमारी की तरफ से पहला प्रश्न इशारे से किया गया—जिसमें उसने लड़के की तरफ एक उगंली खड़ी की। इस मूर्ख लड़के ने सोचा कि यह मेरी आँख फोड़ने के लिए मुझे एक उगंली दिखा रही है। इस बात को सोच कर इस लड़के को बड़ा गुस्सा आया कि यह मेरी एक आँख फोड़ेगी, मैं इसकी दोनों आँखों को ही फोड़ डालूंगा। इसने समझ क्या रखा है। इतना मन में विचार करके इस लड़के ने राजकुमारी की तरफ अपने हाथ की दो अंगुलियों को उसकी आँखों की तरफ कर दिया।

वहाँ बैठे दरबारी तो पहले से ही संभावित प्रश्नों को करीब-करीब जानते ही थे। इसलिये लड़के के इस इशारे को राजकुमारी को समझाने दृष्टि में बोले, "देखा राजकुमारी जी। आपके प्रश्न का कितना सुन्दर एवं सटीक उत्तर आपको दिया है। आप ने पूछा था कि ईश्वर एक है, तो इन्होंने बताया कि ईश्वर एक नहीं दो हैं एक साकार दूसरा निराकार। इतना सुनकर राजकुमारी शर्म से लाल हो गई

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और अन्दर ही अन्दर तिलमिला भी गई। खैर धीरज रखते हुये, उसने दूसरा प्रश्न इशारे से ही किया। जिसमें उसने अपना दाहिना हाथ का पंजा इस लड़के को दिखाकर दो बार हिला दिया था।

लड़के ने सोचा—यह अब आँख तो फोड़ेगी नहीं क्योंकि मैंने इसकी दोनों आँखों को फोड़ने का कह दिया था लेकिन अब यह मुझे थप्पड़ मारेगी। मैं इसे घूंसा मारूंगा। इसलिये यह मूर्ख लड़का जोर-जोर से अपनी मुट्ठी को कस कर उसे दिखाने लगा।

दरबारियों ने एक बार फिर हर्ष ध्वनि की और राजकुमारी के सन्मुख होकर बोले, "अबकी बार आपने इनसे पूछा था—दो बार अपने हाथ के पंजे को हिलाकर कि पाँच और पाँच दस इन्द्रियां हैं तो इन्होंने अपना जवाब भी देखो दृढ़ता से अपनी मुट्ठी को कस कर दिया है कि सारी मेरे वश में हैं।" इस बात को तो सुनकर राजकुमारी भीतर तक बौखला गई।

कहने का तात्पर्य यह है कि इस प्रकार लड़की ने कुछ प्रश्न और किये। उस मूर्ख लड़के ने ऐसे ही जबाव जो उसके मूर्खतापूर्ण मस्तिष्क में आये, उसने वहाँ दिये। उन सभी का वहां के दरबारियों ने बड़ी सुन्दर-सुन्दर व्याख्या की और उस राजकुमारी को बेवकूफ बनाकर एक मूर्ख लड़के के हाथों पराजित करवा दिया। लड़की की प्रतिज्ञा के अनुसार उसी समय उस लड़के के साथ उस राजकुमारी की शादी पण्डितों ने करवा दी।

जब दो दिन बाद उस लड़के ने बोलना शुरू किया। तब उसे दरबारियों के ऊपर बहुत गुस्सा आया और सोचा कि उसके साथ तो बहुत बड़ा धोखा किया गया हैं। लेकिन, अब क्या किया जा सकता था। उसकी शादी तो उस मूढ़ के साथ हो चुकी थी।

वह जो भी बात करती वह उसकी प्रत्येक बात का जबाब ऊट-पटांग ही देता था। जब राजकुमारी ज्यादा सहन न कर सकी और बेहद गुस्से में भर गयी। उसे अपना पराया कुछ न सूझा उसने इस लड़के में जोर से उसकी पीठ में लात मारी जिसके कारण से वह अपने सामने की सीढ़ियों में गिर गया। चोट के कारण जगह जगह से उसके खून भी निकलने लगा। वह बडा अपमानित भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

था अपनी मूर्खताओं पर। अपने ही दांतों के बीच में अपनी ही जीभ आ जाने के कारण से उसकी जीभ भी कट गई थी। थोड़ी देर में ही बेहोश हो गया, पता नहीं कितनी देर तक वह वहां ही पड़ा रहा उसी अवस्था में। लेकिन जब उसको होश आया तब वह लड़का जैसा दुर्घटना से पहले था, वैसा अब नहीं था। अब तो वास्तव में विद्वान हो चुका था और इतना भारी विद्वान हो गया था कि वही पत्नी अब उसके तलुवे चाटने लगी थी। कालान्तर में यही लड़का महाकवि कालिदास के नाम से इस सम्पूर्ण संसार में छा गया। आज भी उसके काव्य ग्रंथों को लेकर जाने कितने ही शोध के छात्र महाकवि कालिदास के नाम से पी० एच० डी० प्राप्त कर रहे हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि पीटर हारकौस आज इस संसार के समक्ष जीवित स्थिति में हैं और कालिदास का उदाहरण हमारे इस दुनियाँ में आने से पूर्व का है। लेकिन इस बात से क्या अन्तर पड़ता है। हमें तो ठीक से बहुत गहरे में उतर कर यह जानना हैं कि कुण्डलिनि जागरण के पश्चात आदमी कुछ अजूबा हो ही जाता है। वह चमत्कारिक रूप से कुछ दिनों में ही हम सबसे ऊपर निकल जाता है। **ये दोनों प्रकार की घटनायें ऐसी उदाहरण हैं जिनमें कुन्डलिनी बिना किसी तपस्या बल्कि दुर्घटना वश जागृत हुयी है। पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण से केवल मन की एक पर्त इनके ऊपर से हटने को बची थी जो इनको इस दुर्घटना के कारण हट गयी और इस प्रकार से वह व्यक्ति एक दूसरे ही प्रकार का व्यक्ति हमारे सामने हमारे देखते देखते हो जाता है।** हमारा आध्यात्म विज्ञान इसको पूर्ण रूप से मान्यता प्रदान करता है बिना किसी सोच संकोच के। इन सारी बातों को जानकर यदि हम यह सोचने लग जावें कि कुन्डलिनी जागरण के पश्चात हमारे ऊपर परमात्मा की विशेष कृपा हो जाती है अथवा हम में परमात्मा उतर कर झलकने लगता है। यह कुछ कुछ हमें ठीक लगते हुये भी गलत ही हैं क्योंकि अगर इस बात को बड़ी श्रद्धापूर्वक भी हम इसे इस तरह से समझते है तब भी गलत ही समझते हैं क्योंकि ऐसा सोचते ही **हम उस परम सत्ता को अपने से दूसरा मान लेते हैं। जबकि हम स्वयं उसी महासागर की बूंद ही तो हैं। यानि कि हम स्वयं ब्रहम ही तो हैं। जो गुण उस पार ब्रह्म परमात्मा के होते हैं। वे ही तमाम लेकिन छोटे रूप में ही सही इस शरीर के द्वारा परिलक्षित होते हमें हमारी कुन्डलिनी जागरण होकर सिद्ध अवस्था में पहुँचने के**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पश्चात् दिखाई पड़ते हैं।

गणित को भी लगायें तो तब भी मामला एक दम से सुलझा हुआ है। सागर के पानी में और हमारे पास की एक बूँद के पानी में कुछ तात्विक भेद तो नहीं है जो हाइड्रोजन और आक्सीजन सागर के पानी में होती है। वही इस बूँद के पानी में भी तो है। केवल यदि कुछ भेद है उस अथाह सागर और इस बूँद में, तो वह केवल परिमाण का ही है जो इस असीम ब्रह्माण्ड में रचे बसे ब्रह्म में है वही हमारे इस छोटे से ही अंश में है। फिर हम और वह अगल अलग क्यों हो सकते हैं। यदि वह ब्रह्म हैं तो हम भी ब्रह्म ही हैं यह हो सकता है कि वह सागर हो और हम बूँद, वह परमात्मा हो और हम आत्मा, वह अंशी हो और हम उसके अंश। यही है उस वाक्य की विवेचना जिसमें कहा गया है "अहम् ब्रह्मास्मि"।

उस परम सत्ता का क्या छोटा और क्या बड़ा? इसलिए ध्यान रहे जो कुछ भी हमारे द्वारा उस परमात्मा का रूप दृश्य रूप में इस दुनियां में जितने परिमाण में हमें दिखाई देता है वह हमारी और अपनी क्षमता के अनुसार ही हैं उसके भण्डार में कोई कमी नहीं। यही कारण है जिसमें अलग-अलग साधकों की उनकी अपनी साधना के हिसाब से अलग-अलग स्थिति हमें यहाँ देखने को मिलती है।

यहाँ यह सत्य है कि अभी तो हमारी भी आकांक्षायें हमारे संस्कारों के कर्माशेषों में पड़ी है। इस कुन्डलिनी साधना के द्वारा ही उन्हें उनकी सूक्ष्म अवस्था में ही हम भस्म कर सकते हैं अथवा उन्हें जड़ रूप में ही समाप्त करने की क्षमता जागृत कर सकते हैं। यदि फिर भी हमें इस दुनिया में आना पड़ता है तो इसका कारण-हमारे ऐसे कर्म होते हैं जो किन्हीं दूसरी आत्माओं से संबंधित होते हैं जिनको इस दुनिया में जन्म लेकर दूसरों के साथ रहकर ही भुगताया जा सकता है।

अब प्रश्न उठता है कि जब सूक्ष्म सूक्ष्म को ही जान सकता है तब हम अनुभवों को इस स्थूल मस्तिष्क के द्वारा किस प्रकार से जान सकते हैं? मैंने इड़ा पिंगला के अतिरिक्त तीसरी सुषमणा नाड़ी के ऊपर लिखते हुए पूर्व में बताया है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि यह सुषमणा नाड़ी मेरूदण्ड के अन्दर से ऊपर की ओर गर्दन के पिछले हिस्से से होती हुयी मस्तिष्क में चढ़ती है लेकिन वहाँ जाकर इसका दिखाई पड़ना कठिन हो जाता है क्योंकि मस्तिष्क में चढ़कर यह अरबों-खरबों रेशों में विभाजित होकर मस्तिष्क के प्रत्येक कोष से अपना सम्पर्क बनाती है चाहे वह कोष जागृत हो अथवा सुषुप्त। इसके पश्चात यह फिर एकत्र होकर हमारे माथे पर सामने की ओर से आकर दोनों भवों की बीच इड़ा पिंघला नाड़ियों से इस युक्त त्रिवेणी पर आकर मिल जाती है।

शास्त्रों में इस सिर के ऊपरी हिस्से को सहस्त्रार या दस हजार कमलों का प्रदेश कहा है। प्रत्येक कमल में सैकड़ों सैकड़ों कलियाँ हैं। इस स्थान को इस सहस्त्रार शब्द से इसलिए भी सम्बोधित किया है क्योंकि सुषमणा नाड़ी यहाँ मस्तिष्क के प्रत्येक कोष से सम्पर्क में ही होकर आती है तथा हम यह भी जानते हैं कि मस्तिष्क के कोषों की संख्या तो अकूत है या-अरबों-खरबों में है।

जब तक कुण्डलिनी शक्ति इड़ा पिंघला के द्वारा इन कोषों में पहुँचती रहती है। हमारा मस्तिष्क इस स्थूल जगत का अनुभव करता रहता है लेकिन जब कुन्डलिनी शक्ति इड़ा पिंघला से निकल कर सुषमणा में प्रवेश करके मस्तिष्क के कोषों को प्रकाशित करती है तब हमारा मस्तिष्क सूक्ष्म जगत का अनुभव करने लगता है। हमारा मस्तिष्क इस प्रकार से दो तरह का है जब तक हमने कुन्डलिनी को जागृत नहीं किया है यानि यह अपनी साधारण अवस्था में है तब तक हमारा मस्तिष्क भी स्थूल या जड़ ही है लेकिन जैसे ही यह मस्तिष्क सुषमणा के द्वारा प्रकाशित हो जाता है तब यही चैतन्य होकर सूक्ष्म के अनुभव करने लगता है। इसलिए जब कोई साधक इड़ा पिंघला में रहते हुए भी थोड़ी शक्ति सुषमणा में हाश-पूर्वक भेजने की क्षमता जागृत कर लेता है तब वह सिद्ध कहलाता है। इस प्रकार की अवस्था में पहुँचने के पश्चात ऐसा सिद्ध आपके सामने बैठे-बैठे ही अपना ध्यान अपनी विषय वस्तु पर केन्द्रित करके भविष्य में होने वाली घटनाओं को आपके सामने उजागर कर सकता है। जब उसमें इतनी सामर्थ्य आ जाती है। तब वह इस दुनियाँ में साधारण होकर नहीं रह जाता है। वह अपने आप असाधारण हो ही जाता है।

अब मैं इस कुन्डलिनी शक्ति को प्रयोगात्मक रूप से जागृत करने के लिए

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसके दो भाग कर रहा हूँ। प्रथम है स्थूल साधना और द्वितीय है सूक्ष्म साधना साधना के प्रथम भाग में यानि (स्थूल साधना) में हमें अपने स्थूल शरीर को साधना पड़ता है जबकि (सूक्ष्म-साधना) में हमें अपने मन को साधना पड़ता है।

इस कुण्डलिनी को जागृत करने की साधना के दौरान हमें हमारे जीवन के लिए बड़े संकट उपस्थित हो सकते हैं क्योंकि सूक्ष्म साधना हमें अपने अचेतन की अवस्था की ओर ले जाती है और चूँकि हमने अपने शरीर को इस अप्रत्याशित घटना के लिए पहले से तैयार नहीं किया है इसलिए ध्यान रखना, हमारे लौटने की व्यवस्था में अवरोध पैदा हो सकता है। जिसके कारण से हमारे बिना मरे भी दुनियाँ वाले हमें मृत घोषित करके हमारे शरीर को नष्ट कर सकते हैं। इसमें दुनियां वालों का कोई कसूर नहीं है। कसूर यदि है तो वह हमारा ही है और वह भी केवल इतना कि हम बिना अपने शरीर की क्षमता नापे ही शरीर को छोड़कर मन की गहराईयों में कूद गये थे। जब हम इस शरीर में रहते हैं। तब हम अपनी बुद्धि के द्वारा दोनों इड़ा और पिंघला नाड़ियों में सामजंस्य रखते हैं यानि हमारा नरवस सिस्टम ठीक रहता है लेकिन यदि इस नरवस सिस्टम में जरा भी गड़बड़ी हो जाय तो ध्यान रखना, फिर उसका ठीक होना करीब-करीब नामुमकिन ही होता है। मेडीकल साइन्स की दृष्टि से भी और आध्यात्म की दृष्टि से भी। क्योंकि आध्यात्म जिन नाड़ियों को आधार बना कर प्रयोग करता है, यदि वे आधार ही समाप्त हो जायें तो वहाँ किस प्रकार से दुबारा सामान्य स्थिति आयेगी इसलिए हमें पहले अपने शरीर को कठिन साधना में, कठिन तप-श्चर्या के द्वारा तपाना ही होगा अन्यथा हमारे असफल रहने की ही ज्यादा संभावना है। फिर भी यदि कोई बिना किसी साधन को साधे ही मन वाँछित फल प्राप्त करता है तो भी ध्यान रखना, उसके नित्य कर्मों में या उसके अपने धन्धे में कोई कर्म ऐसा है जिसने उसको सक्षम बना दिया है अथवा उसका मस्तिष्क उन कठिन परिस्थितियों को सहन करने के लिए उसके नित्य कर्म के द्वारा इस काबिल हो गया है।

जैसे कोई व्यक्ति पानी में गोता खोरी करता है। उसे काफी देर तक गहरी साँसें रोके रखने का अभ्यास हो जायेगा। कोई व्यक्ति एयर-फोर्स में नौकरी करता है। उसे हवाई जहाज से छाता लेकर कूदने के दौरान बार-बार मृत्यु जैसी स्थिति

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से उसका साक्षात होता है। जब तक उसकी छतरी नहीं खुलती तब तक उसके ऊपर क्या बीतती है उस अनुभव के दौरान उसकी अपनी बुद्धि की क्षमता बढ जाती है जिसके कारण से वह नित्य प्रति वह कार्य करके भी घबड़ाता नहीं है, बेहोश नहीं हो जाता है। **इसी प्रकार के बहुत से कार्य इस दुनियां में हो सकते हैं, जिनमें आदमी को मृत्यु से दो टूक बातें करने के अवसर आते हैं। उन क्षणों को हम यदि होशपूर्वक अपनी बुद्धि की उपस्थिति में झेल जाते हैं तो ध्यान रखना ये ही क्षण हमारे शरीर की क्षमताओं में असीमित बृद्धि कर देते हैं।** मुझे याद आती है गौमुख की एक घटना, जिसमें मेरा मृत्यु से इतने समीप से सामना हुआ जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था।

मेरे एक मित्र हैं नरेन्द्र पाराशर, मैंने अपने जीवन की ज्यादातर पवित्र स्थलों की यात्रायें इन्हीं के साथ की हैं। हम दोनों अपनी-अपनी पत्नी तथा बच्चों के साथ थे। मेरे साथ मेरे माता-पिता भी थे। उन दिनों मेरे पास एक पुरानी एम्बेसडर थी जिसको मैं स्वयं चलाकर उस यात्रा पर ले गया था। पाराशर जी तो चलाना नहीं जानते थे। ड्राईवर कोई साथ नहीं ले गया था। हम कुल मिलाकर छः व्यक्ति तो बड़े तथा दो छोटे बच्चे थे। हम केदारनाथ एवं बद्रीनाथ के दर्शन करने के पश्चात गंगोत्री पहुँचे। हम सभी बीबी-बच्चों सहित सुबह ११ बजे के लगभग गंगोत्री पहुँच गये थे। सरकारी पर्यटक विश्राम गृह में हमें स्थान मिल गया। हमने अपना सारा सामान तथा सभी को वहाँ पहुँचा दिया। पिताजी की उम्र करीब सत्तर वर्ष की उन दिनों रही होगी। हम दोनों की उम्र २५ और ३० वर्ष के लगभग होगी यानि पाराशर जी मुझसे पाँच वर्ष बड़े होंगे। हम जब बाजार में खाना खा रहे थे तो हमने वैसे ही जानकारी के लिए उस ढाबे वाले से पूछा कि गंगा की धारा यहाँ से किस प्रकार से निकलती है। हमारा मतलब है किसी प्रपात (झरना) में से या बर्फ से ग्लेशियरों के पिघलने के कारण ? वह बोला, साहब लगता है; आप पहली बार आये हैं। यहाँ तो केवल गंगोत्री का मन्दिर है, गंगा तो यहाँ से सत्रह किलोमीटर दूर "गौमुख से निकलती है।" उसके इस जवाब ने हमें आश्चर्य में डाल दिया क्योंकि हम तो यह सोच रहे थे कि गंगा गंगोत्री से ही निकलती होगी। इसके बाद प्रत्युत्तर में हमने प्रश्न किया कि "वहाँ कैसे पहुँचेंगे; "पूछने पर उसने बताया, कि वहाँ पर जाने का कोई साधन नहीं है।" सिवाय अपनी स्वयं की टाँगों के। इसके साथ ही कुछ दिक्कतें और हैं, रास्ते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में कहीं भी पानी या चाय नाश्ते का कोई साधन नहीं हैं। रास्ता ऐसा दुर्गम है कि पहाड़ की तलहटी में गंगा बहती है और थोड़ा-थोड़ा पहाड़ को छीलकर पग-डन्डी बनाई गई है। वह कहीं चार फुट चौड़ी है तो कहीं केवल एक फुट। इसी रास्ते की परेशानी के कारण ही वहाँ बहुत कम लोग जाते हैं। अगर गंगोत्री पर एक हजार व्यक्ति दर्शन को एक दिन में आते हैं तो गोमुख पर दस व्यक्ति ही मुश्किल से पहुँचते होंगे। उनमें भी संख्या ज्यादातर बाबाजीयों की ही होती है। स्त्री-बच्चों का तो वहाँ जाना बहुत ही कठिन है।

खाने के बाद विश्राम-गृह पर लौटते हुए हम दोनों ने चुनौती के रूप में गौमुख पर जाने का विचार स्वीकार कर लिया और निश्चय किया कि हम दोनों अकेले ही चलेंगे। सभी को यहीं छोड़ देंगे। इनको रात्रि में किसी प्रकार की तकलीफ न हो ऐसी व्यवस्था हम कर जावेंगे।

विश्राम गृह पहुँच कर हमने सूचना दी कि हम गौमुख जा रहे हैं तथा कल दोपहर तक आ जायेंगे। बिना समय नष्ट किये एक बजे अनुमानतः या इससे थोड़ा पहले हम गौमुख के लिए चल दिये। रास्ते की जानकारी हमें जल्दी ही चल गयी। हमें बताया गया कि गौमुख से थोड़ा पहले ही एक किन्हीं लाल बाबा का आश्रम है जो आये हुए प्रत्येक यात्री को निशुल्क खाना तथा आवास की व्यवस्था स्वयं अपने पास से करते हैं। रात्रि को ठहराते हैं ओढ़ने को कम्बल भी देते हैं।

हमारे पास बाँस की पतली-पतली जिनमें नीचे नुकीले लोहे की कील ठुकी थी हमारे हाथों में थीं जो हमें पहाड़ पर चढ़ने में तथा ढलकान पर उतरने में बड़ी मदद कर रहीं थीं। लगभग दो घण्टे की लगातार चढ़ाई के बाद हम एक खुले से स्थान पर आकर ऐसे हाँफते हुये गिर से गये कि कहाँ आ फँसे। दस मिनट तक विश्राम लेने के पश्चात ही हम आपस में कुछ बोल सके, पाराशर जी बोले, "अभी तो हम बहुत थोड़ा सा चलकर ही आये हैं लेकिन ऐसा लगता है कि अब अगर वापिस भी चलेंगे तो लौटने की भी सामर्थ्य अब नहीं है।" उन्होंने जो बात कहीं थीं, वह बिल्कुल सही ही कही थी क्योंकि हम उस समय लगभग समुद्र से १२००० फीट की ऊँचाई पर थे, जिसके कारण हम आक्सीजन की बहुत कमी अनुभव कर रहे थे। अपनी सामान्य बात-चीत में भी हमारी साँस फूल रही थी लेकिन पार्श्व-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शरजी का यह कहना कि "मुझमें तो वापिस लौटने की भी शक्ति नहीं बची है।" इस बात को कहना उस समय बड़ा आसान था लेकिन इसके फलितार्थ मैं मृत्यु का आमन्त्रण था जो कि हमें रात्रि में ठन्ड की वजह से निश्चित रूप से मिलती।

उनके इस प्रकार के कथन के पश्चात मैंने इतना ही कहा कि "अभी हम थके हुये हैं, आधे घण्टे तक विश्राम लेने के पश्चात ही हम ठीक से विचार कर सकेंगे, क्योंकि अभी हमारे फैसले इस थकान से प्रभावित होंगे।" आधे घण्टे बाद में हमने अपने आपको बिल्कुल संयत पाया। तब मैंने अपने शब्दों को थोड़ा सा वजन देकर उनके सामने रखा, "मैं भरतपुर से और आप डीग से, यहाँ इस धार्मिक यात्रा पर आये हैं। गंगोत्री पहुँचने से पहले तक हम सभी इस रास्ते के दुर्गम पहाड़ी सड़क मार्ग पर कार से चलते हुये-कहते रहे थे कि अगर जीवित वापिस लौटे तो अपने-अपने संसार में जाकर मिल लेंगे। इस बात में अब भी कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। अगर कुछ थोड़ा बहुत परिवर्तन इसमें आया भी है तो वह केवल इतना ही कि पहले जहाँ हमारा संसार भरतपुर और डीग में था अब वही संसार गंगोत्री के उस पर्यटक विश्राम गृह में है। जहाँ हमारे सांसारिक सम्बन्धी माता-पिता, बीबी-बच्चे मौजूद हैं। अब तो हमें इस तथ्य पर गौर करना है। यदि हम जीवित गौमुख से वापिस लौटे तो अपने-अपने संसार में आकर मिल लेंगे, नहीं तो गंगा की गोद में समा जायेंगे। एक बात तो यह है और दूसरी है इसके विपरीत कि अभी भी समय है वापिस लौट चलें लेकिन, इतना ध्यान रखना यदि गौमुख जाने की हिम्मत हम आज नहीं कर सके तो फिर इस जिन्दगी में तो इस यात्रा की सोचना भी नहीं क्योंकि जो स्थिति हम यहाँ देख रहे हैं, हमारे शेष जीवन में यहाँ सुगम रास्ता बन जावें, यह संभव ही नहीं है। सन्नाटा खिंच गया थोड़ी देर के लिए हम दोनों के बीच कुछ समयोपरान्त पराशर जी उठे शायद निशाना ठीक जगह पर लगा था, बोले- "जो होगा सो देखा जायेगा।" मैं स्वयं तो इसके लिए तैयार ही था हम दोनों फिर से यात्रा पर आगे बढ़ चले थे। अब ऐसा लग रहा था कि पहला वाला श्यामदेव शायद वहीं रह गया है। अब तो कोई और ही यात्रा कर रहा है। खैर जो भी हों जैसे-तैसे हम आगे बढ़े जा रहे थे, एक दम शान्त, तभी हमें बारह वर्ष का एक लड़का मिला जो अपनी पीठ पर आलू का थैला लादे-लादे पीछे से चला आ रहा था। भले ही वह बच्चा ही था लेकिन बड़ा सुख मिला उसे देखकर कि कोई संगी साथी तो मिला-इस अनजान

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रास्ते पर। पूछने पर उसने बताया, वह लाल बाबा के आश्रम पर यह सामान ले जा रहा है।

दो तीन घण्टे चलने के पश्चात अब हम और भी कठिन तथा पिछले मार्ग से भी बढ़कर दुर्गम मार्ग पर हम आ गये थे। पहले हम पक्के पहाड़ों पर चले थे, जहाँ हमारे बाँयीं तरफ एक दम सीधी हजारों फुट ऊँची पहाड़ की चोटियाँ थीं। जो कभी दिखाई देती थीं, कभी नहीं। हमारे दाँयीं तरफ पाँच सौ फुट नीचे गंगा बह रही थी जो नीचे की तरफ झाँकने पर पगडन्डी की तरह दिखाई देती थी। ऊँचे से ऊँचे स्थान पर यदि कोई पेड़ और पक्षी हमें दिखाई पड़े तो वे थे भोजपत्र के पेड़। भोजपत्र का पेड़ जिसके तने से सफेद कागज की तरह के पतले पत्र उतारे जा सकते थे। पक्षी के नाम पर मिला हमें कौआ, जिसके बदन पर कुछ बालों का भारीपन था। यहाँ पर यह सुविधा फिर भी थी, मौसम कैसा भी हो कम से कम पैरों के नीचे जमीन तो पक्की थी लेकिन अब आगे जो रास्ता हमारे सामने था वह एक दम बदल गया था। गंगा तो अब भी उतनी ही नीचे हमसे थी और पहाड़ की चोटी भी उतनी ही ऊँची होगी लेकिन अब पहाड़ पक्के नहीं थे बल्कि कच्चे चूने कंकड़ के रेतीले से थे। कहीं बड़ी-बड़ी शिलायें भी उनमें अटकी सी लग रहीं थी जो कभी बरसात में या भूस्खलन के समय लुढ़क कर गंगा में पहुँचने को तैयार लग रही थी। इसी तरह के रास्ते पर हम दोनों तथा वह लड़का धीरे-धीरे बढ़े चले जा रहे थे, आगे-आगे मैं था। एक जगह ऐसी आयी जहाँ लगभग आठ फुट की दूरी तक का वह रास्ता टूट कर गंगा में गिर गया था। ऊपर से नीचे तक ढलकान ही ढलकान था। शायद ऊपर से कोई शिला लुढ़की होगी जो दो तीन फुट के चौड़े रास्ते को भी तोड़ती हुयी अपने साथ गंगा में ले गई थी। उस जगह को देखकर एक बार तो लगा कि इतनी दूर आकर भी सारा श्रम व्यर्थ ही गया क्योंकि आगे बढ़ने की कोई सूरत नजर नहीं आ रही थी। मैंने उस ढलकान में पैर जमाने के लिए थोड़ा सा अन्दाजा लगाने की गर्ज से उस बालू को जरा सा कुरेदा तो मैं स्वयँ बड़े आश्चर्य में पड़ गया क्योंकि मेरे जरा सा उस बालू की सी रेत को कुरेदने पर ऊपर से इतनी मिट्टी खिसकने लगी कि मेरे तो प्राण ही सूख गये कि कहाँ मधु मक्खियों के छत्ते पर हाथ दे डाला। वहाँ धुर नीचे से और ऊपर जाने कहाँ तक जिस प्रकार बजरी का ढेर होता है उसी प्रकार की यहाँ स्थिति थी हमने सोचा कहीं ऐसा न हो कि ऊपर कोई शिला खण्ड इस समय

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहीं जरा सी अटकी हो और हमारे इस प्रकार मिट्टी हटाने से वह नीचे आ जाये और हमें भी अपने साथ नीचे ले जाय। दूसरी पार जाना हमें अवश्य ही जरूरी था क्योंकि अब शाम हो चली थी वापिस लौटने का समय भी नहीं था। क्योंकि रात्रि होते ही अन्धकार के कारण इस रास्ते पर चलना कठिन क्या असम्भव ही था। वैसे भी मैदान की अपेक्षा यहाँ अंधेरा जल्दी ही होने वाला था। मैंने मन में सोचा कि यह हटा हुआ रास्ता केवल सात आठ फुट ही तो हैं उसके बाद तो पैर टिकाने को जगह है ही मेरी लम्बाई भी अच्छी है यदि अपनी लकड़ी के सहारे से मैं अपना एक पैर भी किसी तरह से बीच में रख लूँ तो दूसरा पैर निश्चित रूप से दूसरी तरफ किनारे पर ही होगा। बेकार में समय को नष्ट करने से कुछ होगा नहीं जो कुछ होना है वह तो रुकेगा नहीं लेकिन हिम्मत भी क्यों छोड़नी। मन में गंगा मैया का स्मरण किया और मैंने एक छलाँग अपनी लकड़ी के साथ लगाई लेकिन मेरा वह पैर उस बालू रेत में स्थिर न रह सका। लकड़ी भी कहीं कोई सहारा नहीं दे पायी मैं कोई डेढ़ फुट नीचे खिसक गया तभी शायद विद्युत की गति से भी तेज दूसरा पैर आगे टिकाने के लिए बढ़ाया लेकिन वह भी जैसे बिना आधार के ही रहा। उसके उपरान्त मेरा पहला पैर दूसरे किनारे पर कब और किस तरह पहुँच गया मैं उसकी गति को अपनी याददास्त में नहीं रख सका। **उस तीसरे कदम को रखते न रखते मैं किसी ओर दुनियाँ में पहुँच गया था। मेरा सारा का सारा शरीर एक प्रकार से सुन्न रह गया था, आँखों के सामने अंधेरा उजाला सा मिश्रित था। किसी प्रकार की आवाज सुनने की तो वहाँ कोई संभावना ही नहीं थी उस समय साँस की तो क्या हृदय की धड़कन का भी पता नहीं था। शरीर का भारीपन भी ऐसा नहीं था और ऐसा लगा कि दूसरे पैर के फिसलने के बाद इस तीन चरणों की यात्रा का आखिरी चरण मैंने उड़कर ही तय किया था।** दूसरी तरफ पहुँचने के बाद तथा संयत होने पर ही मुझे सब दुनियाँदारी याद आयी। सबसे पहले अपनी साँस जो धौंकनी तरह चल रहीं थी धड़कन जो बहुत तेज थी, शरीर जो इतनी गजब की ठन्ड में भी पसीने से नहा रहा था। तब थोड़ी देर बाद सामने दूसरी तरफ पाराशर जी और वह लड़का दिखाई दिया। दो तीन मिनट तक मैं उनको देखता रहा और वे मुझे। इस घटना ने कितनी जानकारी दी मेरे मांस्तष्क के लिए। शरीर पर विपदा पड़ने के समय और स्थिति समान्य होने के बाद क्या परिस्थितियाँ गुजरती हैं? ये बातें शायद वर्षों के अन्तराल के बाद भी स्मृति में बिल्कुल ताजा बनी रहती हैं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्योंकि इस प्रकार के अनुभव जिन्दगी में किये गये अनुभवों से बिलकुल अनूठे और महत्वपूर्ण होते हैं। मेरा मस्तिष्क जो कि दूसरे कदम तक साथ था लेकिन तीसरे कदम पर फेल हो गया था और उसने यह मान लिया था कि यह शरीर तो गया बस उसी समय उस असफल मस्तिष्क के पास से सारे अधिकार छिन गये। प्राण फौरन इड़ा पिंघला में से निकले और दौड़ पड़े सुषमणा की ओर।

प्राणों के इड़ा पिंघला में से निकलते समय हमेशा एक विशेष प्रकार की सन्नाहट होती हैं जो शुरू में घबराहट पैदा करती है और चूंकि हम इड़ा पिंघला में नहीं होते इसलिए हमारी आँखे ठीक से देख भी नहीं सकती। हमारा मस्तिष्क पहले जैसा विचारशील इस अवस्था में रह नहीं सकता। **अब प्रश्न उठता है उस गौमुख के रास्ते में जब वह घटना घटी तब यदि यह मान भी लिया जाये कि प्राण इड़ा पिंघला से निकल गये होंगे। ऐसा बहुधा डर के कारण हो ही जाता है। बहुतों की तो हृदय गति भी रूक जाती है फिर बिना किसी प्रक्रिया के अपनाये यह शंका यहाँ उठती है कि वे सुषमणा नाड़ी में क्योंकर चले गये।** इस बात को बड़े गौर से आप ऐसे समझें।

इसी शंकावश इस घटना से पूर्व की स्थिति विस्तार पूर्वक मैंने यहां लिखी है जिस कारण से आप इसे अच्छी तरह से समझ सकेंगे क्योंकि बिना उन परिस्थितियों को अपने समक्ष रखें इस भावनात्मक पहलू को आप कैसे समझ सकेगें।

इसमें पहली बात तो आप इसे ख्याल में ले आयें कि इस यात्रा के प्रारम्भ में दो घन्टे चलने पश्चात शरीर के थकान की चिन्ता करते हुए भी मेरी प्रगाढ़ आकांक्षा रहीं थी कि चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये किसी तरह भी हमें आगे चलना ही चाहिये अगर पाराशर जी नहीं चलते तो मेरा जाना भी संभव नहीं था इसीलिए ही मैंने उस समय अपने निजी संसार की व्याख्या बदलदी थी। दूसरी बात थी समर्पण यानि समुत्व भाव सहित अर्पण। हमने जब आगे की यात्रा विश्राम लेने के पश्चात दोबारा से शुरू की थी तब इस धारणा के साथ शुरू की थी कि अब हम जीवित बचें या मर जायें। इसकी कोई चिन्ता नहीं रखेंगें तथा जहां हमने अपना जीवन ही दांव पर लगा दिया था। उस परमात्मा के प्रति तो अब हमारी श्रद्धा में कमी रहने का सवाल ही कहां बचता था ?

तीसरी बात थी सतत होश। हम निरन्तर चैतन्य होकर परमात्मा के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिए समर्पण भाव से परमात्मा की आकाक्षा के लिए परमात्मा के कार्य को ही पूर्ण करने के लिए ही तो जा रहे थे जहां हमारे मन में इस प्रकार की भक्ति की गंगा बह रही हो वहां आप क्या सोचते हैं, उस व्यक्ति की इच्छा शक्ति यूं ही अपने प्राण गवां बैठेगी। इस बात को और खुलासा करने के लिए मैं इसे इस तरह से भी आपके समक्ष रख रहा हूँ।

जब तक हमें उस परमात्मा के प्रति या अपने प्रति जरा सा भी होश है, यह होश ही हमें अपनी मृत्यु के विपरीत हमारे प्राणों को स्थिर रखने की कोशिश करता है। यही कारण है कि यदि किसी समय हमारा मस्तिष्क असफल हो जाए तो हमारी चेतना जो कि होश के द्वारा जाग्रत है हमारे मस्तिष्क के फेल हो जाने के पश्चात् भी जीवित रहने के दूसरे रास्ते को आजमाने से नहीं चूकती। लेकिन ऐसा केवल तब ही हो सकता है जब पूर्व में उसके विचारों में पूर्ण रूपेण बिना किसी शंका के उस अज्ञात के प्रति समर्पण भाव हो, नहीं तो बिना समर्पण भाव के आप अपनी बुद्धि के स्तर पर ही रह जावेंगे। चेतना के स्तर की जागृति आपमें नहीं हो सकेगी और जब आप अभी स्वयं ही अधूरे हैं तो आप पूर्णता को प्राप्त किए बिना ही मृत्यु को प्राप्त हो ही जावेंगे।

इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं है क्योंकि मस्तिष्क की अनुपस्थिति में कौन आपके प्राणों को सुषमणा में जाने के लिए कहे या वह घटना कैसे घटे और जब आपने अपने प्राणों को भय के आघात के द्वारा भवन के एक कमरे में से तो निकलवा दिया और दूसरा कोई अन्य कमरा आपने खोल नहीं रखा है तो बेचारे प्राण घर से बाहर ही तो निकल जावेंगे और प्राण एक बार यदि इन तीनों नाड़ियों के सम्पर्क से बाहर निकल जायें तो ध्यान रखना फिर इनका वापिस लौटना सम्भव नहीं होता। क्योंकि फिर वह परम निर्वात टूट ही तो जाता है।

भक्ति मार्ग से साधना प्रारम्भ करते समय सर्व प्रथम हमें समर्पण का महत्व सीखना होता है अन्यथा भक्ति तो क्या उसकी परछायीं में भी हम नहीं पहुँच पायेंगे। किसी ने बहुत ही सोच समझकर और अच्छी तरह जानकर ही लिखा है।

"गर कुछ मर्तवा चाहे, मिटा दे अपनी हस्ती को।

कि दाना खाक में मिलकर गुले गुलजार होता है।।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जब तक हम सामान्य अवस्था में होते हैं तब तक हम बीज स्वरूप होते हैं। अगर हमें अपने बीज में से अंकुर निकालने हैं तो हमें अपने बीज की मृत्यु तो सहन करनी ही होगी क्योंकि भला बीज के अपनी अवस्था में ज्यों की त्यों बने हुए भी कहीं किसी बीज में से अंकुर निकलते हैं यदि हमें सुषमणा का अनुभव लेना है तो हमें इड़ा पिंघला के स्थूल स्वरूप में से मिटने को तैयार रहना ही होगा। इसमें यह शर्त साथ नहीं लग सकती कि अंकुर फूटने की गारण्टी होनी ही चाहिए। यह निर्भर करता है तुम्हारे अपने स्वभाव पर कि आपका बीज, जो परिस्थितियाँ उपलब्ध हैं, उन्हें झेल सकता है या नहीं। जिन इड़ा पिंघला नाड़ियों के द्वारा जो आज तक हमने जाना है जिसमें हमारा प्रत्येक कर्म और मस्तिष्क शामिल है, इनके प्रति मोह तो हमें छोड़ना ही होगा। **भक्ति के मार्ग में समर्पण के भाव में अमोह की स्थिति आ जाती है तथा निरन्तर परमात्मा के प्रति लगी हुयी प्यास के द्वारा हममें चेतना के स्तर की जागृति भी हमें हो ही जाती है तथा तीसरी बात जब हम अपने मोह से परे हो गए तो हम फलाकाँक्षा के रोग से भी बच जाते हैं** और फिर ये तीनों चीजें हमें अपने आपको मिटाने में सहयोग करती है। सच्चा भक्त इन्हीं लक्षणों से ओत प्रोत रहता है, यही सच्चा मार्ग है लेकिन भक्ति का यह मार्ग गृहस्थ में रहकर करीब-करीब असम्भव सा हो जाता है क्योंकि घटना तो पता नहीं कब घटेगी लेकिन भाव तो आज ही बदल जाते हैं जैसे कल तो हमारी भावना समर्पण की थी लेकिन, हमारे वे भाव जो कल थे आज नहीं हैं। इसलिए यदि इसमें ज्ञान शामिल करके कोई धार्मिक प्रक्रिया जोड़ दी जाये तो रास्ता इतना दुरुह नहीं रह जाता या इतना लम्बा नहीं रहता।

यहाँ ध्यान रखना बिना भक्ति के तो हम आगे बढ़ ही नहीं सकते तो अन्दर भक्ति होना बहुत जरूरी है। भक्ति यानि तीनों चीजें समर्पण (मिटने को तैयार होना), जागृति (होशपूर्वक), और अभीप्सा (लौ, लगन अर्थात) होश पूर्वक सतत लौ जलाए हुए अपने आपको उसे समर्पित कर देना ही भक्ति है।

पीटर हारकौस भी दुर्घटना से पहले अपने कार्य के प्रति मनोयोग से समर्पित ही था तथा उसकी प्रत्येक कूंची मौत की सीढ़ी पर उसके अन्दर लगातार होश ही तो जगाती रही थी। वह कभी नीचे झाँक कर डरता नहीं था। वह बड़ा मस्तमौला टाइप का इन्सान था। वह भयभीत भी नहीं था, कहीं भयभीत इन्सान इतनी रिस्क उठाता है कि बिना उतरे ही नसैनी से पलटा खाये। कितने गजब की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मानसिक शक्ति जागृत किए था वह ? इसकी वजह से ही एक ही दुर्घटना में उसको अपने सूक्ष्म शरीर पर सिद्धता आ गयी क्योंकि लगातार तीन दिन तक बेहोशी के दौरान वह उन अनुभवों में रहा था। **यही कारण है उसको किसी भी निश्चित प्रक्रिया अपनाए बिना भी असीमित फल मिले।**

कहने का तात्पर्य यह है कि यदि हम अपने आप को भक्ति की राह पर चलाकर तैयार करना चाहते हैं तो भी कालान्तर में हो ही जावेगा। यदि शुरू में ज्ञान के क्रियात्मक मार्ग के द्वारा हम अपने आप को उस घटना के लिये तैयार करना चाहते हैं तो इस तरह से भी हो जाता है साथ ही इसमें समय भी अपेक्षाकृत कम लगता है लेकिन है बहुत कठिन। किन्हीं लोगों ने तो ज्ञानमार्ग को तलवारों की धार पर चलने का मार्ग बताया है लेकिन जो भी सच्चे साधक होते हैं वे कठिनाइयों की चिन्ता नहीं करते हैं।

सर्वप्रथम हमें अपने शरीर के भारीपन या मोटापे को संयमित करना होगा। दूसरी बात हमारे आहार में उन सब प्रकार के तत्वों पर कड़ा प्रतिबन्ध हमें लगाना होगा, जिनकी वजह से नरवस सिस्टम के तन्तुओं पर या हमारे मस्तिष्क में भारीपन आता है और जब ये दोनों बातें पूर्णतः संभल जावें तब ही आगे तीसरी सीढ़ी पर चढ़ने के अधिकारी आप हो पायेंगे अन्यथा तमाम साधना व्यर्थ में ही जायेगी। आपका भारीपन बड़े ही कष्टपूर्ण तरीके से साधना में बाधक बनेगा। जिसके कारण आप अपने मार्ग को नियमित नहीं रख सकेंगे।

इस कुण्डलिनी जागरण की साधना के प्रथम मार्ग में चौथी और आखिरी सीढ़ी है प्राणायाम। ये चारों साधन साधना के स्थूल रूप हैं। प्रथम हमें अपने शरीर को निरोग बनाकर शारीरिक भारीपन से छुटकारा पाना होता है जिसको कि हम यौगिक आसनों से तथा संयमित आहार के द्वारा ऐसा कर सकते हैं जिनका शरीर पहले से ही इकहरा है, उन्हें कोई खास परेशानी नहीं आयेगी। दूसरे हमें अपने मस्तिष्क पर से तमाम भारीपन या बोझ उतार देने होंगे। मस्तिष्क पर जो चीजें बोझ बनती हैं उनमें नशीली चीजें आती हैं। किसी भी प्रकार का नशा अन्ततः हमारे मस्तिष्क पर अलग से बोझ ही सिद्ध होता है चाहे उसमें शराब हो, गाँजा हो, अफीम हो या अन्य किसी भी तरह की नशीली दवायें हों क्योंकि नशा होता ही मस्तिष्क में है। इसका मतलब जब तक हमें नशा होता है तब तक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हमारा मस्तिष्क उस नशे के प्रभाव में रहता है, चाहे थोड़ा या ज्यादा। इसलिये ध्यान रखना कि प्राणायाम करने से पहले आपका मस्तिष्क बिल्कुल शान्त, निर्विघ्न और तनाव मुक्त होना चाहिये, ऐसा क्यों होना चाहिए ? इसको समझने के लिए हमें प्राणायाम की क्रिया और उसके होने वाले परिणामों को समझना होगा।

"प्राणायाम" शब्द के अर्थ हैं "प्राणों का आयाम"। इस क्रिया के द्वारा हम इस स्थूल शरीर के उन आयामों को खोलते हैं जो अभी तक हमारी जानकारी में या हमारे मस्तिष्क को मालूम नहीं थे और वास्तव में प्राणायाम के द्वारा ऐसा सम्भव होता भी है।

प्राणायाम को अपनाने के लिए हमें प्राणों का आधार जो हमारा स्वांस है उसके द्वारा ही हम प्राणायाम की गहराई में उतरते हैं। इस स्वांस के द्वारा ही हम अपने प्राणों को अपने शरीर में मन वांछित केन्द्र पर केन्द्रित करने को बाध्य करते हैं। ऊपरी तरह से देखने में यह बात कितनी बचकानी लगती है। लेकिन ऐसा सम्भव होता है, जब हम गहरे प्राणायाम करने का अभ्यास सीख जाते हैं। इसकी इतनी सारी प्रक्रियाएँ आपको पुस्तकों में अलग-अलग तरीके से मिल जावेंगी। लेकिन **उन सबका एक ही उद्देश्य है कि आप कितनी देर तक बिना स्वाँस लिए रह सकते हैं तथा छोड़ने के पश्चात या स्वांस लेने के पश्चात् आपकी घबराहट या मनोबल किस स्तर का होता है।** जब तक लगातार इसी तरह कठिनतम प्रक्रिया को अपनाते हुये सामान्य अवस्था में अपने मस्तिष्क को नहीं रख पाते तब तक आप इसके द्वारा वांछित फल प्राप्त नहीं कर सकते।

वांछित फल क्या है ? तथा उनको प्राप्त करने का उद्देश्य क्या है ? इसको समझे बगैर आप वहाँ तक पहुँचेंगे ही कैसे और क्यों पहुँचेंगे। अगर हम एक परिभाषा के रूप में प्राणायाम का उद्देश्य जाने तो, वह यह कि **हम अपने मस्तिष्क के निष्क्रिय पड़े कोषों को सक्रिय करने के लिए प्राणायाम करते हैं।**

लेकिन किस प्रकार तथा किस अवस्था में उनको हम सक्रिय कर लेते हैं। इस बात को ही हमें यहाँ समझना है। **मस्तिष्क के कोषों पर से इड़ा पिंघला के द्वारा हमारी प्राणों की शक्ति को अपनी चरम अवस्था में से गुजारना ही प्राणा-**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

याम का स्पष्ट उद्देश्य है। यह एक प्रकार से मस्तिष्क को स्थूल रूप से चैतन्य करने का रामबाण साधन है। जब पहले स्थूल रूप से हमारे मस्तिष्क को इस शक्ति को झेलने की क्षमता आ जाती है तब बाद में हम सूक्ष्म रूप में सुषमणा के द्वारा उस शक्ति को ले जाने की कोशिश करते हैं जिस क्रिया को हम कुण्डलिनी जागरण की क्रिया कहते हैं जब स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार से मस्तिष्क इस शक्ति के प्रवाह को झेल लेता है तब ही हमारा मस्तिष्क पूर्ण रूपेण चैतन्य हुआ जानना चाहिए इससे पहले तो भ्रम ही होगा।

हम मैडीकल साइंस के द्वारा यह भली-भाँति जानते हैं कि मनुष्य अपने मस्तिष्क की सम्पूर्ण क्षमता में से ६% और १०% की अन्दर की परिधि में ही मूर्ख से लेकर बुद्धिमान तक सभी मनुष्य आ जाते हैं। बाकी बचे हुए मस्तिष्क के ९०% कोष निष्क्रिय या सुप्त अवस्था में पड़े रहते हैं। हम यह भी जानते हैं कि इन निष्क्रिय कोषों में यदि विद्युत प्रवाहित की जावे तो इनको सक्रिय किया जा सकता है। जैसा कि पागलखानों में मरीज को बिजली के झटके लगाकर किया जाता है। लेकिन मस्तिष्क को बाहर से बिजली के झटके देकर सक्रिय करना निरापद नहीं है क्योंकि प्रत्येक मस्तिष्क की सहनशीलता अलग-अलग होती है जिसको नापने का साधन हमारे पास नहीं है। यही कारण है कि इस प्रक्रिया के द्वारा पागलखानों में मरीजों के ठीक होने का प्रतिशत बहुत ज्यादा सन्तोषजनक नहीं है। विद्युत प्रवाह के उपचार में आधे से कम रोगी ही ठीक होते हैं क्योंकि डाक्टरों को यह भी पता नहीं होता कि कौन व्यक्ति अपनी प्रकृति के हिसाब से ऋणात्मक है या धनात्मक और जब वे एक ही प्रकार से उन तमाम रोगियों में एक ही प्रकार की विद्युत का झटका उनके मस्तिष्क को देते हैं, जबकि सही और ज्यादा अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रत्येक मरीज का अलग से ही गणित करके उनके मस्तिष्क में विद्युत प्रवाहित करनी चाहिए। जब तक ऐसा नहीं होता, पागलखानों में मरीजों की संख्या बढ़ती ही जावेगी। क्योंकि जिनको गलत वोल्टेज का या गलत तरह का विद्युत झटका दिया जाएगा उनके निष्क्रिय कोष जो सुप्त थे, अब एल्टी या विपरीत विद्युत प्रवाहित होने के कारण से शरीर के काम के नहीं रहते इसलिए ऐसे मरीजों के ठीक होने की सम्भावना भी क्षीण हो जाती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राणायाम में हम बाहर किसी विद्युत का सहारा नहीं लेते बल्कि अपनी स्वयं की शक्ति, जो कि विद्युत की ही शक्ल में होती है, का उपयोग करते हैं। यहाँ पर सुविधा भी दोनों तरह की है ऋणात्मक भी और धनात्मक भी। हम अपने नित्य कर्मों में उसका अनुभव भी करते हैं। हमारे पास एक ही शक्ति है, लेकिन जब उसे हम प्रेम में इस्तेमाल करते हैं तो विद्युतीय प्रवाह का दूसरा ध्रुव होता है जबकि क्रोध में वह अपने आप इसके विपरीत ध्रुव की विद्युतीय प्रवाह में बदल जाती है। जब से क्वान्टा का सिद्धान्त रसायन विज्ञान के द्वारा इस संसार के समक्ष आया है तब से यह बदलाव मात्र कपोल कल्पित नहीं रह गया है क्योंकि पदार्थ का अणु, परमाणु, न्यूट्रान प्रोटोन और इलैक्ट्रान की खोज के आखिरी में जब क्वान्टा की जानकारी हमारे समक्ष में आती है तब उसका ध्रुव बदलता ही तो रहता है।

जिस प्रकार अनन्य कारणों से एक प्रवाह दोनों ध्रुवों को अपना लेता है, ठीक उसी प्रकार हमारी कुण्डलिनी शक्ति से जब बुद्धि को जिस प्रकार की शक्ति की अपेक्षा जहाँ होती है उतने ही परिमाण में उतने ही वोल्टेज की तथा उसी ध्रुव की विद्युत को हमारा नाड़ियों का जाल जो इस तमाम शरीर में वायरिंग का काम करता है चाहे गये स्थान पर पहुँचा देता है।

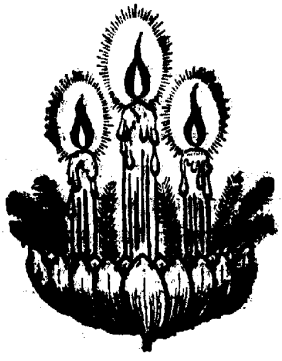

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १२

सात चक्र

मैं पहले भी बता चुका हूँ कि यह शक्ति हमारे शरीर में काम केन्द्र के पास ही हमारे शरीर में प्रथम कोष से बने निर्वात को भरे हुए रहती है। जिस प्रकार एक बड़े बिजली घर से सारे शहर में बिजली आवंटित करने के लिए अलग-अलग फीडर जगह-जगह पर स्थापित किये जाते हैं और प्रत्येक क्षेत्र की जरूरत के अनुरूप बिजलीघर से सीधे हाई वोल्टेज की विद्युत उन फीडरों को आपूर्ति की जाती है, ठीक उसी प्रकार से हमारे शरीर में भी कुण्डलिनी शक्ति को हमारे सम्पूर्ण शरीर में भली-भाँति प्रवाहित करने के लिए जगह-जगह उनकी जरूरत के अनुरूप फीडर स्थापित किये हुये हैं, जिन्हें हम आध्यात्म की भाषा में "चक्र" शब्द से जानते हैं। जो इस सम्पूर्ण शरीर में जगह-जगह स्थापित हैं। मैडीकल साइंस वाले इनको इस जगहों पर ढूँढते है कोई अवयव या यन्त्र अथवा कोई ट्रान्सफारमर तरह की चीज की कनल में। लेकिन वो उनको कैसे मिल सकती है। प्रथम बात तो यह है कि अभी उन्होंने नरवस सिस्टम पर केवल अटकल पच्ची ही जानी है, शरीर के विज्ञान में सबसे ज्यादा अगर किसी ने परेशान उनको किया है तो वह हमारे शरीर का तन्तु कोष या नरवस सिस्टम ही है, जिसके कारण हमारे शरीर में दिखाई देने वाली प्रत्येक हरकत क्रियात्मक स्वरूप से मस्तिष्क से मिले आदेशानुसार स्वचलित होती है। यह बड़ा जटिल मामला है क्योंकि इनके तन्तु इतने बारीक होते है जितकी वजह से अभी तक हमारे शरीर विज्ञानी इनके द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को ठीक से नहीं समझ पाये हैं।

अब मैं शरीर के इन सात चक्रों के बारे में आपको कुछ थोड़ा सा और बताना चाहता हूँ क्योंकि प्राणायाम करते समय इन स्थानों पर आपको थोड़ा-थोड़ा अवरोध पैदा होगा, क्योंकि आपने इससे पहले तो इनका उपयोग किया नहीं था इसलिए वैज्ञानिक रूप से इनकी जानकारी या शरीर में इनका स्थान हमें पता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रहना चाहिए जिसकी वजह से हम बिना वजह परेशान नहीं हों।

कुण्डलिनी क्षेत्र के ठीक ऊपर जो पहला चक्र है। उसे हम मूलाधार चक्र कहते हैं, कुण्डलिनी की शक्ति सबसे पहले इसके ही सम्पर्क में आती है। इसके द्वारा काम वासना के लिए कामकेन्द्र को जिस विशेष शक्ति की हमें आवश्यकता होती है वह हमें मिलती है उससे और ऊपर दूसरा चक्र पेडू के मध्य में होता है जो कि हमारे खाने को पचाने के लिए, मल को आँतों से आगे बढ़ाने के लिए तथा अपान वायु को बाहर निकालने के लिए जिस विशेष प्रकार की ताकत की जरूरत होती है इस दूसरे स्वाधिष्ठान नाम के चक्र द्वारा हमें प्राप्त होती है। तीसरा चक्र उससे और ऊपर हमारे पेट के मध्य हमारी नाभि के अन्दर होता है जिसका कार्य होता है हमारे स्वांस को नियमित बिना किसी बाधा के चलाये रखना, इस क्रिया के लिये जितनी शक्ति हमें चाहिए उसकी पूर्ति हमें इस मणिपूरक चक्र के द्वारा होती है। चौथा चक्र जिसे हम अनाहत चक्र कहते हैं, वह हमारे हृदय प्रदेश के पास होता है जिसके द्वारा हमें हृदय के लिए चाही गयी शक्ति की आपूर्ति होती है। पाँचवा विशुद्ध चक्र हमारे कंठ में होता है जो हमारी वाणी के लिये शक्ति की आपूर्ति करता है। छठवाँ चक्र जिसे हम आज्ञा चक्र कहते हैं जो कि इन सभी पर निगाह रखता है तथा इमरजैन्सी के दौरान अपने स्वयं के यहाँ से सभी को अतिरिक्त शक्ति प्रदान करता है इसके अलावा वह खासतौर से आँख, कान, नाक आदि को सक्रिय बनाये रखने के लिये कुण्डलिनी से मिली शक्ति को उपयोग में लेने के लिये भेजता रहता है। इससे और ऊपर मस्तिष्क में सातवाँ चक्र है जो कि "आज्ञा चक्र" से भी ज्यादा शक्तिशाली है, इसे सहस्त्रार चक्र कहते हैं यह कुण्डलिनी से मिली शक्ति को सम्पूर्ण मस्तिष्क के संचालन में लगाता है इसकी शक्ति के द्वारा ही सम्पूर्ण शरीर का नरवस सिस्टम संचालित होता है तथा अपने स्वयं मस्तिष्क के लिए भी उपयोग में व्यय हुयी शक्ति की भी इसी चक्र के द्वारा पूर्ति हो जाती है।

कुण्डलिनी शक्ति को जब हम इड़ा पिंघला के द्वारा स्थूल साधना में (प्राणायाम की अवस्था में) ऊपर ले जाते हैं तब स्वतः ही हमें इन सभी चक्रों के शरीर में स्थान की जानकारी मिल जाती है।

प्राणायाम के द्वारा जब हम अपनी स्वांस को अन्दर या बाहर (वैसे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बन्द कर रोकना ज्यादा सुविधाजनक होता है) रोक देते हैं और जैसे-जैसे समय बीतता है वैसे-वैसे हमारा दम घुटने लगता है। पहली मिनट तक तो कुछ खास पता नहीं चलता लेकिन एक मिनट से डेढ़ मिनट के अन्दर ही हमारा शरीर सब तरफ से प्राणवायु की माँग कर उठता है। डेढ़ से दो मिनट के भीतर हमारे शरीर के मूलाधार चक्र से लेकर सहस्त्रार तक के रास्ते पर किसी भी संभावित चक्र के स्थान पर विशेष दबाव, परेशानी अथवा फट पड़ने जैसी अवस्था अथवा ऐसी कोई भी अवस्था जो हमें भयंकर तीव्रता महसूस करावे, महसूस होने लगती है। अगर आपके मूत्राशय में मूत्र भरा होगा तब मूलाधार चक्र पर परेशानी होगी। मल तथा गैस के पेट में पड़े रहने के कारण स्वाधिष्ठान चक्र पर, पेट के अन्य विकारों के कारण नाभि के ऊपर स्थित मणिपूरक चक्र पर, हमारे स्वांस लेने की प्रक्रिया में कहीं गड़बड़ी होने के कारण हृदय प्रदेश के आस-पास क्षेत्र में अनाहत चक्र पर, बाद में जब वह दबाव गले या कण्ठ के क्षेत्र में विशुद्ध चक्र पर मालुम पड़ने लगे तो समझना चाहिए कि कहीं गले की स्वांस या भोजन नली में खराबी है। यदि हमारे स्वर दोनों ठीक से नहीं चल रहे हैं तो हमारे आज्ञा चक्र पर भारी दबाव महसूस किया जा सकता है। यदि खोपड़ी के ऊपरी हिस्से के सहस्त्रार चक्र पर किसी कठिनाई का सामना करना पड़े तो समझना चाहिए, किसी नशे विशेष का प्रभाव है या हमारा मस्तिष्क किसी वजह से विशेष थका हुआ है, समझना चाहिये।

अगर हम उन सभी परेशानियों से मुक्त हो जायें जिन कारणों से चक्रों के स्थान पर परेशानियाँ पैदा होती हैं तो यह नहीं समझना चाहिये कि बाद में वहाँ वे परेशानियाँ उठेंगी ही नहीं। उठेंगी तो अवश्य लेकिन बाद में इनको आप सहन कर सकेंगे जबकि शरीर को बिना शुद्ध किये ये परेशानियाँ असहनशील रहती हैं जिनके कारण हमें प्राणायाम को बीच में ही खोल देना पड़ता है।

इड़ा पिंगला की शक्ति अपनी चरम सीमा के साथ जब मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपूरक चक्रों से प्रवाहित होती है तब इन चक्रों से सम्बन्धित क्षेत्र हमारे शरीर में पत्थर सदृश्य कड़ा हो जाता है। कभी-कभी तो ऐसा भी लगने लगता है मानो हमारे इस तमाम शरीर को इसी नाभि से ही शक्ति पहुँच रही है जिस समय यह शक्ति अनाहत चक्र पर होती है तब हमें ऐसा आभास होता है कि हृदय नहीं धड़क रहा है, बल्कि हमारा सारा का सारा शरीर ही धड़क रहा है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

या प्रत्येक धड़कन के साथ दिल की बजाय हम स्वयं ही धड़क रहे हैं। जिस समय विशुद्ध पर यह शक्ति आती है तब हमें ऐसा लगता है कि हमने जो स्वांस नाक द्वारा बन्द कर रखी है, उसकी हमारे फेफड़े हमारी छाती की दीवाल ले रहे हैं। आज्ञा चक्र पर जब यह शक्ति आती है तब हमें अपनी बन्द आँखों के अन्दर तेज प्रकाश के कण चलते हुए आतिशबाजी की तरह दिखाई देने लगते हैं। जिस समय हम सहस्त्रार पर उसे महसूस करते हैं उस समय लगता है हमारे सम्पूर्ण प्राण हमारी खोपड़ी पर आकर टक्कर मार रहे हैं। ये हमारी खोपड़ी को तोड़ ही देंगे। हमारी खोपड़ी का ऊपर का हिस्सा एक तरह से सुन्न हो जाता है। हमारे मस्तिष्क के कोषों पर बड़ा भारी तनाव उसी समय पड़ता है और यही समय हमारे प्राणायाम की पूर्णता को प्राप्त होने का है।

इस प्रकार के अनुभव हमें दो मिनट से लेकर तीन साढ़े तीन मिनट तक स्वांस रोके रखने के पश्चात ही होते हैं। अगर हम किन्हीं कारणों वश अपने आपको नहीं संभाल पाते हैं अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति के बावजूद तो हमें यही समझना चाहिये कि कहीं न कहीं हमारे स्थूल शरीर में खराबी है जो कि इस समय बाधा बन रही है। इसलिए पहले हमें प्रत्येक शारीरिक बाधा पर विशेष ध्यान रखना होगा। जिन दिनों मैं स्वयं इस कठिनतम प्राणायाम के अभ्यास पर था, मुझे खूब याद है सुबह तीन-तीन बार शौच जाता था फिर भी लगता था कि अभी पेट में भारीपन है या थोड़ी बहुत अपान वायु पेट में मौजूद है। जरा सा भी मूत्र ब्लैडर में रह जाता तो वह भी भारीपन महसूस करा देता था जिसकी वजह से बीच में ही आसन छोड़कर उठना पड़ता था जो कि बड़ी भारी परेशानी का कारण अपने मन में लगता था।

प्राणायाम करते समय दो परेशानी इतनी जबरदस्त तीखी झुंझलाहट पैदा करने वाली अथवा गुस्सा दिलाने वाली होती हैं उनमें एक तो है शारीरिक बाधा तथा दूसरी साधना स्थल के आस-पास किसी प्रकार का शोर, क्योंकि उस समय आप तो अपने प्राणों से खेल रहे होते हैं और बड़ी मुश्किल से ऐसी हिम्मत अपने अन्दर जगा पाते हैं यदि इस अवस्था में हमारे समक्ष कोई अवरोध आता तो बुरा लगेगा ही, बहुत से लोग तो इस शोर की वजह से कानों में रूई लगाकर बैठते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ लोग कई प्रकार की मुद्रायें लगाकर बैठते हैं इस कारण से कि प्राण ऊपर चढ़ने की बजाय कहीं मल, मूत्र, आँख, कान, नाक व मुँह के रास्ते ही शरीर के बाहर न निकल जावे लेकिन यह कोरा भ्रम ही है क्योंकि जब तक हम कर्त्ता के रूप में वहाँ मौजूद हैं तब तक प्राण किस प्रकार से बाहर निकल सकते हैं क्योंकि कर्त्ता बिना प्राण के नहीं रह सकता और जब तक कर्त्ता सवार है प्राणों के ऊपर तब तक इस प्रकार की कोई सम्भावना नहीं हो सकती, और जब इसके विपरीत यदि ऐसी स्थिति बनने लगेगी जिसमें प्राण कर्त्ता को दबायेंगे, उससे पहले तो कर्त्ता स्वयं जो वह प्रक्रिया अपने द्वारा क्रियान्वित होने दे रहा है अपनी क्रिया को छोड़ देगा और फिर भी यदि प्राणों को निकलना ही होगा तो क्या वे प्राण इन द्वारों को बन्द कर देने मात्र से उस शरीर के अन्दर रुक सकते हैं ? इसलिये यह भ्रम ही है कि मूल बन्ध या उड्डीयन बन्ध लगाकर ही बैठना चाहिये अथवा खेचरी मुद्रा लगाकर ही बैठना चाहिये नहीं तो मृत्यु हो जावेगी।

प्राणायाम की अन्तिम अवस्था में तो ये तमाम क्रियायें या मुद्रायें बन्धन ही मालूम पड़ते हैं लेकिन प्राणायाम की प्रथम अवस्था में साधक को इनसे हौसला बना रहता है। इसके अलावा इन बन्धों व मुद्राओं के द्वारा हम अपने मन एवं शरीर को स्थिर रखने में सफल होते हैं जो कि हमारे लिए साधना के समय बड़े भारी लाभ का कारण बनता है।

जहाँ तक प्राणायाम के द्वारा हमें हमारे शरीर को हानि पहुँचने का प्रश्न है, हमें प्राणायाम से हानि केवल उसी अवस्था में हो सकती है, जब हमारा शरीर इस साधना के समय बाधा बनता है लेकिन तब भी हानि हमें मृत्यु के रूप में नहीं बल्कि ज्यादातर तो हमारे मस्तिष्क के कोषों को तथा उससे सम्बन्धित नरवस सिस्टम को उठानी पड़ सकती है जैसे विद्युत के लिये फैले हुए तारों पर उनकी क्षमता से ज्यादा विद्युत प्रवाहित कर दी जावे तो उन तारों के गर्म होकर जल जाने का खतरा पैदा हो जाता है। इस असामान्य अवस्था में यदि किन्हीं तारों में विद्युत के प्रवाह के रास्ते में अवरोध और आ जाये तो फिर शार्ट सर्किट को टालना करीब-करीब कठिन ही होता है। इसलिए साधना को धैर्यपूर्वक एवं धीरे-धीरे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सीढ़ी दर सीढ़ी अपनी क्षमतानुसार बढ़ाना चाहिए।

हमारे शरीर में भी फैले हुये नाड़ियों के जाल को, जिनके द्वारा कुण्डलिनी शक्ति प्रवाहित होती रहती है, सुरक्षित बनाये रखने के लिये बार-बार हमारे आध्यात्म में हल्के और सात्विक खाने पर जोर दिया गया है और मैं भी इसी बात को महत्वपूर्ण मानकर अलग-अलग तरीकों से बार-बार यही बात लिखने की कोशिश कर रहा हूँ।

योग में गाय का महत्व उसके शरीर से कम बल्कि उसके दूध से ज्यादा है जिसमें तमाम गुणों के साथ भारीपन का अवगुण नहीं है। शाकाहार का महत्व भी उसके हल्केपन की वजह से ज्यादा है। नशों को वर्जित करने का कारण भी उनके द्वारा हमारे मस्तिष्क पर पड़ने वाला अतिरिक्त भार ही है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १३

कुण्डलिनी जागरण ही समाधि

कुण्डलिनी शक्ति के जागरण के प्रथम भाग में प्राणायाम की अवस्था में हम अपने शरीर को साधते हैं। शरीर को साधकर ही हम मन को साधने के पात्र होते हैं, जो कि कुण्डलिनी जागरण की साधना का दूसरा भाग है। **प्रथम भाग में शरीर को साधकर इड़ा पिंघला के द्वारा कुण्डलिनी शक्ति को सभी चक्रों में पहुँचाकर अपने शरीर को हर तरह की परिस्थितियों को सहन करने लायक बनाते हैं। जब इस अवस्था को नित्य प्रति दिन के अभ्यास के द्वारा अपने सरल अभ्यास में ले आते हैं। तब हम साधना के दूसरे चरण में उतरने लायक हो जाते हैं।** दूसरा चरण चूँकि शरीर के स्तर का नहीं बल्कि मन के स्तर का है, इसलिए इतना कठिन भी नहीं है लेकिन उसमें हौंसले की पहले से ज्यादा जरूरत होती है। इसको इस तरह से समझें शरीर को साधकर हम शरीर पर विजय प्राप्त करते हैं मन को साधकर हम मन पर विजय प्राप्त करते हैं। अभी तक साधना के प्रथम चरण में हमने कर्मेन्द्रियों पर विजय पाई हैं जो कि इन्द्रियों का स्थूल स्वरूप है। अब हम मन पर विजय प्राप्त करने के पश्चात अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर विजय प्राप्त करेंगे। **इसों इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करते ही हम जितेन्द्रिय या इन्द्रियातीत हो जाते हैं।**

साधना के दोनों भागों में समान रूप से एक बात ऐसी है, जो कि बहुत ही महत्वपूर्ण है जिसके ठीक हुए बिना न तो हम गहरे प्राणायाम में उतर सकते हैं, जो कि साधना का प्रथम भाग है और न ही साधना के दूसरे भाग में चल सकते हैं जिसका कि वर्णन में आगे करने वाला हूँ। इसलिए दूसरे भाग को आपके समक्ष रखने से पहले इस बात पर भी गौर कर लेना अति आवश्यक है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हम कभी कभी अपने आपको एक दम से उत्साही तथा हल्का फुल्का महसूस करने लग जाते हैं तब हमें यह भी लगता है कि उस समय हमारा मन भी एक दम शान्त तथा प्रफुल्ल हो जाता हैं ऐसे समय में यदि कोई कवि है तो वह अच्छी कविताओं की रचना कर लेता है कोई चित्रकार है तो उसके हाथ की तूलिकायें निर्बाध रूप से चित्र-चित्रित करती ही जाती है। भले ही कोई मेहनतकश मजदूर है उसे उस समय थकान परेशान नहीं करती है। इस तरह का अनुभव करीब करीब सभी को अक्सर होता रहता है। इसके विपरीत कभी हम शरीर से बिलकुल स्वस्थ होते हैं लेकिन दिमाग को खूब धक्का देने के बावजूद भी जिस गति से हम उसे चलाना चाहते हैं चल नहीं पाता है। इसके पीछे भी हमारे शरीर में एक गहन कारण है, वह हैं हमारे नाक के अन्दर चलते हुए स्वर। जब नाक के दोनों स्वर बिलकुल बिना अवरोध के साफ चलते हैं, केवल तब ही हम अपने आपको प्रफुल्ल, खिला हुआ फूल की तरह हल्का पाते हैं किसी भी पूर्व भाव के दबाव से सर्वथा मुक्त। अगर हमारा कोई स्वर बन्द है तो ध्यान रखना, इस प्रकार की अवस्था में कोई भी कार्य तन्मयता से नहीं किया जा सकता है। इसलिए प्राणायाम पर बैठने से पूर्व हमें अपने स्वरों को अवश्य ख्याल में ले लेना चाहिये।

अपने फेफड़ों के द्वारा तेज स्वांस प्रस्वांस लेकर हम एक क्रिया करते हैं। आध्यात्म में इस क्रिया को भस्त्रिका के नाम से जानते हैं। इस क्रिया के बाद पहला फायदा यह होता है कि हम अपने प्राणायाम में ज्यादा देर तक स्वांस को रोके रख सकते हैं और दूसरा फायदा यह होता हैं कि हमारे दोनों स्वर चालू हो जाते हैं।

स्वरों को चालू करने के लिए दूसरी प्रक्रिया बड़ी आसान है जिसमें हम खुशबूदार धूप, अगरबत्तियों का प्रयोग करते हैं। इनकी सुगन्धी जब हमारे नसिका पुटों में जाती है तो स्वतः ही हमारे दोनों स्वर चल जाते हैं। इन दोनों प्रक्रियाओं के अलावा एक और तरीका है जिसमें हम अपने मन में धारणा करते हैं, प्रार्थना करते हैं, श्रद्धा से या स्वयं अपने आप पर सम्मोहन फेंकते हैं कि हमारी साधना के समय हमारा शरीर किसी भी प्रकार की बाधा न बने इस प्रकार अपनी मान-सिक शक्ति के द्वारा भी अपने स्वरों को हम चालू कर सकते हैं। हमें नित्य प्रतिदिन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन तीनों ही प्रक्रियाओं को शुरू में अपनाना चाहिए।

उस प्रथम भाग की तपश्चर्या के द्वारा हमारे शरीर की सहनशीलता बढ़ जाती है जिसकी वजह से हमारे शरीर के अवयव बिलकुल शुद्ध अवस्था में आ जाते हैं। उसमें चाहे मस्तिष्क हो, हृदय या फेंफड़े हों आते हैं। जब हमारा स्थूल शरीर उस ऊँचाई तक प्राणों के उत्पीड़न को सहन करने का आदी हो जाता है तब वह इसके परिणाम स्वरूप अपनी चरम क्षमता तक सक्रिय भी हो जाता है। यही कारण है कि प्राणायाम करने वाला व्यक्ति विलक्षण बुद्धि वाला तथा स्वस्थ दमकते ललाट का स्वामी हो ही जाता है।

हम दिन-रात, सुबह-शाम, चौबीसों घण्टे प्रत्येक चार पांच सैकिण्ड के पश्चात् प्राण वायु को स्वांस के द्वारा ग्रहण करते और निकालते रहते हैं। हमारे शरीर का कितना भी जरूरी कार्य भले ही रुक जाये लेकिन यह कार्य प्रणाली सतत अपने आप चलती ही रहती है यह एक अकाट्य सत्य है। हम सोते हुये या जागते हुये बीस हजार से पच्चीस हजार तक स्वांस एक दिन में लेते हैं लेकिन यदि हम अपने मस्तिष्क को इसके ख्याल में लगायें तो हम पाते हैं कि इन बीस हजार स्वांसों में से दो सौ स्वांस भी ऐसी नहीं है जिस पर हमने प्राणवायु के फेंफड़ों में प्रवेश होने से और फिर बाहर निकलने की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर होश पूर्वक नजर रखी हो। एक तरीके से इतना बड़ा काम हमारे शरीर में हमारे उपस्थित रहते हुये हर समय होता रहता है लेकिन हमें हमारी बेहोशी के कारण उसका पता नहीं चलता है। इसका कारण सिर्फ इतना है कि अभी तक हम अपने प्रति भी होश में नहीं है और अपने प्रति होश जगाने का तरीका यदि हमारे पास कोई है तो वह यह है कि हम अपने शरीर की प्रत्येक धड़कन तथा प्रत्येक स्वांस पर ध्यान पूर्वक, होश-पूर्वक एवं जागृति के साथ चिन्तित हो जायें। इतनी परवाह किये बगैर हमारी बेहोशी टूटनी इतनी आसान कहाँ है? यदि हमें अपना होश जगाना है तो ध्यान रखना—हमें चैतन्यता का अलख अपने अन्दर जगाना ही होगा।

जब हम अपनी अन्दर और बाहर आती जाती हुई स्वांस पर अपना ध्यान ले आते हैं तब एक अजीब सा परिवर्तन उसकी गति में आ जाता है। अगर हमने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निष्ठापूर्वक बहुत ही गहन रुप से उस पर अपना ध्यान जारी रखा अथवा उस पर ध्यान रखते हुए हमें नींद नहीं आयी तो एक समय ऐसा भी आयेगा, **जब हमें स्वाँस लेने की आवश्यकता भी नहीं रहेगी और इसकी गति अपने आप रुक जायेगी।**

इस अवस्था में हमने अपना स्वाँस रोका नहीं था बल्कि वह स्वतः ही रुक गया था। प्राणायाम में तो हम स्वाँस को रोकते हैं जो कि इस साधना का पहला और स्थूल भाग था लेकिन इस दूसरे सूक्ष्म भाग की क्रियाओं में हमें स्वयं को कुछ स्थूल रुप से नहीं करना पड़ता है हमें तो बस पूर्ण रुपेण होश पूर्वक चाक चौबन्द होकर दृष्टा बने रहना पड़ता है।

इस क्रिया को क्रियान्वित करने से पहले हमें कुछ बातों को अपनी जानकारी में आवश्यक रुप से ले लेना चाहिये। जो निम्न प्रकार हैं:—

१—ऐसे स्थान पर बैठें जहाँ ध्यान की इस क्रिया में बैठे बैठे आप यदि लुढ़क जायें तो शरीर को कोई चोट न पहुँचे।

२—ऐसे आसन पर बैठें जिस पर आप काफी देर तक स्थिर बैठे रह सकें। जिसको साधना के मध्य में बदलना नहीं पड़े।

३—चूंकि इसमें घन्टों लगते हैं, इसलिये ऐसा समय अपनी साधना का चुनें जिसके बीच आपको आपके व्यापार, नौकरी, गृहस्थी के काम धन्धे अथवा निद्रा से आने वाली झपकियाँ परेशान न करें।

४—स्वच्छ, साफ, हवादार, न गर्म, न ठण्डा, शोर गुल से रहित बन्द स्थान होना चाहिये।

५—केवल ऐसी अगरबत्तियाँ ही लें जिनकी खुशबू आपको पसन्द आती हो।

६—आँखें बन्द रखनी चाहिये।

इन बातों के साथ साथ अन्तिम और जो गहरी बात है वह भी आप हमेशा ख्याल रखें कि **इस साधना को करते समय आप अपनी साधना की पूर्णता को आज ही प्राप्त करलेंगे,**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह विचार अपने मन से निकाल देना चाहिए। बल्कि जब परमात्मा चाहेगा केवल तब ही वह इस क्रिया को करायेगा। हमारी अपनी क्षमता के अनुसार किसी को जल्दी और किसी को बहुत वर्षों बाद। क्योंकि शुरू के दिनों में तो हम पाँच मिनट भी लगातार अपने स्वाँस की गति पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते हैं क्योंकि यह कार्य हमने पहले तो किया नहीं था इसके कारण हमारे मस्तिष्क की सम्पूर्ण क्षमता शुरू में इतनी सी ही देर में चुक जाती है और इसका पता भी हमें जब चलता है जब घण्टे, आधे घण्टे के बाद हमारी नींद टूटती है या हमारा ध्यान जो स्वांस पर लगा था, वहां से हट कर अन्य कहीं पर से जाकर वापिस लौटता है, शुरू में आपको इस साधना में अपने सिर के अगले हिस्से में भारीपन महसूस हो सकता है या अन्य किसी प्रकार की बाधा खड़ी हो सकती है। लेकिन धीरे धीरे व्यक्ति की जैसे जैसे क्षमता बढ़ती चली जाती है वैसे वैसे ही वह इन बाधाओं से मुक्त हो जाता है।

प्राणायाम में हम अपने स्वाँस को जबरदस्ती रोककर रखते है। चूँकि वह एक स्थूल क्रिया है इसलिए उसमें हमारा ध्यान स्वतः ही लगा रहता है लेकिन यहाँ कोई स्वाँस थोड़े ही रोकना है, यहाँ तो बस अपने मन को रोकना हैं जो कि एक अर्न्तक्रिया है इसलिए इसे हमारे आध्यात्म के अन्दर ध्यान के नाम से जाना जाता है। हालांकि बहुत गहरे में हैं यह प्राणायाम ही, क्योंकि स्वाँस को आधार बनाकर किया गया कोई भी कार्य प्राणायाम ही कहलाता है। इसलिये ही स्वामी ओमानन्द तीर्थ ने अपने ग्रन्थ पातंजलि योग प्रदीप में इसे चतुर्थ प्राणायाम की पाँचवीं विधि जो कि उनके अनुसार "प्राणायाम की अन्तिम विधि" है का नाम दिया है।

रजनीश इसी प्रक्रिया को, ध्यान की क्रिया-'विपस्सना' के नाम से अपने शिष्यों को बता रहे हैं क्योंकि इस क्रिया में जब आता जाता स्वांस ही नहीं रहता तब वह ध्यान ही तो हो जाता है और जब साधक अपने अभ्यास के द्वारा अपना इतना होश जगा लेता है तब उसके स्वाँसे के रुकने के बाद उसके प्राण इड़ा पिंघला में चलते चलते अपने केन्द्र पर ही रुक जाते हैं या अपने केन्द्र पर उतर आते हैं। जिसके कारण से उसका सारा का सारा शरीर मृतवत् भले ही हो जावे लेकिन वह स्वयं चैतन्य के द्वार पर आ जाता है। यहां यह भी जान लें, इस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकार की स्थिति, लगातार जपने से पैदा हुई अवधा की स्थिति के बाद भी यही स्थिति आ सकती है। मतलब यह कि होश पूर्वक कोई भी आन्तरिक मानसिक क्रिया जिसमें मस्तिष्क थक कर असफल हो जाता है इस क्रिया को घटने का अवसर बन सकती है लेकिन किसी भी क्रिया को अपने लिए निश्चित् करते समय आपको अपनी क्षमता का ख्याल अवश्य कर लेना चाहिए।

मैं अपने अनुभव से केवल इतना ही कह सकता हूँ कि आते जाते स्वाँस पर ध्यान देकर जो क्रिया हमारे सामने है यही एक अकेली क्रिया है जिसमें हम अपने शरीर को सुरक्षित रखते हुए निरापद रूप से हम ध्यान को उपलब्ध होते हैं। अनेक खतरनाक क्रिया को अपने साधन के रूप में अपनाने वाले कई एक साधकों से मेरा साक्षात् हुआ है जिन्हें अनुभव तो कुछ हुआ नहीं बल्कि अपने पेट्रुओं में हमेशा के लिए नुकसान और कर बैठे। लोग योग के सिद्धान्त को ठीक से समझे बिना ही कार्य शुरू कर देते हैं जिस कारण से उन्हें नुकसान उठाना पड़ता है। यह ठीक है कि भगवत श्रद्धा से किया गया कोई भी कार्य अन्ततः साधन बन ही जाता है लेकिन हमें या गृहस्थियों को वह मार्ग चुनना चाहिए जो कि सर्वथा निरापद हो।

मैं एक बार फिर से इस साधना के सिद्धान्त को आपके सामने रखता हूँ। चित्त की चंचलता को वश में करने के लिए ही हम साधना करते हैं जिसमें पहले हम अपने मन को बहिर्मुखी से अंर्तमुख करते हैं। उसके बाद इसकी आगे की पायदानों में अपने ध्यान को अपने मन से भी हटाकर अपने प्राणों से भी और आगे हम अपनी चेतना पर ले जाते हैं। इस अवस्था में आकर ही हम अपनी मन या चित्त की वृतियों को अपने मन से अनुपस्थित पाते हैं। इसको ही महर्षि पतंजलि "योगश्चित्तवृति निरोधः" कहते हैं।

मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि मैं इस विषय को कितना भी खुलासा करने के लिए लिखूँ फिर भी मेरे मन में जितनी बातें हैं वे ही नहीं लिखी जा सकती हैं, जबकि इस संसार में तो जितने मन हैं उतनी ही बातें हैं। सारे के सारे संसार के कागज पर भी यदि उन तमाम मनों के लिए सही उपयुक्त व्यवस्था,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहां समाधान लिखे जायें तो सारे के सारे संसार का कागज भी कम पड़ जायेगा। शायद रजनीश इतनी ज्यादा व्याख्या अपने शिष्यों को ज्यादा संख्या में प्रभावित करने के लिए ही कर रहे हैं। मैं नहीं जानता शब्दों के इतने ज्यादा उलझाव के पीछे उनका इसके अलावा और क्या उद्देश्य है! अगर वे बुद्धिजीवियों की बुद्धि के स्तर पर हताश करके या उन्हें हराकर इस पूर्ण का अनुभव कराना चाहते हैं तो मेरे देखते गलती ही करते हैं क्योंकि शब्द में ज्ञान कहां? ज्ञान तो स्वयं में है शब्द में अनुभव कहां? अनुभव तो स्वयं करना पड़ता है। तभी हम उस प्रसाद को चख सकते हैं। हम कितना भी पढ़ लें, पढ़ लेने मात्र से कुण्डलिनी जाग्रत नहीं हो सकती। बुद्धि एक प्रकार से ऐसा मर्ज है जिसका जितना भी ज्यादा इलाज किया जावे, मर्ज उतना ही बढ़ता जाता है और रजनीश लगे हैं बुद्धि का इलाज करने में इसलिए केवल मोटी मोटी बातें जोकि आधार स्तम्भ है इस साधना के मैं केवल उन्हीं पर चर्चा करना चाह रहा हूँ। यह ठीक है देर सबेर उन तमाम परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है जिन संस्कारों के द्वारा हमारी मानसिकता ग्रसित है उन संस्कारों से अपने आपको मुक्त करने के लिए हमें पहले उनके द्वारा भटकना ही होगा।

मुझे अच्छी तरह से खूब याद है कि जब मैं प्राणायाम के अभ्यास पर था बड़ी निष्ठा, लगन एवं अपने सम्पूर्ण मनोयोग के साथ तथा शरीर को भी बिलकुल साधकर प्राणायाम किया करता था। उसमें मुझे जल्दी ही अच्छी सफलतायें भी मिली थी यानि मैं समय के हिसाब से काफी देर तक कुम्भक कर लिया करता था। ज्यादा देर तक कुम्भक करने के पीछे मैं यह सोचा करता था कि मेरी क्षमता बाद में इतनी अधिक बढ़ जायेगी जितनी दो चार घण्टे बिना श्वांस के भी मैं जीवित रह सकूंगा। होशपूर्वक अपने प्राणों को अपनी मुट्ठी में बन्द करने की यही अवस्था समाधि की होगी और इस समाधि की अवस्था में श्वांस को रोके रखे जाने के कारण अन्दर खिंचने श्वांसों को मैं रोक लूँगा, उतनी ही ज्यादा जिन्दगी मेरी बढ़ जायेगी लेकिन आगे की साधना को अपने अनुभव में लाने के पश्चात् मेरी उपरोक्त निष्ठा धारणा मेरे लिए व्यर्थ हो गयी थी।

इसी प्रकार की बातें आजकल योग के अध्यापक जो सैन्ट्रल स्कूलों में "योग

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

टीचर" की हैसियत से हैं बता रहे हैं वह उदाहरण देते हैं कि आदमी एक मिनट में इतने स्वाँस लेता है तो वह सौ साल जीता है। कछुआ एक मिनट में इतने कम स्वाँस लेता है कि ५०० साल जीता है लेकिन यदि इस बात को हम सिद्धान्त रूप में सच माने तो यह वक्तव्य एक कदम भी आगे नहीं चल सकता क्योंकि इस दुनियां में ऐसे भी जीव होते हैं जो ज्यादा से ज्यादा एक दो दिन के ही मेहमान होते हैं, इतने अल्प समय में ही वे अपनी बचपन, जवानी, बुढ़ापा तीनों स्थितियों से गुजर जाते हैं। इतने से ही समय में वे अपनी सन्तति भी पैदा कर जाते हैं। अगर उपरोक्त सिद्धान्त सच होता तो उन्हें अपनी साँसें इतनी जल्दी लेनी पड़ती कि वायु के तीव्र आवागमन के कारण इतनी गर्मी पैदा होती कि उनमें आग ही लग जाती, इस प्रकार की न जाने कितनी-कितनी बातें हमें समाधि अवस्था से भ्रमित करती रहती हैं।

मस्तिष्क के बल पर यदि उसका अनुभव किया जा सकता होता तो यह बात कोई कठिन नहीं थी, वह तो कठिन ही इस कारण से है कि बात इसके विपरीत है। जितना-जितना हमारा मस्तिष्क निष्क्रिय होता जाता है उतना-उतना हम उस अनुभव के नजदीक अपने आपको पाते हैं। आप कह सकते हैं कि बिना मस्तिष्क के तो हम बेहोशी में होते हैं। इसलिये इस बात को जरा गौर से समझें।

बेहोशी हम उस अवस्था को कह सकते हैं जिस अवस्था में हमारा मस्तिष्क मन और हमारा शरीर तीनों ही निष्क्रिय हो जाते है। जिसके कारण बेहोशी टूटने के बाद में हमें उस गुजरे समय के विषय में कुछ भी बातें हमारी याददास्त में नहीं आती हैं। जबकि कुण्डलिनी जागरण की अवस्था में जो स्थिति हमारे शरीर की, मन की या मस्तिष्क की बनती है वह बेहोशी से तो बिल्कुल अलग है क्योंकि उसमें हमारा मन बिल्कुल ठीक अवस्था में चैतन्य रहता है। जैसाकि हमारी जागृति की अवस्था में रहता है, लेकिन इस अवस्था को हम जागृत अवस्था भी नहीं कह सकते क्योंकि हमारा शरीर बिल्कुल मृत प्राय रहता है। शरीर के मृत प्राय रहने के कारण, ऊपर से यह सुषुप्ती की अवस्था लगती है। लेकिन यह सुषुप्ती की भी अवस्था नहीं है क्योंकि सोते हुए जो-जो अनुभव स्वप्नों के द्वारा होते हैं। उनमें हम मौजूद तो होते हैं लेकिन केवल दृश्य रूप में, जिनको हम नींद से उठने के बाद याद करते हैं तो अपने मन को उन स्वप्नों में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चलती हुयी वृत्तियों के द्वारा गुलाम की तरह संचालित होते हुए पाते हैं। स्वप्न की अवस्था में हमारा मन स्वतन्त्र कर्ता के रूप में नहीं होता है, जैसाकि हमारा जागते हुये होता है, जबकि कुण्डलिनी के जागरण की अवस्था में हमारा मन जो भी अनुभव करता है अनुभव के स्तर पर उसमें और जागृत अवस्था के अनुभवों में रंच मात्र भी अन्तर उस समय तथा बाद में भी जब हम जागृति में आ जाते हैं करना कठिन होता है। क्योंकि उस समय सभी तरह से ऐसा नहीं लगता कि मैं जो भी कार्य अपने द्वारा होते हुए देख रहा हूँ, वे मेरे इस स्थूल शरीर के द्वारा ही तो हो रहे हैं। यही कमरा है जिसमें मैं ध्यान को बैठा था, अब मैं अपने शरीर के साथ जा रहा हूँ आ रहा हूँ या अनन्य कैसे भी अनुभव।

इसलिए ध्यान रखें यह न तो जागृति की ही अवस्था है और न ही सुषुप्ति की ही अवस्था है और न ही तीसरी स्वप्न की अवस्था है। यह इन तीनों से अलग और अनूठी चौथी अवस्था है। जिसमें आधी जागृति है मन के रूप में और आधी सुषुप्ति है शरीर के रूप में। इसी अवस्था को ही हमारे आध्यात्म के अनुभवी पुरुषों ने तुर्या अवस्था कहा है।

इस तुरिया (तुर्या) अवस्था में आते ही हमारा मस्तिष्क जो कि अब तक इड़ा और पिंघला से प्राप्त शक्ति के द्वारा संचालित हो रहा था। अब सुषमणा के द्वारा संचालित होने लगता है जिसके कारण से इसकी कार्य प्रणाली में अन्तर आकर इसकी तार्किक शक्ति नष्ट हो जाती है, तथा साथ ही इसका प्रभाव नरवस सिस्टम पर से भी हट जाता है जिसके कारण हमारे मस्तिष्क का सम्बन्ध हमारे स्थूल शरीर से समाप्त हो जाता है। सुषमणा नाड़ी जो, हमारे सूक्ष्म शरीर का आधार हैं, उसके द्वारा मस्तिष्क के प्रभावित होने के कारण ही अब हमारे मस्तिष्क का सम्बन्ध हमारे सूक्ष्म शरीर से जुड़ जाता है और इसी कारण से इस तुर्या के अनुभवों को वह अपने आप में इस प्रकार से अनुभव करता है जैसे कि जागृति की अवस्था में करता रहता है लेकिन जब तुर्या अवस्था से फिर हम जागृति में आते हैं तब यह सोचकर कि हमारी देह तो इसी बन्द कमरे में ज्यों की त्यों पड़ी है जैसी कि हमने साधना में उतरने से पूर्व जिस जगह छोड़ी थी वहीं अब भी उसी हालत में मौजूद मिली हैं फिर कोनसा शरीर उन अनुभवों में इस बन्द स्थान के बाहर और कैसे गया था ?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पहली बार वह अकल्पनीय सूक्ष्म शरीर हमारे मस्तिष्क के अनुभवों में साकार हो उठता है और हमारा मस्तिष्क पहली बार उस सूक्ष्म शरीर के अस्तित्व को मानने को तैयार होता है। कुछ लोग सोते हुए नींद में स्वप्न वाले शरीर को सूक्ष्म शरीर मानने की गलती कर जाते हैं या दूसरे लोग ध्यान करते समय बिना कुण्डलिनी जागरण के ही किसी इच्छित स्थान पर अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा पहुँचने की क्षमता ऐच्छिक शरीर से कर लेते हैं। लेकिन ये दोनों ही शरीर सूक्ष्म शरीर नहीं है। इनको हम क्रमशः मनस्, शरीर या एच्छिक शरीर कह सकते हैं **लेकिनचूँकि ये दोनों ही शरीर किसी भी तरह वर्तमान को छोड़कर भूत और भविष्य से नहीं जुड़ते इसलिए इनका इस साधना में कोई खास महत्व नहीं है।** अक्सर तो ऐसा ही होता है कि स्वाँस पर से पता नहीं कब का ध्यान टूट जाता है जब होश आता है तब पता चलता है कि मैं तो नींद में चला गया था अथवा जब बैठा हुआ निद्रित शरीर गिरने को होता है तब झटके से आँख खुल जाती। साधक की ऐसी अवस्था साधारण लोगों की अवस्था से तो ऊँची है लेकिन इस अवस्था का उस तुर्या अवस्था से किसी भी प्रकार का तथा किसी भी प्रकार से कोई भी सामंजस्य नहीं है और न ही ये क्षमतायें किसी भी प्रकार से साधक की उन्नति में सहायक होती है।

जैसे हम किसी राजमार्ग पर जा रहे हैं और चलते-चलते उस राजमार्ग में से कोई अन्य मार्ग निकलता है। हम अनायास ही उस पर चलने लगते हैं। आगे चलने पर यह मार्ग अवरुद्ध हो जाता है **तब हमारे सामने दो स्थितियाँ पैदा हो जाती हैं। एक तो यह कि हम अपनी यहाँ तक की यात्रा को सम्पूर्ण यात्रा मानकर आगे की यात्रा हम न करें और हम विश्राम में आ जायें अथवा उस मार्ग से लौटकर फिर से हम राजमार्ग पर आ जायें और न जाने कितने साधक इन निचली स्थितियों को पाकर अपने आप को धन्य समझने लगते हैं। इसी प्रकार बहुत से साधकों को बिना तुर्या अवस्था आए ही अपने आपको समाधिस्थ हो जाने का भ्रम हो जाता है इसलिए प्रत्येक साधक को इन भ्रान्तियों को अपने मन में स्थान नहीं बनाने देना चाहिए और असली तुर्यावस्था को भी बार-बार अजमाना चाहिए, और जो मैंने उस तुर्यावस्था के लिए लिखा है कि वह सत्य भी है या नहीं। इसकी परख करनी चाहिए।**

जब हर तरह से आप आश्वस्त हो जायें। केवल तब ही आप चाहें तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आराम में आ सकते हैं या ज्यादा से ज्यादा देर तक उस अवस्था में अपने आप को बनाए रख सकने के लिए अपनी क्षमता बढ़ाने में अपना समय लगा सकते हैं **जोकि इस साधना का परम उद्देश्य है**। लेकिन इस अवस्था में आगे और ज्यादा साधना करने में हमें हमारी सांसारिक जिम्मेवारियाँ बाधक बनती हैं क्योंकि फिर इस साधना में इतना ज्यादा समय लगने लगता है जिसके कारण गृहस्थ को साथ लेकर चलना बड़ा कठिन होता है लेकिन यहाँ यह भी नहीं समझना चाहिये कि हमारे घर त्याग करने के पश्चात हमारे पास बहुत समय हमें मिल जायेगा। जबकि हकीकत तो यह है कि रोटी बनाने और प्राप्त करने में ही इतना समय निकल जाता है या इतना ज्यादा शारीरिक श्रम हो जाता है कि बाद में बचे हुए समय में हम कुछ भी साधना नहीं कर पाते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर इस दुनियाँ में साधकों ने बस्ती से दूर योग साधना को सतत् चालू रखने के लिये आश्रम प्रणाली ईजाद की होगी, जिसमें दस पांच शिष्य रहते वे अपनी साधना में रत अपने गुरूजी की सुरक्षा करते, बस्ती से भिक्षाटन करते, बस्ती में भिक्षाटन करके अपनी तथा गुरूजी को समयानुकूल रखने की व्यवस्था रखते, लेकिन आजकल इस प्रणाली में भी दरारें पड़नी शुरू हो गयी हैं। जब से धन्धे में और राजनीति में लिप्त गुरु पैदा होने लग गये हैं क्योंकि आजकल आश्रमों में से भीड़ के कारण शान्ति गायब हो गयी है, जो कि साफ तौर पर इस युग का ही प्रभाव है।

शायद इसी बात से दुखी होकर आध्यात्म के सूर्वन्य साधक एवं युग-दृष्टा श्री तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में लिखा है **"कलियुग केवल नाम अधारा"** उनके इस वक्तव्य से बहुत से साधक इस साधना को शुरू करना ही व्यर्थ समझते हैं। लेकिन श्री तुलसीदास जी की चौपाई का अर्थ यदि हमने इस तरह से लिया तो ध्यान रखना हम समझकर भी चूक गये जो समस्या आज है, उनके सामने भी थी लेकिन फिर भी उन्होंने इस मार्ग के अनुभव को आखिरी मन्जिल तक अपनी स्वयं की साधना करके जाना था। नहीं तो ऐसा वक्तव्य वह दे ही नहीं सकते थे। जब उन्होंने अपनी इस साधना के द्वारा ज्ञान प्राप्त हो गया कि हमारे शरीर के अलावा अन्य सूक्ष्म शरीर भी मौजूद है तभी वे अपने राम के सूक्ष्म रूप में होने वाले साक्षात दर्शनों पर विश्वास कर सके। जिसके कारण वे राम के पैदा होने के हजारों साल बाद भी उनकी भक्ति में लीन हो गये तो हमें ध्यान रखना है कि हम अपनी बुद्धि की किसी चालाकी से अपने आपको उस अनुभव से वंचित न कर लें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुण्डलिनी जागरण के अनुभव के दौरान मैं अपनी साधना में किन-किन परेशानियों से या किस प्रकार के भय से ग्रस्त था और उनका किस प्रकार निराकरण हुआ ? यहां उनका संक्षिप्त सा ब्यौरा मैं अन्य साधकों के हितार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह जानते हुए भी कि इन रहस्य की बातों को दूसरों के सामने नहीं खोलना चाहिये। क्योंकि इस प्रकार के अनुभवों को अपने द्वारा प्रगट करने से हमारे मन के ऊपर एक अहम् का पर्दा चढ़ जाता है जिसके कारण नये-नये साधक को उसके ठीक से चलते हुये कार्य में भी, अपना मन बाधा बनकर खड़ा हो जाता है। इसके लिए ओमानन्द जी तीर्थ ने साधकों को चेतावनी देते हुये लिखा है जिसको कोई सन्त या असन्त, अश्रुत या बहुश्रुत, सुवृत या दुवृत नहीं जानता। वह ब्रह्म निष्ठ योगी है, गूढ़ धर्म का पालन करता हुआ विद्वान योगी, दूसरों से अज्ञात चरित रहे अन्धे के समान, जड़ के समान और मूक के समान पृथ्वी पर विचरण करे।

"यं न सन्तं न चासन्तम् न श्रुतं न बहुश्रुतम्।
न सुवृतं न दुर्वृतं वेद कश्चित् स ब्राह्मणः॥

गूढ़ धर्माश्रितो विद्वान ज्ञात चरितं चरेत्।
अन्ध वच्च जड़ वच्चापि मूक वच्च मही चरेत्॥

यदि सभी अनुभवी इस संसार से पीठ फेर लेंगे तो इस दुनिया में आगे आने वाली सन्तति को कौन किस प्रकार से बतायेगा लेकिन ओमानन्द जी की बात असत्य नहीं हैं इसलिए मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि इस पृथ्वी के अनन्य साधकों के हितार्थ इस बात को खोलने में वह मेरी सहायता करें और यदि इसके अतिरिक्त मुझे इसके द्वारा किसी प्रकार के मेरे पूर्व के संस्कारों को भुगतना लिखा हो तो वह भी जिस प्रकार से भी भुगतें उसके लिए भी परमात्मा मुझे हौंसला प्रदान करें।

मैं उन दिनों जब भी ध्यान पर बैठता था, शुरू में पहले लम्बे और गहरे प्राणायाम खींचा करता था जो गिनती में तो दो तीन ही होते थे लेकिन उनमें मुझे आधा घण्टा तक लग जाया करता था। प्राणायाम करने के पश्चात् भी मैं अपने उसी आसन पर बिना हिले डुले वहीं का वहीं ज्ञान मुद्रा में बैठा रहता था

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और उसी अवस्था में आँखें बन्द किये हुये, अपनी स्वाँस पर ध्यान केंद्रित किया करता था। जिसमें अक्सर हमेशा ही ऐसा होता था कि मेरा ध्यान शरीर के अन्दर और बाहर आती जाती स्वाँस पर से पता नहीं कब हट जाता और जब मेरा बैठा हुआ निद्रित शरीर नींद के कारण गिरने को होता तब उस झटके से मुझे होश आता था। जब मुझे होश आता था तब अपनी इस अवस्था को जानकर बड़ा हताश भी होता था तथा अपनी क्षमता पर भी तरस आता था कि कमाल है कि इतना साधारण सा कार्य भी मैं सफलतापूर्वक नहीं कर सकता हूँ। फिर यह भी सोचता कि यदि यह कार्य इतना साधारण होता तो इस दुनिया के सभी लोग नहीं कर लेते। जब बहुत तन्मयता के साथ बैठता तब यदि नींद नहीं आती तो एक और अन्य बाधा खड़ी हो जाती जिसमें मेरा ध्यान पता नहीं कहाँ अपनी वृत्तियों के चक्र व्यूह में फँसा होता था। कितने ही महीनों में इसी प्रकार की बाधाओं से ग्रस्त रहा। इस स्थिति में जरा सा भी परिवर्तन कभी मुझे महसूस नहीं हुआ। उन दिनों में बड़ी ही कशमकश में रहा करता था। किसी से पूछता तो जवाब मिलता किसी अनुभवी के सान्निध्य में रहकर साधना करो अन्यथा यदि किताबों में लिखे के हिसाब से करोगे और बिलकुल अक्षर से अक्षर मिलाकर परिणाम प्राप्त करना चाहोगे तो असफल ही रहोगे।

बड़ी कठिन मानसिकता से गुजर रहा था क्योंकि मुझे यह कैसे पता मुझे चले कि कौन गुरू जड़ है और कौन चैतन्य, और जिनको मैंने अपने बचपन में १५ साल पहले गुरू बनाया था उनका तो उसके बाद से आज तक पता ही नहीं था। मुझे एक परेशानी इसके अतिरिक्त और भी थी कि मैं अपने घर तथा अपने फोटोग्राफी के व्यापार को छोड़कर दुकान बन्द करके किन्हीं अनुभवी साधु के वहाँ जाकर उनके सन्निध्य में रहना भी मुझे बड़ा मुश्किल ही था। हालाँकि मेरे मन में इस बात की बड़ी कशमकश थी लेकिन फिर भी मैं नित्य प्रति अपनी ऊपर बतायी हुई क्रिया को किया करता था और जब तक मैं इस क्रिया को नहीं कर लेता तब तक पानी भी नहीं पीता था चाहे दोपहर ही क्यों न हो जाये। इसी प्रकार से कुछ समय और निकल गया। दुकान पर मंगलवार के दिन साप्ताहिक अवकाश रहता था उस दिन मैं अपनी साधना के दौरान कुछ ज्यादा समय के लिए आती जाती स्वाँस पर ध्यान रखकर बैठ जाया करता था। इसी प्रकार एक मंगल के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिन का मुझे ख्याल है, ध्यान करते करते समय शायद एक घण्टे से ऊपर हो गया था। मैंने उस समय खेचुरी मुद्रा लगा रखी थीं जिसमें अपनी जीभ को उल्टी करके तालुएँ में ऊपर की ओर चिपका लेते हैं तथा में अपने उसी ज्ञान मुद्रा से बैठा हुआ था, नींद न आये इसलिए प्रत्येक स्वाँस को राम नाम के साथ ही अन्दर ले रहा था तथा बाहर भी राम के नाम के साथ ही उसे निकाल रहा था। अपनी स्वाभाविक गति से वह आ जा रही थी। मुझे पता था कि सिद्धासन लगाकर अपने हाथों को लम्बा करके अपने मुड़े हुये घुटनों पर रखकर ज्ञान मुद्रा लगाकर बैठने के पश्चात् मेरा एक इन्च भी दायें बायें झुकना असम्भव था लेकिन इसी अवस्था में क्या महसूस करता हूँ कि मैं अप्रत्याशित रूप से अपने दाहिने हाथ की ओर बैठे-बैठे झुकता ही जा रहा हूं। मैंने अपनी आँखों को बन्द रखे रखे ही खूब चाहा कि मैं सीधा रह सकूँ लेकिन अपने आपको सीधा करने की तमाम कोशिशें मेरी व्यर्थ ही रहीं। जब इसके बाद और ज्यादा खिचाव अपने दाहिनी ओर मैंने महसूस किया तब मैंने अपनी बन्द आँखों को खोलने का फैसला किया कि क्या बात है ? मैं क्यों एक तरफ गिरा जा रहा हूँ।

लेकिन जैसे ही मैंने अपनी आँखें खोली; मैं आश्चर्य चकित हुए बगैर नहीं रह सका। क्योंकि मेरी कल्पना के अनुसार मेरा शरीर उस समय कम से कम २० डिग्री तक झुका हुआ होना चाहिये था लेकिन मेरी उस धारणा के विपरीत मेरा शरीर बिलकुल सीधा ही था। इसमें जरा भी झुकाव नहीं था। जब कुछ नहीं समझ सका तब एक ख्याल यह भी मेरे मन में आया कि कहीं कोई अशरीरी मुझे इस शरीर में से खींच तो नहीं रहा था। थोड़ी सी देर के लिए तो मैं भय से भी ग्रस्त हो गया था लेकिन जब यह विचार आया कि जब तक अपनी आँखों को खोलने की क्षमता मुझ में है। जिनको खोलते ही मेरी वह स्थिति बिलकुल सामान्य हो जाती है तो आगे जो होगा वह भी देखा जायेगा। मतलब यह है कि मानसिक रूप से मैं पूर्णतः स्वस्थ था।

वह दिन बड़े ही आराम से बीत गया। दूसरे दिन फिर वही स्थिति शुरू हुई। मैं फिर दहिनी ओर झुकने लगा। मैं भी तैयार था, देखें कितना झुकता हूँ। मैंने अपने आपको अपनी तरफ से और ढील दे दी यानि मैंने उस समय किसी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकार की बाधा अलग से खड़ी करना उचित नहीं समझा। इस कारण से शरीर झुकता ही चला गया, मुझे जब लगा कि मैं जो कि ९० डिग्री के समकोण पर बैठा था। अब मुश्किल से तख्त के साथ जिस पर मैं बैठा हुआ था, मुझमें और तख्त में ३० डिग्री का कोण होना चाहिए यानि में ६० डिग्री झुक गया था यह बात जब अच्छी तरह से मेरे जहन में उतर आयी कि आज तो शंका की कोई गुन्जाईस ही नहीं है मैंने आँखें खोल दीं। आँखें खोलते ही वह खिचाव समाप्त हो गया और सबसे बड़े ताज्जुब की बात तो यह थी कि मैंने अपने शरीर को बिलकुल समकोण की अवस्था में ही पाया! इस बात पर जब गौर किया कि मैं अपने अनुभव में इतना झुक गया था लेकिन, शरीर बिलकुल भी नहीं झुका। क्या बात है। स्थूल शरीर का बिलकुल भी नहीं झुकना इस बात से भी सिद्ध हो रहा था, कि यदि मेरा शरीर इतना झुक जाता तो जो हाथ मेरे अपने घुटनों पर ज्ञान मुद्रा के रूप में रखे थे घुटनों पर से हट जाने चाहिए थे लेकिन वे ज्यों की त्यों अब भी उन्हीं घुटनों पर रखे थे इसलिए मुझे यह तो मानना ही पड़ा कि शरीर तो बिलकुल भी नहीं झुका था फिर क्या हुआ था मेरे होश में। तभी यह प्रश्न मेरे मस्तिष्क के गहरे से गहरे कौने में कौंध गया लेकिन उस समय किसी भी तरफ से कोई जबाब मैं प्राप्त नहीं कर सका।

जिस प्रकार से पुस्तकों में पढ़ा था उस हिसाब से यदि मेरे शरीर के सूक्ष्म स्वरूप स्वतः ही गिरने को था तो वह बिना कुण्डलिनी के जागृत हुये वह किस प्रकार से वह स्थूल से अलग हुआ? मेरी समझ में ठीक से कुछ भी नहीं आया। उसी दिन यहाँ के पुराने लक्ष्मण मंदिर में एक वृद्ध बाबा जो कि यहाँ नित्य प्रति रामायण पर कथा करते हैं, जिनको इसी कारण से रामायणी जी के नाम से भी पुकारते हैं, उनके सामने जाकर अकेले में मैंने अपनी शंका रखी लेकिन उन्होंने अपनी सत्यता का प्रदर्शन करते हुये कहा कि मुझे इस प्रकार का कोई अनुभव नहीं हुआ है इसलिए मैं नहीं कह सकता कि यह क्या था या इसके बाद और क्या होने वाला है, लेकिन लगता ऐसा ही है कि यह स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर के अलग होने की ही तैयारी थी। इसी अस्पष्ट सी स्थिति को अपने मन में लिए मैं अपने घर वापिस आ गया था। उस दिन के बाद शायद भेद खोल देने के कारण से वह क्रिया फिर कुछ दिन नहीं हुई। दो चार दिन बाद मैं स्वयं भी फिर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसी स्थिति को पाने की अपनी तरफ से चाह भी करने लगा था लेकिन फिर भी कोई खास सफलता हाथ नहीं लगी।

करीब पन्द्रह दिन बाद फिर वही उसी प्रकार की स्थिति बनी, लेकिन कोई इससे ज्यादा यात्रा आगे नहीं बढ़ सकी जब काफी दिनों तक इस स्थिति में कोई अन्य नया पन नहीं आया तब धीरे धीरे मेरे मन में कोई विशेष आग्रह इस स्थिति के प्रति नहीं रहा था, कभी थोड़ी बहुत हो भी जाती थी कभी नहीं भी होती थी, इसी तरह एक साल के करीब और गुजर गया। अभी पिछले साल १९८२ में जून माह की १४ तारीख को श्रृंगेरी की शारदा पीठ के जगद्गुरू शंकराचार्य अपने चतुर्मास प्रवास के लिए दिल्ली जाते हुये भरतपुर एक रात्रि को यहाँ रुके। दूसरे दिन दोपहर को उन्होंने भरतपुर के नगर सेठ श्री सन्तोषी लाल जी के यहाँ आम साधकों के हितार्थ विचार संगम का एक कार्यक्रम ३ बजे से ४ बजे सांय तक रखा था। मुझे जब इसकी जानकारी हुई तो मैंने तुरन्त अपनी शंकायें तीन चार पृष्ठों में लिखी और समय पर पहुँच गया। उनके समक्ष करीब दो तीन सौ आदमी वहाँ उपस्थित थे लेकिन उनमें ज्यादातर या तो संवाददाता थे जो इस देश में हो रहे धर्मान्तरण के ऊपर उनके विचार जानना चाहते थे। कुछ ऐसे थे जिनको अपने किताबी ज्ञान की खुजलाहट हो रही थी जो अपने ज्ञान को बघारकर अपनी खुजली मिटा रहे थे, कम से कम साधक तो उनमें नहीं थे। मैंने जब अपने लिखे हुए पृष्ठ उन्हें दिये, वे सबसे पहले उनको ही पढ़ने लगे, करीबी पाँच मिनट बाद ही उन्होंने मुझे उस भीड़ में से सबसे आगे इशारे से बुलाकर अपने तख्त से बिलकुल सटकर बैठने का आदेश दिया। मैं उनके तख्त के नीचे ही इस तरह से बैठ गया कि पैर तख्त के अन्दर ही घुस गये थे, इस स्थिति में उनके चेहरे से मेरा चेहरा केवल दो ढाई फीट की दूरी पर ही था। मैं सोच रहा था कि मैंने जो शंकायें लिखी हैं वे शायद सबके सामने चर्चा करने योग्य नहीं हैं। इसलिए इन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर बिठा लिया है। फिर उनसे मेरी इस प्रकार बात चीत हुई—

श्री शंकराचार्य जी—तुम्हें किसने बताया, यह सब करने को ?

मैं—मैंने कहा, "कुछ तो पारिवारिक संस्कार तथा कुछ श्री ओमानंद

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ओमानन्द जी तीर्थ की "पातंजलि योग प्रदीप" के पढ़ने के बाद, मैंने स्वयं ही शुरू कर दिया।

श्री शंकराचार्य जी—तुम क्या व्यवसाय करते हो तथा तुम्हारे कितने बच्चे हैं?

मैं—मैं फोटोग्राफी करता हूँ तथा तीन बच्चे भी हैं।

श्री शंकराचार्य जी—तुम्हें पता है, तुम कितने कठिन मार्ग पर चल रहे हो? इसमें मृत्यु का हर समय सामना होता रहता है। अगर किसी दिन कुछ हो गया तो कौन संभालेगा? इसलिए इसको जानने वाले किसी को गुरू बनाओ नहीं तो समझ लो मुश्किल तुम्हारे सामने ही है।

मैं—कहाँ से पैदा करूँ, गुरू।

मेरा तो इतना कहना था, उनकी आंखे मेरी आँखों से टकरायीं, कम से कम ७५ वर्ष के वे, रहे होंगे लेकिन कितनी तीक्ष्णता थी उनकी आँखों में, मुझे खूब अच्छी तरह से याद है, अगर मेरे इस उपरोक्त उत्तर में कहीं भी, जरा सी भी कमजोरी होती तो मैं किसी भी हालत में अपलक उनकी नजर का सामना नहीं कर सकता था। कम से कम एक मिनट तक उनसे मेरी आँखें मिलती रहीं, यह एक मिनट कितना लम्बा था और कैसे मैं यह सब झेल गया, परमात्मा ही जानता है। जब इतना समय निकल गया तब बड़े ही सौम्य प्रकृति में आकर उन्होंने फिर से बोलना शुरू किया।

श्री शंकराचार्य जी—कौन से आसन से बैठते हो?

मैं—सिद्धासन से बैठता हूँ।

श्री शंकराचार्य जी—इस आसन को छोड़ दो। पद्मासन से बैठा करो सफलता मिलेगी।

इतना सुनने के पश्चात मेरा हौसला कुछ बढ़ा और मैंने अन्य शंकायें

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो पृष्ठों में लिखकर दो थीं, उनके बारे में उन्होंने कहा कि, "वे स्वतः ही निर्मूल हो जावेंगी, उनकी चिन्ता मत करो। मैं उनके सान्निध्य में से फिर अपनी जगह पर आकर बैठ गया। मैं अपने आपको उनके द्वारा दीक्षित किया हुआ सा महसूस करके धन्य हो रहा था और सोच रहा था, इतनी सी बात के पीछे मैं इतने दिनों से भटक रहा था, चलो अब ही सही।

दूसरे दिन मैंने आसन बदल लिया और काफी जोश खरोश के साथ में अपनी साधना में बैठा लेकिन बहुत अफसोस हुआ, इस बात को जानकर कि मेरी यात्रा में जरा सा भी अन्तर नहीं आया था। मेरे अनुभव के हिसाब से यानि कुंभक को गहरा खींचते ही जब समय तीन मिनट के लगभग पहुँचता तो जो असह-नशील प्राणों की टक्कर मस्तिष्क में मूलाधार से जाकर लगती। ठीक उसी समय मेरा मूत्र निकलने को होता। इन दोनों कारणों की वजह से मुझे कुंभक खोलने को बाध्य होना पड़ता था। आज भी वही सब हुआ था। बहुत हैरान भी था कि कैसे होगी कुण्डलिनी जागृत कैसे सूक्ष्म का साक्षात्कार होगा? जगद्गुरु से मिलने के पश्चात बड़ी आशा बंधी थी लेकिन वह भी आज पूर्णतः धराशायी हो गयी।

तीसरे दिन यानि १६ जून के प्रातः जब मैं अपनी साधना पर था, मैं अपने पुराने आसन पर ही आ गया, प्राणायाम खींचे स्थिति बिल्कुल वही, कहीं कोई बदलाव नहीं आया। प्राणायाम के बाद जब मैंने अपनी आँखें बन्द किये ही अपना आसन खोला और वहीं उसी तख्त पर शवासन में मैं लेट गया, क्योंकि ओमानन्द जी ने लिखा है कि यदि बैठने से प्राणों का सुषमणा में उत्थान न हो तो शवासन में लेटकर करने से क्रिया जल्दी घट जाती है, और ध्यान करने लगा।

मैं नहीं कह सकता घड़ी के हिसाब से उस समय कितना समय बीता होगा मुझे बड़ा भारी शोर सुनाई पड़ने लगा मुझे मेरे कमरे के बाहर से किसी ट्रक या किसी अन्य भारी वाहन की गडर-गडर की सी आवाज आ रही थी, लेकिन कुछ क्षणों के पश्चात ही मैंने पाया वह आवाज कमरे के बाहर से नहीं बल्कि मेरे शरीर में ही हो रही थी, गौर करने पर आवाज का स्वरूप कुछ इस प्रकार का लगा जैसे किसी सुरंग में से होकर बहुत तेजी से निकलती पानी धारा के द्वारा उसमें पड़े हुए मोटे-मोटे पत्थर जब लुढ़कते हुए गर्जन तर्जन सी करते हैं, कुछ इसी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकार का भारीपन लिए तेज शोर मैं सुन रहा था और ज्यादा ख्याल में लाने पर मैंने स्पष्टतः जाना कि वह घटना मेरे चित्त लेटे होने की दशा में, मेरी रीढ़ की हड्डी में घट रही है। जिसमें कुछ न कुछ नीचे से ऊपर की ओर तेजी से शोर करते हुए प्रवाहित हो रहा है। जब मेरे ख्याल में रीढ़ की हड्डी की बात आयी तो मुझे यह भी समझते देर नहीं लगी कि हो न हो शायद सुषमना में प्राण चढ़ कर ऊपर जा रहे हैं। इतना सब कुछ मेरे बिना कुछ किए ही हो रहा था।

ठीक इस विचार के आते ही मन में विचार आया कि अब नीचे कैसे उतरेंगे, बस यही विचार मेरे भय का कारण बना। इसके पहले कोई भय मुझे नहीं था और इस विचार के आते ही जो शोर ऊपर चढ़ते हुए हो रहा था महिम हो गया तथा जो मुझे अपने मेरुदण्ड में बढ़ता प्रतीत होने लगा था वह अब उतरता हुआ प्रतीत होने लगा।

अब मैं ऐसे भवन में था जिसकी दूसरी तीसरी मंजिल की सीढ़ियों पर मैं खड़ा था। नीचे पैरों की तरफ से आते हुये एकाश को मैं देख रहा था। मैंने खूब जोर लगाया कि मैं कहाँ आ गया हूँ? शोर वगैरहा सब बन्द थे लेकिन समझ मैं कुछ भी नहीं पाया, थोड़ी देर बाद जब मैं स्वयं थोड़ा होश में आया तो स्वाँस को चलते पाया, ऐसा लगा कि पहले से ये बन्द थी, बस अब ही शुरू हुई है, मेरी आँखें खुलीं थीं और चूँकि मैं लेटा हुआ था, तथा टाँगों की तरफ से अपने बन्द कमरे में आती हुई रोशनी मुझे उस समय दिखाई दे रही थी।

वैसे तो मैं अपने आपको उस समय पूरी अवस्था में जागृत महसूस कर रहा था लेकिन अपने कमरे के इस रोशनदान ने बता दिया कि मैं धीरे-धीरे ही जागृत हुआ हूँ, यही कारण है कि जब मैं अर्द्ध जागृत था तो इस रोशनदान तथा अपने ही कमरे को सही रूप से पहचान नहीं पाया या कुछ का कुछ समझ गया था। बाद में मुश्किल से दो मिनट बीतते बीतते मैं पूर्णतः स्वस्थ एवं जागृत था इसलिए मैंने सोचा अब उठना चाहिए लेकिन इस उठने वाले शब्द को क्रियान्वित करने के लिए जैसे ही मैंने उठने की कोशिश की, मेरी पीठ की हड्डियाँ कुछ आवाज करने लगीं और ऐसा लगा कि मेरी तमाम हड्डियाँ जाम हो गयी है पैर जब सिकोड़े तब तो और भी परेशानी आयी। धीरे-धीरे उठकर बैठ गया। सारे हाथ पैर ऊपर नीचे किये, कमर इधर-उधर घुमाई तब कहीं जाकर शरीर सामान्य बना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक बात और मुझे आश्चर्यचकित कर रही थी कि इतना शोर हुआ था मेरे कानों में लेकिन कमरे के बाहर घर के किसी भी सदस्य को इसकी खबर नहीं थी, मैंने इसका कारण भी वही जाना, ये सारा का सारा शोर, अनुभूतियाँ केवल मैंने ही अनुभव की थीं, इनका किसी भी अन्य व्यक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं था भले ही वह मेरे बगल में ही क्यों न लेटा होता, उसे इसका कुछ भी पता नहीं चलता।

इस अनुभव को मैं क्या कोई भी करता, जीवन भर कैसे भूल सकता था और चूँकि मेरे जहन में सैद्धान्तिक रूप से सारा कुछ पहले से था इसलिये जब से यह घटना घटी तब मेरे लिए ऐसी कोई शंका या कारण नहीं बचा था जिसकी बजह से मैं अपनी कुण्डलिनी के जागरण को झुठला सकता।

कमरे में से निकलकर सबसे पहले घड़ी पर नजर डाली आठ बजकर पाँच मिनट हुये थे। इसका मतलब, आज मैं पूरे दो घण्टे बाद ही कमरे से बाहर निकला था। मैंने जल्दी ही अपने कपड़े पहने मेरा निवास जो कि भरतपुर किले के अन्दर है, वहाँ से चलकर किले में ही रहने वाले श्री श्यामाशरण जी शास्त्री के पास पहुँचा, उनसे मैंने अपने आठ बजे के समय के बारे में जानना चाहा तो उन्होंने बताया कि उस समय मेरे ऊपर मारकेस लगा था। मैंने जब इसको और खुलासा करने को कहा तो बोले कि उस समय दुर्घटना में प्राणों का भय, नुकसान, मृत्यु तुल्य कष्ट होने का योग बनता है। बाद में हरदेव जी के मन्दिर के श्री जुगल किशोर गोस्वामी जी से भी बातें की तो उन्होंने भी वही बातें बतलायीं। मैंने उनसे उस समय के मेरे से सम्बन्धित ग्रहों व नक्षत्रों के हिसाब से समयचक्र बनाकर देने को कहा। जो आज भी मेरे पास मौजूद है। यह तो मुझे भी लग रहा था कि मैं मौत के मुँह से ही वापिस उस समय आया था लेकिन किसने सहायता की मुझे वापिस लाने में ? पण्डितों के अनुसार तो मेरे लिए ग्रह स्थिति तुरन्त कुछ समय पश्चात् सहायक हुये थे।

मेरे मस्तिष्क ने बाद में यह निष्कर्ष निकाला कि मेरी मृत्यु होनी होती तो वह आज ही इस प्रथम अनुभव के दौरान ही हो जाती और आज अब जबकि उस अनुभव को मेरे शरीर और मन ने होशपूर्वक झेल लिया है तब फिर भविष्य के बारे में क्या चिन्ता करनी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यही सोचकर मैं दूसरे दिन फिर से तैयार था अपनी साधना में उतरने के लिए, लेकिन एक परिवर्तन अब मैंने अपने कार्यक्रम में कर दिया था जिस कारण से अब मैं शुरू के प्राणायामों को करने की बजाय अब सीधे ही ध्यान में उतरने के लिए शवासन में लेट गया था, आती जाती स्वांस पर ध्यान राम नाम के साथ कब तक चलता रहा, कब वह बन्द हो गया यह मेरे ख्याल में नहीं रह सका।

बहते हुए पानी के द्वारा चुबुक-चुबुक की सी आवाज आयी तब मुझे पता चला कि फिर वही कल की सी स्थिति हो रही है लेकिन आज भारी शोर नहीं था बल्कि आज एक नई बात हुई थी। कल मेरुदण्ड के अन्दर होकर जिस चीज ने ऊपर की ओर दबाव के साथ चढ़ने की कोशिश की थी, वह आज बड़े आराम से बहुत ही शीघ्र बिना किसी दबाव के मेरुदण्ड से ऊपर की ओर जाकर मेरी खोपड़ी में भर गयी इतना सब होने में मुझे किसी भी प्रकार की तीक्ष्णता या मुश्किल नहीं आयी जिसके कारण मुझे अब तक सब कुछ सामान्य सा ही लग रहा था। शुरू में जो पानी के बहने की आवाज मेरे शरीर में हो रही थी अब उसका स्थान एक विचित्र सी सनसनाहट ने ले लिया था। थोड़ी सी देर बाद ही वह सनसनाहट बहुत तेज महसूस होने लगी, बस इसमें तेजी आने के साथ ही मैंने चमत्कार स्वरूप महसूस किया कि मैं तख्त पर बिछे हुए बिस्तर पर लेटी हुई अवस्था में से ही उठकर कमरे की छत से टकराने से अपने आपको किस प्रकार से रोकूँ। इतना सोच ही रहा था कि तेजी से मैं उसी अवस्था में छत में से पार निकलकर खुले आसमान में आ गया था।

छत में से ऊपर निकलने का मुझे बड़ा भारी ताज्जुब हो रहा था इसके थोड़ी देर बाद ही मैंने अपने आपको कमरे के अन्दर उसी तख्त से दो फुट ऊपर हवा में अधर पाया। थोड़ी देर तक मैं उसी अधर अवस्था में शवासन की स्थिति में रहा। फिर बहुत धीरे-धीरे मैं दो फुट नीचे तख्त पर उतर गया। जैसे ही मैं तख्त पर उतरा ठीक उसी समय मेरी बन्द आँखें खुल गयीं और तब ही मैंने अपनी स्वांस और हृदय की धड़कन को शुरू होते महसूस किया मेरी आँखों के खुलने में और धड़कनों के शुरू होने के बीच में समय का कोई अन्तर नहीं था। मैं यह अपने होश में उस समय नहीं रख सका कि मेरे सूक्ष्म शरीर धारण करके हवा में ऊपर उठने के पश्चात मेरा तख्त पर पड़ा हुआ स्थूल शरीर उस अनुभव के दौरान किस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवस्था में था।

उस समय जो भी बातें मैंने अपने होश में अनुभव की थीं। मैं केवल उन्हीं को लिखने का उत्सुक हूँ। हालाँकि इन बातों को सिद्ध करने के लिए मेरे पास कोई सबूत नहीं है, लेकिन मुझे इसकी चिन्ता भी नहीं है क्योंकि जो भी व्यक्ति इस क्रिया को अपनाकर साधना करेगा वह तो जान ही लेगा और जहाँ तक वैज्ञानिकों का सवाल है आज की परिस्थितियों में इसको उनके समक्ष सिद्ध करना असम्भव है क्योंकि अपने मानसिक स्तर पर हुये सूक्ष्म शरीर के अनुभवों को उनके समक्ष पेश करना सम्भव कम से कम आज की वैज्ञानिक परिधि में नहीं है।

तीसरे दिन भी उसी प्रकार से कार्यक्रम हुआ। अब भय तो था ही नहीं इसलिये मैंने आज अपने मन में इच्छित स्थान पर जाने की धारणा उसी सूक्ष्म शरीर के द्वारा की लेकिन असफल रहा और अपने इच्छित स्थान पर पहुँचने की वजाय किसी भयानक सी जगह पहुँच गया। इसी प्रकार नित्य ही नये-नये अनुभवों के साथ मेरा कार्यक्रम हो रहा था एक दिन अपनी सामान्य अवस्था में मैंने सोचा कि मैं गृहस्थी हूँ। आज नहीं तो कल मेरा ब्रह्मचर्य अवश्य ही टूट जाएगा। क्या उसके बाद यह कार्यक्रम बन्द हो जायेगा ? **उन दिनों तो नहीं लेकिन काफी दिनों बाद यह स्पष्ट हो ही गया कि ब्रह्मचर्य द्वारा वीर्य का क्षरण रोकना बहुत ही जरूरी है अन्यथा यह कार्य शरीर में वीर्य की कमी के कारण यह रास्ता विधिवत होकर अवरुद्ध हो जाता हैं।**

मैं अपने मन में फूला नहीं समा रहा था कि मेरी कुण्डलिनी का जागरण इतनी आसानी से होगा. मैं तो कल्पना भी नहीं कर सकता था। अब तो जितनी देर मैं उस अवस्था या सूक्ष्म शरीर में रहता उतनी देर मुझे चित्त में बड़ी आनन्द-दायी स्थिति रहती थी, जिसके आनन्द के पीछे मुझे इस संसार का प्रत्येक आनन्द भी फीका लगने लगा था मेरी सदा यही इच्छा रहती थी कि ज्यादा से ज्यादा देर तक मैं उस स्थिति में रह सकूं, लेकिन मैंने हर बार पाया कि जैसे ही मन में अपने स्थूल शरीर के प्रति मेरा ध्यान जाता, सूक्ष्म स्वरूप मिट जाता और तुरन्त ही स्थूल में वापिस आ जाता और हर बार इस अवस्था के पश्चात मुझे मेरा शरीर जाम मिलता, जो दो चार मिनट में ही ठीक हो जाता था। इसी प्रकार अनगिनत बार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सूक्ष्म के अनुभव मैंने किये और अब भी चल रहे थे जिनमें कभी-कभी तो बड़े-बड़े ग्रन्थ मेरे सामने आते वे बड़े पुराने कागजों के थे लेकिन मैं उनका एक भी अक्षर कोशिश करने के बावजूद भी नहीं समझ सका। अन्य किसी दिन के अनुभव में मैं किसी मन्दिर में दर्शन करने पहुँच जाता और कभी बड़ी सुन्दर प्रतिमा मेरे समक्ष होती।

इस प्रकार अनन्य अनुभवों को थोड़े-थोड़े से दिनों के अन्तराल पर कर रहा था। मेरा मन इन अनुभवों को पचा नहीं पाता जिसके कारण से बातचीत में किसी न किसी तरह से शब्दों के द्वारा दूसरों के सामने प्रकट हो ही जाते थे। यह मेरे मन की कमजोरी थी शायद इसके ही कारण से बाद में मेरा यह कार्य होना बन्द हो गया, बहुत दिनों तक परेशान रहा कि क्या बात हो गयी ? मैंने तो कभी कोई दुरुपयोग भी नहीं किया लेकिन एक दिन फिर वही सब कार्यक्रम हुआ, उस दिन तो मैं इतना ऊँचा लेटे-लेटे चला गया कि पृथ्वी ही गोले के समान मुझे मेरे नीचे दिखाई देने लगी। फिर वही मन की बात कि कहाँ पृथ्वी और कहाँ मेरा शरीर ? इस अपने शरीर का ख्याल आते ही प्राण सुषमणा से इड़ा पिंघला में उतर आए और मैं सामान्य हो गया।

हाँ एक बात और जैसे ही मेरी आँखें खुलतीं और अपने पड़े हुये शरीर पर ध्यान जाता तो दो बातें हमेशा एक सी अवस्था में पाता था। पहली यह कि **मन में काम वासना न होने पर भी मैं अपनी कामइन्द्रिय को सूक्ष्म से स्थूल में प्रवेश करते ही उत्तेजित अवस्था में पाता था तथा दूसरे मेरा स्थूल शरीर हर बार मुझे जाम हुआ मिलता था।**

उसके बाद भी कुछ महिनों तक कभी लगातार कभी रुक-रुककर, कभी हल्के, कभी भारी अनुभव होते रहे, लेकिन बीच-बीच में कुछ बाधायें आ जाती थीं, जब भी कोई थोड़ी सी भी नई बात मेरे समक्ष आती किसी न किसी प्रकार से वह मेरे ही द्वारा मुँह से बाहर निकल जाती। जिसकी वजह से ही शायद मेरा मन उसके अहम् से भर जाता, क्योंकि जो नई बात जिस किसी को भी बताता था वह उससे प्रभावित हुये बगैर नहीं रह सकता था, जिसकी पलट मेरे ही मन पर होती थी। मन पर जब तक वह प्रभाव रहता था, कम से कम तब तक तो वह कार्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बन्द ही रहता था, बाद में जब मैं निर्मल मन होता तब वह फिर से होने लगता।

मेरे सामने बड़ी मुश्किल यह थी कि इस समाज में रहकर दिनभर मैं सैकड़ों लोगों से मिलता कहीं न कहीं, किसी न किसी तरह से सत्संग छिड़ ही जाता और फिर वे बातें स्वतः ही बाहर निकलने लगतीं और यह जानते हुए भी कि फिर परेशानी होगी लेकिन मैं तो सदा असफल ही रहा। हालांकि मैंने बहुत अच्छी तरह से यह भी पढ़ रखा था कि इन बातों को प्रकृति का रहस्य समझकर प्रगट नहीं करना चाहिए, अन्यथा इन शक्तियों के खोये जाने की ही सम्भावना होती है। इस प्रकार के अनुभव होने के पश्चात मेरे मस्तिष्क में इस आध्यात्म के बारे में जितने भी संशय वे सब समाप्त ही हो गये क्योंकि मैंने स्वयं अपने शरीर से बाहर निकल कर कितनी ही बार देख लिया था और इसकी वजह से ही हमारे भारतीय-संस्कृति के जितने भी स्तम्भ हैं मेरे सामने स्वतः ही स्पष्ट हो चुके थे उनमें चाहे पुनर्जन्म का सिद्धान्त हो या मरने के पश्चात वे अन्य किसी प्रकार की योनियों में जीव के विद्यमान रहने का।

लेकिन एक शंका अवश्य उन दिनों मुझे रही थी, कि जब कुण्डलिनी जागृत अवस्था में है नाना प्रकार से मुझे देवताओं के भी दर्शन हो चुके हैं अपने शरीर से निकल कर कभी बहुत दूर ऊसर तक यात्रा की है तो कभी तेजी के साथ वहीं लेटे-लेटे उस तख्त में से नीचे पार होकर जमीन के अन्दर भी समा गया, इसके साथ-साथ ध्यान की परिपक्व अवस्था में आई हुई बातें आज भी सत्य निकलती हैं लेकिन मैं न तो किसी भी अन्य दूसरे सूक्ष्म शरीर को देख सकता हूँ और न ही किसी दूसरी आत्मा से सम्पर्क साध सका हूँ, इसके जबाब में मैंने अब अपने मन में विचार किया तब उन दिनो मेरे मन में से दो उत्तर उभरे थे। एक तो यह कि अभी मैं गृहस्थी हूँ और दूसरी आत्माओं से अगर सम्पर्क साधा गया तो वे मेरे गृहस्थ में उपद्रव ही करेंगी। शायद इस भावना की वजह से ही उन अनुभवों के दौरान दूसरी आत्माओं से उस समय में दूर ही रहा होऊँगा, दूसरा कारण शायद यह था कि अपनी साधना के लिए शुरू से आखिर तक में दो घण्टे से ज्यादा कभी भी समय नहीं दे पाता था। जब ये बातें मेरे समझ आयीं तो इन दोनों बातों में गृहस्थी एक ऐसी कड़ी थी कि मुझे अपनी साधना को आगे बढ़ाने में बाधक बन

For Private And Personal Use Only

(श्रृंगेरी के जगद्गुरु शंकराचार्य जी के साथ लेखक योग विषय पर वार्तालाप में लीन)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रही थी।

कितनी ही बार इस व्यवस्था पर उलट-पलट कर सोचा लेकिन इसका कोई भी उपाय मैं आज तक नहीं सोच सका हूँ, क्योंकि गृहस्थ को छोड़कर साधना करके फल प्राप्त करने वाले इस दुनियाँ में बहुत हैं, उनकी कोई कमी नहीं है और यह भी ठीक है साधक को एक ऐसा समय आता है जब उसे इन सांसारिक संबंधों के प्रति विरक्ति उस अथाह आध्यात्मिक खजाने की तुलना में आ जाती है, लेकिन इस संसार को त्याग करना व्यर्थ ही होगा क्योंकि बिना इस संसार का आधार बनाये अन्य सांसारिक मानवों का भला भी नहीं किया जा सकता है और इसी कारण से कालान्तर में भारत बाकी और संसार से पिछड़ गया क्योंकि जो इन शक्तियों की साधना में लग जाता था वह तो समाज छोड़ देता था, समाज के लिए जो कुछ कर सकते थे वे तो उन अनुभवों में खोकर समाज को तिलांजलि देकर चले गये थे और उनके जाने के बाद तो यहाँ बची थी केवल कीचड़।

कुछ दिनों बाद मेरे समक्ष कुछ नई बातें घटित हुयीं। इन आठ-दस महीनों के दौरान मैं बड़ी जल्दी-जल्दी बुखार से पीड़ित रहा तथा इन्हीं महीनों में मेरे सिर में तथा दाड़ी के बालों में सफेद बालों की अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई तथा छाती में भी दर्द रहने लगा। जब इन बातों की गहराई में गया तो याद आया, सूक्ष्म के अनुभवों के पश्चात् शरीर के जाम हो जाने के पीछे क्या कारण थे; क्योंकि जब में शरीर में ही नहीं था उस समय यह शरीर मर ही तो गया था उसमें कुछ न कुछ तो कमी अवश्य हो ही जानी थी, इसमें आश्चर्य की भी क्या बात है; कुछ लोगों को यहाँ यह शंका उठ सकती है यदि जब एक बार हृदय की धड़कनें बन्द हो गयीं तब दुबारा से उनको चलाना किस प्रकार से संभव हो सकता है।

ठीक यही शंका मेरे सामने पिछले दिनों जब मैंने एक योग साधना शिविर का आयोजन किया था उसकी प्रवचन शृंखला के दौरान एक ट्रेनिंग करने वाले डाक्टर ने उठाई थी तब मैंने उससे यही कहा था, कि इतना तो आप भी जानते हैं, कि हृदय की चार धड़कनों में कभी-कभी एक धड़कन गायब हो जाती है जब आदमी अपने हृदय की धड़कनों की लगातार कड़ियों में से एक कड़ी के टूटने के पश्चात् जिन्दा रह सकता है, अपने जीने की ललक के कारण या अपनी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इच्छा शक्ति के कारण इसी प्रकार से वह धड़कनों की उस लगातार कड़ी के ज्यादा देर तक टूटे रहने के पश्चात् क्यों नहीं जीवित रह सकता ? यह ठीक है लोहे की जंजीर की एक कड़ी यदि टूट जाती है तो वह फिर से एक न होकर दो हो जाती हैं, जिसके कारण अब दूसरी जंजीर का सम्पर्क हमेशा के लिए पहले से टूट जाता है, उसी प्रकार हृदय का संबंध भी जीवन से टूट जाना चाहिए था **लेकिन एक धड़कन के बीच में से गायब होने के पश्चात भी वह जीवित रहता है तो फिर वह उस शृंखला में से और ज्यादा धड़कनों के गायब होने के बाद भी उसके जीवित रहने को हम असंभव की श्रेणी में कैसे मान सकते हैं और यही है हमारी इच्छा शक्ति का कमाल, जिसके कारण हम मर कर भी जीवित हो जाते हैं।**

जब इन्सान हवाई जहाज से पैराशूट लेकर कूदता है और जब तक उसका पैराशूट नहीं खुलता है जिसके कारण वह पृथ्वी की तरफ लोहे के गोले की तरह से गिरता है तो पता है कितनी धड़कनें उसके हृदय की गायब हो जाती हैं लेकिन इच्छा शक्ति ही है जो उसे जिन्दा रखती है। ठीक वही इच्छा शक्ति जो हमें यहाँ इस जीवन में लाई है और यही इच्छा शक्ति इस शरीर में हमें जब तक बनाये रखती है तब तक कि शरीर बिलकुल ही हमारे ठहरने लायक नहीं रह जाता है।

आजकल तो विज्ञान ने भी प्रयोग करके यह जान ही लिया है कि हृदय के बन्द हो जाने को ही मृत्यु नहीं मान लिया जाना चाहिये जब कि मृत्यु तो तब मानी जाती है जब मस्तिष्क की कार्य विधि काम करना बन्द कर देती है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि कुण्डलिनी जागरण के समय हमारी शारीरिक गतिविधियाँ और यहां तक कि इडा पिंघला से संचालित यह हृदय भी बन्द हो जाता है लेकिन हमारा मष्तिक जो कि सुषमणा के द्वारा चैतन्य रहता है हमारी समाधिस्त अवस्था से होश में आने के बाद दुबारा जीवित होने का कारण बनता है।

इसी बात को ठीक से समझने के लिए हमें प्रार्थना का अनुभव स्वयं ही करना होगा क्योंकि बिना अनुभव स्वयं के किये, आपको कोई कितना ही समझा दे, तोते की तरह भी आपको पाठ रटाया जावे लेकिन आपके भीतर उतरेगा ही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं। इसके साथ ही एक बात और, जिस व्यक्ति ने कुण्डलिनी जागरण करके सुषमणा में प्राणों को प्रवेश कराने के अनुभव स्वयं कर लिये हैं, वही व्यक्ति आगे और कुछ संभावनाओं को घटित करने का अधिकारी रह जाता है क्योंकि इस प्रकार के व्यक्तियों के चित्त तमाम शंकाओं से निर्मल हो जाते हैं और निर्मल चित्त ही तो मुक्ति का अधिकारी होता है तो ध्यान रखना, प्रार्थना का अनुभव ही हमें मुक्ति का मार्ग दिखा सकता है, इस अनुभव के बिना हमें मुक्ति की बात को समझना ही मुश्किल होता है इसलिये ध्यान रखें और ध्यान करके ही ध्यान करें।

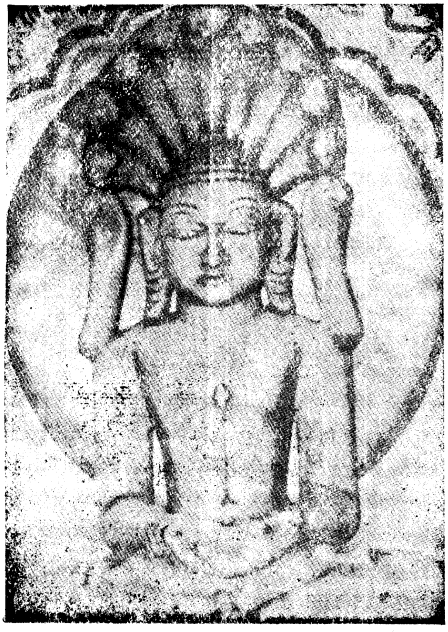

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १४

समप्रज्ञात के चार भेदों के बाद असमप्रज्ञात की झलक

यदि आपके हाथों में छोटे-छोटे बच्चों को गिनती सिखाने वाली या पहाड़ा सिखाने वाली वह छोटी सी पुस्तक दे दी जाये और कहा जाये कि इसमें इकाई से लेकर "दस शंख" तक की गिनतियों का उल्लेख है, क्या ? आपने अपने जीवन में इतनी गिनतियां पढ़ी हैं ? या एक से लेकर दस शंख तक की गिनतियाँ अपने हाथ से लिखी हैं ? इसके उत्तर में आप सीधा सा उत्तर देंगे, 'अरब, खरब या शंख तक गिनती जानने के लिए स्वयं अपने हाथ से उतनी गिनती लिखना कतई जरूरी नहीं है। जब मैंने हजार तक गिनती लिख लीं, पढ़ लीं और जान लीं हैं तो फिर आगे की गिनती न होने की शंका ही मन में नहीं उठती, क्योंकि जब हजार तक मौजूद हैं तो उससे आगे भी गिनती उसी तरह होंगी ही जिस तरह से यहाँ तक हमारे सामने विद्यमान हैं।

मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि मैंने दस शंख तक की गिनती को अपने हाथ से नहीं लिखा है और न ही मैं कोई गणितज्ञ ही हूँ और इसके साथ ही कोई इस गिनती में अलग से कोई नई व्याख्या भी मैंने नहीं निकाली है। कुछ जाना है तो बस इतना ही जाना है कि पहाड़े की पुस्तक की सत्यता को ही जाना है। उस पुस्तक के द्वारा हम किस तरह से सवालों को हल कर सकते हैं ? इसके अतिरिक्त इस बात को मैं इस तरह से भी कह सकता हूँ कि बिना पढ़े लिखे लोग जो कि पहाड़े की पुस्तक को अपने लिए काम की नहीं समझते हैं और विद्या-माता का स्मरण करके परमात्मा का नाम लेकर अपने घर में केवल पूजा के लिये

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काम में लाते हैं मेरे सामने उसका रहस्य खुल गया है, मेरे देखते वह पुस्तक शुरूआत करने के लिए बड़े काम की है। यह ठीक है कि बाद में इसकी कोई खास जरूरत नहीं पड़ती लेकिन फिर भी उसका महत्व जिन्दगी भर बना रहता है।

केवल इतनी सी बात में आपके सामने आध्यात्म के इस सोपान को लिखते समय रख रहा हूँ और डरते-डरते भी क्योंकि कुछ देर तक तो मैं या मेरे अनुभव इसमें साथ चलेंगे। जहां तक मैंने गिनती पढ़ी हैं। बाद में तो मैं भी आपको वही बताना चाहूँगा जो कि मैंने इस प्रकार की पुस्तकों का स्वाध्याय करके जाना है, क्योंकि जिस प्रकार एक डाक्टर सम्पूर्ण शरीर में विशेष प्रकार से दक्ष नहीं हो सकता या वह किसी अंग विशेष में ही विशेषज्ञ हो सकता है। शेष अंगों की जानकारी का तो उसे अपनी शिक्षा या स्वाध्याय के द्वारा ही पता चलता है जिस कारण से शरीर के अन्य अंग-प्रत्यंगों की जानकारी में कहीं अटकाव उसे नहीं आता ठीक उसी प्रकार इन अध्यायों में लिखे अपने अनुभवों के बाद मेरे मन में भी किसी प्रकार की भटकन, अटकाव या शंका आगे के सोपानों के बारे में नहीं है।

अब जैसे मैंने स्वयं के स्थूल शरीर में ही सूक्ष्म शरीर को भी जाना है तब यह बात भी अपने आप ही मैं जान जाता हूँ कि आपके दिखाई देने वाले इस स्थूल शरीर के अन्दर भी बिना दिखाई देने वाला सूक्ष्म शरीर अवश्य ही होगा क्योंकि जिस क्रिया के फलतः मैं इस दुनियां में आया हूँ ठीक उसी प्रकार की, बिलकुल वैसी ही परिस्थितियों में ही तो इस दुनियां में आपका शरीर जन्मा है, फिर क्यों न हो ठीक मेरे सूक्ष्म शरीर जैसा आपका, यदि कुछ बदलाव हो सकता है तो वह मन के स्तर पर हो सकता है, चित्त के स्तर पर हो सकता है लेकिन उसके स्वरूप के स्तर पर नहीं हो सकता। जैसे अलग-अलग गायों का दूध गाढ़ा या पतला हो सकता है लेकिन यह नहीं हो सकता कि एक गाय का दूध तो दूध हो जबकि दूसरी गाय का दूध, दूध न होकर शहद हो जावे। इतना अनुभव हो जाने के पश्चात व्यक्ति की यह शंका भी स्वतः ही निर्मूल हो जाती है जो कि बड़ी से बड़ी शंका के रूप में हमारे मन को हमेशा घेरे रहती है कि अगला जन्म होगा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

या नहीं। इस शंका को समझने के लिये भी यही अनुभव फिर हमें रास्ता दिखाता है।

कुण्डलिनि शक्ति इड़ा-पिंघला से निकलकर सुषमणा में मुक्त त्रिवेणी के स्थान से मेरूदण्ड के भीतर होकर जब सहस्त्रार तक पहुँचती है तब तक हमारे शरीर में विशेष सन्नाहट जो कि आनन्ददायी भी है होती रहती है लेकिन जैसे ही वह ब्रह्मरन्ध्र के द्वारा बाहर निकलती है। हमारे शरीर की सन्नाहट जो कि प्राणों की ही सन्नाहट थी, वह बन्द हो जाती है तथा हम स्थूल से सूक्ष्म पर आ जाते हैं। जिसके द्वारा पहली बार हमें पता चलता है कि हमारे में हमारी बुद्धि और कल्पना की शक्ति मन के अतिरिक्त प्राण भी है जो कि इस शरीर में

ब्रह्मरन्ध्र = मस्तिष्क में ऊपर हमारे कपाल में एक रन्ध्र या छेद होना हमारे ग्रन्थों में लिखा है जिस रास्ते से हमारा सूक्ष्म शरीर इस स्थूल शरीर से बाहर आता या जाता है। योग में कपाल भेदन क्रिया भी इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये की जाती है।

से आते और जाते हैं उनको इस प्रकार के जानते ही हम उस आशंका के भय से मुक्त हो जाते हैं जिसमें कहा जाता है कि प्राण अलग से कुछ नहीं है, न तो कहीं से कोई आता है और न ही कहीं से कोई जाता है बस मृत और जीवित अवस्था में फर्क यदि कुछ है तो वह केवल इतना है कि इस शरीर के मुख्य अवयवों ने कार्य करना छोड़ दिया है इनका आपस में एक दूसरे से सम्पर्क हट गया है इसलिए यह शरीर अब क्रियाशील नहीं रह सकता है **जबकि प्राणों का अनुभव आते ही हमें इस गलत वक्तव्य की गलती का पता चल जाता है।**

तब वह इसे दूसरी तरह से समझता है, अगर सारे के सारे अवयव ठीक भी हों तब भी बिना प्राणों के चैतन्यता आ ही नहीं सकती और प्राणों के रहते बिलकुल जरा जीर्ण अवस्था में भी अथवा इस प्रकार की अवस्था में भी जिसमें मैडीकल साइन्स वाले यह कह कर आश्चर्य व्यक्त करें कि फलां व्यक्ति अब तक जीवित कैसे है ? उसका सारा शरीर साथ छोड़ गया, हाथ-पांव सुन्न पड़े हैं हृदय भी ठीक से काम नहीं कर रहा, आक्सीजन चल रही है लेकिन आँखें खुली हुयी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं यह ठीक है कि उसका शरीर अब अधिक देर तक प्राणों को झेलने की क्षमता नहीं रखता है लेकिन वह जीवित रहता है। अपने इकलौते बेटे की सूरत उसकी आँखों के सामने आती है और वह शरीर त्याग देता है। जिसे उसने अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा अपने प्राणों को शरीर से बाहर निकलने से इच्छानुसार रोके रखा था।

तो ध्यान रखना, इस शरीर में प्राण भी अलग से रहते हैं। ठीक उसी प्रकार—जैसे बुद्धि तथा मन रहते हैं। प्राणों का अलग से परिचय होने के पश्चात ही हम जान जाते हैं कि निश्चित रूप से हमारे प्राण जब यहां इस शरीर से बाहर निकल सकते हैं तब दूसरी अनुकूल स्थिति पैदा होते ही किसी दूसरे अन्य शरीर के अन्दर समा भी सकते हैं। इसके साथ ही हमारी बुद्धि की यह शंका भी निर्मूल हो जाती है कि हमारा पुर्नजन्म नहीं होता। इसी प्रकार से हमारे जन्म मरण के बारे में जितने भी तर्क कुतर्क इस वैज्ञानिक युग में हमारे मन में उठते हैं उनको हम अपनी चेतना के स्तर पर अनुभव करके उनका हल, अपने अन्दर ही प्राप्त कर लेते हैं जिसकी वजह से तर्क से हटकर कुतर्क में नही फँसते बल्कि हम वितर्क की स्थिति में आ जाते हैं। तर्क के कुतर्क में फँसने का मतलब है एक प्रश्न तो गिरा लेकिन दूसरा खड़ा हो गया दूसरे के गिरने के बाद तीसरा आकर खड़ा हो गया लेकिन वितर्क का मतलब होता है समाधान।

इसको जरा और गहरे से समझें जैसे कोई एक कहे कि गुलाब में बड़ी भीनी, बड़ी मोहक सुगन्ध होती है जबकि दूसरा कहे कि गुलाब में बड़े नुकीले काँटे होते हैं। अब दोनों आपस में तर्क कुतर्क करेंगे, इनमें एक आशावादी है जो फूलों की सुगन्ध की कह रहा है, दूसरा निराशावादी है जो काँटे ही देख रहा है, दोनों अपने-अपने पक्षों को दर्शाने के लिए तर्क पेश करेंगे। अन्तर दोनों में कुछ भी नहीं है, दोनों सिक्के के ऊपर नीचे के पहलुओं पर लड़ रहे हैं, ये दोनों असली गुलाब को कभी नहीं समझेंगे। जब ये दोनों तर्क से परे हो जावेंगे यानि वितर्क की स्थिति में आयेंगे (वितर्क=बिना तर्क) तब ही ये काँटों एवं सुगन्ध को भी गुलाब का ही रूप मानेंगे। जब इनको ये दोनों स्थितियां मान्य हो जावेंगी तब ही वे असली गुलाब की मुलायम-मुलायम पंखुड़ियों पर पहुँच सकेंगे। यही तरीका होगा विधायक के रूप में सोचने का और यही स्थिति है वितर्क की। समाधि अवस्था पहली

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बार इस प्रकार से वितर्कानुगत् की अवस्था में हमारे समक्ष स्पष्ट होती है।

जब हमारे सारे के सारे तर्क, शंकायें गिर जाती हैं तब ही हमारा विचार शुद्धतम रूप में हमारे समक्ष व्यवस्थित होता है। उससे पहले भटकाव होगा, हमारे विचारों में स्थिरता नहीं आवेगी हमारा अपना साहित्य नहीं होगा, हमारे विचारों में कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा होगा हमारा अपना दर्शन नहीं होगा इसलिए प्रकृति के बारे में हम इन बुनियादी बातों को जानकर ही हम अपने विचारों को स्थिर कर सकते हैं और तब यह हमारे सामने दूसरी बार विचारानुगत् की अवस्था में हमारे समक्ष स्पष्ट होती है।

इसी की अगली कड़ी है, जब हमारे विचारों में ठहराव आ जाता है। मस्तिष्क की भटकन समाप्त हो जाती है, जिसकी वजह से हम हमारे शारीरिक सुख-दुख का विशेष आग्रह नहीं रखते जो कि आनन्द का कारण बनता है, क्योंकि जब ही हमें पता चलता है कि सुख-दुख हमारे शरीर के स्तर पर घटित होते हैं न कि चेतना के स्तर पर। हमारे भीतर हमारी चेतना न तो दुख महसूस करती है और न ही सुख। न वह सोती है, न वह जागती है, न उसे भूख लगती है और न ही उसे रोग होता है, क्योंकि वह चेतना तो सदा स्वस्थ तथा चैतन्य रहती है। ये सारे के सारे अनुभव हमें केवल इस शरीर के स्तर पर ही घटित होते हैं, इस बात को जानकर ही हम सुख-दुख से परे हो जाते हैं, हम इनको इतना महत्व ही नहीं दे पाते हैं जिस समय हमारी यह स्थिति आती है ठीक उसी समय हम आनन्द से भर उठते हैं क्योंकि आनन्द एक स्थिति नहीं बल्कि वह एक प्रकार का स्वभाव है हमारे चित्त का। जब वह चित्त सुख और दुख के प्रभाव से मुक्त हो जाता है तब वहाँ केवल आनन्द ही बचता है। लेकिन होगा यह तब ही, जब हम प्राणों का अनुभव प्राप्त कर लेंगे और इसी अवस्था में हमारा चित्त आनन्द के अनुगत या आनन्दानुगत् समाधि के स्वरूप को जान पाता है।

प्राणों के अनुभव प्राप्त करने के पश्चात् ही हम समझते हैं उस अवस्था को, जिसको आधार बनाकर प्राण यात्रा करते हैं। यहाँ यह समझ लें प्राण बीज नहीं है किसी पौधे का बल्कि प्राण तो वह शक्ति है जिसके द्वारा बीज चैतन्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिखाई पड़ता है। अगर प्राण नहीं रहें तो वह बीज स्वरूप ही पड़ा रहेगा अनन्य युगों तक इस प्रकृति में इसलिये मुख्य चीज प्राण नहीं है बल्कि मुख्य तो वह बीज है जो कि प्राणों के सहारे से अंकुरित होता है। प्राण तो इस प्रकृत्ति से मिलते हैं बीज को। प्राणों का भी स्वरूप स्थूल ही है जब कि वह बीज या हमारी अस्मिता जो भी नाम हम उसे अपनी भाषा में दें उसका ही स्वरूप सूक्ष्म है बाकी उससे पहिले जितने भी स्वरूप हमने जाने हैं, कम और ज्यादा, स्थूल ही हैं। जैसे एक रेखा जिसका कि नाम "अ" "ब" है और उसका "अ" किनारा सूक्ष्म है और "ब' स्थूल रूप। "अ" से "ब" तक ही सारी की सारी व्यवस्थायें इस प्रकृति की हैं। "अ" यदि हमारी अस्मिता का स्त्रोत है तो "ब" विकसित हुये हाड़-मांस के शरीर का भौतिक स्वरूप।

इस प्रकार वितर्क, विचार एवं आनन्द की अनुभूतियों को जान लेने के पश्चात् समप्रज्ञात की चौथी एवं आखिरी कड़ी हम अपनी अस्मिता की अनुभूति को जान जाते हैं। इसी कारण से इस अवस्था में इसका नाम अस्मितानुगत समाधि कहा गया है।

कहने का तात्पर्य है कि राजयोग की इस प्रक्रिया में जिसमें कुण्डलिनि शक्ति को इड़ा-पिंघला से निकालकर सुषमणा में पहुँचाते हैं, इस साधन के द्वारा ही हम जानते हैं अपने स्वयं की शक्ति के स्त्रोत को जिसे हम अपनी प्रज्ञा कहते हैं। यहां एक बात और बड़े ध्यान रखने की है कि जब तक हमारी अपनी प्रज्ञा मौजूद है, हमारा अलग अस्तित्व भी मौजूद रहता है एक बूँद के समान, उस महासागर से अलग और चूँकि इस प्रकृति के महास्त्रोत से हम अलग हैं तब तक हम अधूरे ही रहेंगे, हमारी सीमायें रहेंगी, जिसकी वजह से हम असीमित नहीं हो सकते और जब तक हम सीमित हैं तब तक हमारी स्थिति प्रज्ञा में समाहित अथवा समप्रज्ञात की ही स्थिति कहलाती है।

इसके बाद जब हम अपने सूक्ष्म शरीर में अपनी साधना को और आगे बढ़ाते हैं तब हम अपनी प्रज्ञा को तोड़ने में सफल होते हैं तब ही हम प्रज्ञा में सम्मलित होकर नहीं रहते बल्कि प्रज्ञा से भी अलग यानि अपने प्राण, अस्मिता, प्रज्ञा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अथवा अपने बीज से भी अलग आत्म-स्वरूप हो जाते हैं इसी अवस्था को हम निर्बीजस्थ या असमप्रज्ञात समाधि कहते हैं। यह हमारा आत्मस्वरूप है लेकिन हमारी आत्मा नहीं क्योंकि अभी भी आत्मा अपने ऊपर पड़े हुये बिना भोगे हुये कर्मशेषों से प्रभावित है। इसलिए जब तक वह इन के भार से मुक्त नहीं हो जाती तब तक उस उच्च अवस्था को प्राप्त करके भी हम इनके द्वारा फिर से इसी जगत में खींच लिए जाते हैं।

समप्रज्ञात समाधि तक सभी साधक राजयोग के द्वारा थोड़े बहुत अन्तराल के बाद करीब-करीब एक जैसे अनुभव करने लगते हैं। लेकिन यहाँ आकर सबकी साधना एक दम से व्यक्तिगत हो जाती है क्योंकि प्रत्येक मानव के इस दुनियाँ में अपने-अपने कर्मों के अनुसार अलग-अलग भोग भोगने को बचे हुए होते हैं जब तक वे सारे के सारे समूल नष्ट नहीं हो जाते तब तक हम असमप्रज्ञात समाधि की अवस्था के आ जाने के पश्चात भी उस चैतन्य अवस्था में ज्यादा देर तक नहीं ठहर पाते हैं। जिसमें सबसे ज्यादा और सबसे पहले हमारे मन में हमारे देह के प्रति देहाशक्ति ही बाधक बनती है। जिसकी वजह से साधक बार-बार उस परम आनन्द एवं चेतना की सच्ची और अन्तिम अवस्था में पहुँच कर भी लौट आता है जिसके बाद उसका शरीर फिर से सामान्य दिखाई देने लगता है और ऐसा सम्भव है भी क्योंकि समाधि हमारी स्वयं की ही वह साधी हुयी अवस्था है जिसमें हम इस शरीर के बाहर कदम रखते हैं। सुषमणा नाड़ी को आधार बनाकर जब कि मृत्यु के समय हमें शरीर के बाहर निकलना पड़ता है इड़ा और पिंघला नाडियों पर आधारित केन्द्रों के मार्ग द्वारा। समाधि और मृत्यु में यही एक सैद्धान्तिक अन्तर है। जिसकी वजह से समाधि की अवस्था में हम शरीर के बाहर जाकर भी लौट आते हैं जबकि मृत्यु के बाद हमारे शरीर के बाहर निकलते ही लौटने का मार्ग समाप्त हो जाता है। सूक्ष्म यदि सूक्ष्म रास्ते से ही निकलें तो कुछ भी बिगड़ाव नहीं आता लेकिन, यदि सूक्ष्म स्थूल रास्तों से जावेगा तो निश्चित रूप से उसके बाद स्थिति में परिवर्तन आ ही जावेगा। और वह परम निर्वात जिसकी वजह से आकाशी तत्व इस शरीर में खिंचकर आता है विखण्डित हो जाता है। इस शरीर के पाँच तत्वों में से एक तत्व आकाशी तत्व के बाहर हो जाने की वजह से शरीर का कम्पोजीशन टूट जाता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बिना मृत्यु को प्राप्त हुए यदि मृत्यु के बाद की अवस्था का अनुभव हम एक बार प्राप्त कर लेते हैं तो बाद में उस असाधारण अवस्था में टिके रहने का अभ्यास करना हमारे लिए सहज हो जाता है। जिस प्रकार मरने के तुरन्त बाद से ही हमारी आसक्ति हमें इस संसार की तरफ उनकी पूर्ति के लिए खींचती है। ठीक इसी प्रकार असमप्रज्ञात समाधि की अवस्था में शरीर से बाहर निकलते ही हमारी चेतना शरीर में वापिस लौटने को बेताब हो जाती है लेकिन यदि साधक अपने मन या चित्त पर संयम साधने में सफल हो जाता है तो वह ज्यादा देर तक अपना समय इस शरीर के बाहर गुजार सकता है जिसका एक ही फायदा भविष्य में होता है कि वह मृत्यु के बाद अपने मन चाहे गर्भ में उतरने की योग्यता प्राप्त कर लेता है क्योंकि अपने सभी कर्मों को वह वहीं सूक्ष्म रूप में साक्षात् करके अपनी चेतना को निर्मल बना लेता है जो कुछ थोड़े बहुत ऐसे कर्म बचते हैं जिनका सम्बन्ध हमारे साथ की दूसरी चेतनाओं से सम्बन्धित होता है वह केवल उनके ही कारण जन्म लेता है। अन्यथा अपने से सम्बन्धित तमाम कार्मिक संस्कारों पर तो असमप्रज्ञात समाधि की अवस्था में ही विजय पा लेता है।

एक बार असमप्रज्ञात समाधि की अवस्था को अपने अभ्यास के द्वारा सिद्ध कर लेने के पश्चात् साधक को कुछ ही जन्म और लेने पड़ते हैं जिनमें वह अपना बचा खुचा हिसाब-किताब भी इस दुनिया में भोग कर चुकता कर जाता है। इस प्रकार वह जन्म मरण के बन्धनों से मुक्त हो जाता है। यानि अब उसको कोई शक्ति बाध्य नहीं कर सकती वह जब चाहता है केवल तब ही इस धरती पर आता है अपनी इच्छा से बल्कि कहना चाहिए अब तो वह आत्मा इन पृथ्वी वासियों पर करुणा करके ही अवतरित होती है।

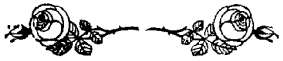

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्याय १५

साकार हमारा चिन्तन-निराकार हमारा मार्ग

इस जन्म और मृत्यु से छुटकारा पाना या मुक्त हो जाना ही असली मुक्ति नहीं है मुक्ति तो तब ही होगी जब तक आत्मा अपने अंशी में जाकर विलीन नहीं हो जाती है केवल तब ही इस संसार से किसी आत्मा का मुक्त हुआ जानना चाहिए। जिस प्रकार इस देह की मृत्यु के बाद देह के पाँचों तत्व प्रकृति में अपने अपने स्थान पर पहुँचकर विलीन हो जाते है और जीव प्रकृति की सीमाओं से मुक्त हो जाता है ठीक इसी प्रकार आत्मा जब तक अपने अंशी जिसमें से वह निकलकर शुरू में आयी थी उसी में जाकर विलीन नहीं हो जाती है तब तक आत्मा की मुक्ति सम्भव नहीं है। उसके अकेलेपन की ऊब उसमें अपने अंशी में मिलने के लिए ललक जगाती रहेंगी और किसी न किसी तरह देर सवेर वह मिल ही जावेगी यह एक शाश्वत सत्य है। जिस प्रकार सागर से भाप बनकर निकली हुई बूंद येन केन प्रकारेण सागर में ही मिल जाती है, ठीक इसी प्रकार उस परमात्मा में से निकली हुई कोई भी आत्मा जब तक उसमें ही जाकर विलीन नहीं हो जाती तब तक उसकी यात्रा समाप्त नहीं हो जाती।

आप कह सकते हैं जब कोई आत्मा उस उच्च स्वरूप को प्राप्त हो जाती है जिसके बाद वह इस संसार में तो उतरती नहीं है फिर वह अपने आगे की यात्रा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के लिए कहाँ और किस प्रकार से साधना करती है। इस बात को समझने के लिए हमें ग्रन्थों में कही गई बातों का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि वैसी अवस्था वाली आत्मा इस पृथ्वी पर ही जब नहीं आती तब उस प्रक्रिया को सिवाय ग्रंथ के द्वारा समझने के और अन्य कोई उपाय हमारे पास नहीं बचता।

वे कहते हैं इस पृथ्वी लोक के अलावा अन्य लोक भी हैं। जिनमें मानव की आत्मा अपने अपने स्तर के हिसाब से रहती है। उनमें से जो निचले स्तर की आत्मायें हैं वे तो इस धरती के आस-पास ही चक्कर लगाया करती हैं क्योंकि उनको तो वहाँ का एकान्त चैन नहीं लेने देता, कोई संगी नहीं, कोई साथी नहीं वहाँ भी कोई मजा है लेकिन जो उच्च आत्मायें होती हैं जिन्होंने सुख और दुख के अतिरिक्त आनन्द का भी स्वाद ले रखा है वे अपने आनन्द में एकान्त को ही ज्यादा पसन्द करती हैं और जैसे-जैसे वे एकान्त में विभोर होती जाती हैं सम्बन्धों के बन्धनों से युक्त इस पृथ्वी से वे अपने आप ही दूर हटती जाती हैं और हमारे ग्रन्थ कहते हैं कि इस पृथ्वी के ऊपर पाँच लोक और भी हैं जिनमें अपने स्तर के अनुसार आत्मायें विराजती हैं छठवाँ लोक भूलोक और सातवाँ इस पृथ्वी के नीचे दुष्ट प्रकार की आत्माओं के लिये है। कहने का तात्पर्य यह है **जितनी-जितनी आत्मा अपने आनन्द में डूबकर आत्मानन्द होती जाती है उतनी-उतनी ही वह इस धरती के प्रभाव से मुक्त भी होती जाती है उसका एकान्त उतना ही सघन होता जाता है** और जितना उसका एकान्त सघन होता जाता है उतनी ही उसकी वहाँ ठहरने की क्षमता भी बढ़ती जाती है **उसकी वहां ठहरने की क्षमता ही उसकी साधना का स्वरूप बन जाती है।**

अब उसको इस संसार का कोई भी स्वरूप अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पाता। शुरु में पृथ्वीवासियों के कष्टों को देखकर उनको रास्ता बतानें के लिए या उनके बोझों को उतारने के लिये भले ही वह अवतरित हो जाये, (यदा-यदा धर्मस्य ग्लानि भवति, गीता) लेकिन बाद में वह करुणावश भी इस संसार की माया में नहीं फंसती है, वह पूर्ण रूपेण इस तरफ से पीठ मोड़ लेती है। धीरे-धीरे वह इस संसार की माया से इतनी दूर पहुँच जाती है, कि उस पर माया रूपी नशें का कोई भी प्रकार अपना प्रभाव नहीं डाल पाता, तब वह शुद्ध आत्मा परम चैतन्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वरूप होकर परम आनन्द की स्थिति को प्राप्त करके परम-आत्माओं के समूह मे जा मिलती है जिसकी वजह से वह स्वयं भी परमात्मा हो ही जाती है।

अन्त में मैं आत्मा के इस संसार से मुक्ति की बात लिखकर कुछ जिज्ञासुओं की शंकाओं का निवारण और करना चाहता हूँ। कुछ लोग यह कहते हैं कि हम तो संसार में मस्त हैं, क्यों हम इस सुन्दर संसार को छोड़ें, जिसमें आने को देवता भी तरसते हुए बतलाये जाते हैं अथवा क्यों हम अपना अस्तित्व मिटायें।

अभी पिछले दिनों मैं एक विदेशी ईसाई के संस्मरण पढ़ रहा था जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने अपनी जिन्दगी में साठ से ऊपर शादियाँ कीं, वह इतना अधिक खूबसूरत था कि लड़कियाँ उसके ऊपर जान लुटाती थीं उसे अपने समय का कामदेव का अवतार माना जाना चाहिये, उसे अपनी नई दुल्हन के लिये कोई खास मेहनत नहीं करनी पड़ती थी, अपने सामने सजे हुऐ सुन्दर-सुन्दर फूलों के ढेर में से अपनी पसन्द का फूल जिसे वह अपने पिछले अनुभवों के अनुसार सबसे सुन्दर समझता था, बस चुन लेता था। इतना ही श्रम करना पड़ता था उसे अपनी नई दुल्हन चुनने के लिये। ऐसे ही एक बार जब वह अपनी नई नवेली दुल्हन के साथ चर्च से शादी करके सीढ़ियाँ उतर रहा था। उसके हाथ में अपनी दुल्हन का हाथ था आठ-दस सीढ़ियाँ ही उतरना अब शेष था। वह क्या देखता है चार सफेद दूध जैसे घोड़ों से जुती हुई बग्घी आकर रुकी है, उसमें से एक बहुत ही सुन्दर नवयौवना उतर रही हैं और जैसे ही उस बग्घी वाली रूपसी से उसकी निगाहें मिलती है बस वह ठिठककर वहीं खड़ा रह जाता है, वह तुरन्त उसकी तरफ बढ़ने को होता है तो उसका हाथ नई दुल्हन के हाथ में होने के वजह से बाधा पड़ती है। तब उसे ख्याल आया कि अरे! अभी तो मैंने इस बेचारी के साथ सुहागरात भी नहीं मनाई, और मैं उस अनजान युवती से शादी का प्रस्ताव करने चल पड़ा?

ठीक इसी प्रकार के अनुभव हमें भी अपनी जिन्दगी मैं किसी न किसी प्रकार से मिलते ही रहते हैं जिनकी बजह से हम कह उठते हैं कि आज आया है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिन्दगी का सम्पूर्ण आनन्द ! अब तक तो वैसे ही जिये थे या शायद आज का यह आनन्द भी भोगना था, इसलिये ही जिन्दगी यहाँ तक इतनी खिंच आयी थी, आज ऐसा लग रहा है जैसे कि हमारा इस पृथ्वी पर जन्म लेने का मकसद पूरा हो गया। लेकिन हम अपनी जिन्दगी में देखते हैं कि पिछली बातों को कहे हुए अभी कुछ ही समय बीता होता है कि फिर से हम उन्हीं बातों को टेपरिकार्ड की तरह दोहराते चले जाते हैं। लेकिन जब हम इस प्रकार की बातों पर गौर करते हैं तो पाते हैं कि आज जो मिला है क्या यह ही ज्यादा आनन्ददायक है पिछला इतना आनन्द दायक नहीं था ? लेकिन आगे जब हमें और मिलेगा तब यह आज का मसाला उस दिन आनन्ददायक नहीं रहेगा और बस **यही एक कारण है इस संसार के फूलों में से विचरते हुऐ भी हमें एक कमी का आभास होता रहता है। हम चाहते हैं कि आनन्द स्थाई रहे जबकि वह एक तो मिलता ही मुश्किल से है जिसके बदले हम अपनी जिन्दगी की पूरी चाह भी लगा देते है, और फिर जब हमारे देखते-देखते हम से वे आनन्ददायक घड़ियाँ विदा होती है तो निश्चय रूप से इस जगत की नश्वरता को हम पहचान ही जाते है।** बुद्ध भी अपने घर राजमहल में मस्त ही तो थे। नई पत्नी, नया शरीर, हर तरफ उनका ही तो साम्राज्य था। शुरू में वे यही समझे थे कि यह आनन्द सदा ऐसे ही रहने वाला है लेकिन वे इसकी नश्वरता का पता लगाकर ही शाश्वत आनन्द की खोज में निकल सके थे।

ध्यान रखना अभी जिनके ज्ञान चक्षु नहीं खुले हैं केवल वे ही इस नश्वर दुनिया में अंधे होकर रह सकते हैं। उनको अभी उस शाश्वत की प्यास ही नहीं जगी है। इसलिये उनको शंका तो कोई शंका ही नहीं है। मैं ऐसे लोगों के लिए तो परमात्मा से प्रार्थना ही करूँगा कि हे प्रभो, इन्हें थोड़ा सा अपने सुख का **मजा अभी और चखाओ, थोड़ी देर के लिए ही सही।** इनको अभी थोड़ा सा अपनी **माया का मोह और दिखाओं ?** जिससे यह इतने ज्यादा आनन्दित हो जायें कि उसके **अलावा इन्हें और कुछ दिखाई ही न दे।** ऐसी प्रार्थना करके मैं इस प्रकार के लोगों के प्रति **कोई वैर भाव नहीं प्रदर्शित** कर रहा हूँ। बल्कि मैं तो जितना जानता हूँ **उसके अनुसार मैं ऐसा उनके भले की ही सोचकर कह रहा हूँ।** क्योंकि माया का **एक निश्चित सिद्धान्त है** कि वह सदा एक जैसी नहीं रहती। उसका स्वभाव सदा **परिवर्तन शील रहता है।** इसी वजह से समझदार लोग अपने बुरे दिनों में अपने **आपको यह कहकर संयत रखते हैं कि जब** वे दिन नहीं रहे तो ये दिन भी नहीं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रहेंगे, कितने विश्वास के साथ माया के बदलाव को यह एक ही लाईन में प्रस्तुत करे दे रही है। इसका मतलब यह है कि दिन बदलते हैं दिन के साथ उसका स्वरूप बदलता है और यह बदलाव हमेशा हमारे जीवन में क्रान्ति लाता है।

बुद्ध की आँखें खुलीं उसके बूढ़े सारथी के यथार्थ कहने के पश्चात्, तुलसीदास की आँखें खुलीं उसकी पत्नी के तीखे लेकिन सत्य कटाक्ष वचनों के बाद, सूरदास को ज्ञान उपलब्ध हुआ जब कुंवारी लड़की ने ये कहा कि ये स्तन तो बिल्कुल वैसे ही हैं जैसे प्रत्येक माँ के होते हैं, और न जाने कितने ही माया से अंधें लोगों के चक्षु खुले हैं उनके सामने यथार्थ के उघड़ जाने के पश्चात्।

इसलिये मैं ऐसे लोगों से केवल इतना ही कहूँगा कि एक रास्ता तो यह है, कि वे अभी और भोगें, इस संसार में रची, बसी माया का आनन्द अल्कि और ज्यादा तन्मयता से भोगें, जब आप भोगेंगे इस संसार को, तो ध्यान रखना यह संसार नहीं भुगतता बल्कि हम स्वयं ही भुगत जाते हैं। तब हमारी आँखें अपने आप खुल जाती हैं। उससे पहले तो आप नशें में रहते हैं, जब तक नशा रहता है आपको, तब तक बदलाव नहीं आ सकता लेकिन नशे के टूटते ही हम दुःखी हो जाते हैं। जैसे हमने पहले रंगीन चश्मा पहन रखा था। हम जो देखते थे सारा नजारा रंगीन ही दिखाई देता था, बड़ा आनन्द था लेकिन चश्मे के उतरते ही तमाम रंग गायब हो जाते हैं, तब हम आनन्द के विपरीत विषाद से भर जाते हैं, जितने गहरे नशे में हम होते है उतने ही ज्यादा आनन्दित भी होते हैं लेकिन जब वह गहरा नशा टूटता है तब हमको प्राप्त होने वाला विषाद भी ज्यादा गहरा ही होता है और जितना ज्यादा गहरा विशाद होगा उतना ही ज्यादा बदलाव भी होगा और जितना ज्यादा गहरा बदलाव आयेगा हमारे समक्ष क्रान्ति भी उतनी ही बड़ी हमारे जीवन में घटित होगी तब हम यथार्थ के धरातल पर अपने आपको खड़े पायेंगे और चौंकेंगे भी कि अभी तक हम कहाँ थे और अब इतनी सी देर बाद हम कहाँ आ गये हैं, तो ऐसे लोग जो अभी यह कहते है कि बेकार में हम ध्यान के, समाधि के या मुक्ति के झमेले में क्यों पड़ें, उनके लिये तो मेरा बस इतना ही कहना है कि अभी वे इस बीमारी से दूर रहें, इस झंझट से दूर रहें। जितना ज्यादा दूर इन झंझटों के विपरीत आप जायेंगे। गोल घेरे के नियमानुसार उतना ही आप इसके नजदीक पहुँच जावेंगे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसी संदर्भ में एक कथा मुझे याद आ रही है। एक व्यापारी दो ऊँटों पर सामान लादकर शहर की तरफ बेचने को ले जा रहा था। उन दोनों ऊँटों में से एक ऊँट तो रास्ते में आने वाले पेड़ों की पत्तियों को खाता हुआ चल रहा था। जबकि दूसरा ऊँट अपने मुंह को बिल्कुल बन्द करके चुपचाप चला जा रहा था। पहले वाले ऊंट ने जोकि खाता हुआ चल रहा था दूसरे ऊँट से कहा कि तुम भी मेरी तरह खाते हुये क्यों नहीं चल रहे हो? इसके जबाब में दूसरे ऊँट ने कहा कि इतना भारी बोझ तो पीठ पर लदा है जिसकी वजह से जान तो निकली जा रही है और तुम्हें खाने की पड़ी है। तुम्हीं खाओ मैं तो जब यह बोझ उतर जायेगा तब खाऊंगा। इसी प्रकार से तमाम रास्ता तय हो गया।

बाजार जाकर व्यापारी ने उन दोनों ऊँटों पर से सामान उतार दिया और इन दोनों को एक खूंटे से बांध कर अपने बाजार के काम में लग गया।

अब पहला वाला ऊँट जोकि रास्ते भर खाता हुआ आया था वह तो बैठ कर जुगाली करने लगा जब कि वह दूसरा ऊँट जो बिल्कुल भूखा था अब भी अपना मुंह बन्द करके पश्चाताप की अग्नि में जल रहा था।

कहने का मतलब यह है कि इस दुनिया में जीते हुये जाने कितने-कितने गृहस्थी, परिवार, समाज, देश, दुनियां के बोझ हमारे ऊपर लदे रहते हैं, और इसी लकदक में हमारा जीवन बीत जाता है। मृत्यु को सामने पाकर हम फिर चाहकर भी कुछ नहीं कर पाते हैं। इसलिये सब कुछ बरबाद करके यदि हमें यात्रा का होश जगा तो क्या खाक जगा? कुछ लोगों का विचार यह रहता है कि अब तो जवानी है योग बुढ़ापे में साधेंगे अथवा कुछ लोगों को तब होश जागता है, जब मृत्यु साक्षात सामने खड़ी दिखाई देती है, तब तो फिर वही कहावत चरितार्थ होती है, "अब पछताये होत क्या, जब चिड़ियां चुग गई खेत।" मौत के हमारी देहलीज पर कदम रखने के पश्चात् तो हमारे पास सिर्फ पछतावा ही रह जाता है। इसलिए आज यदि आप अपनी मस्ती के नशें में मस्त हैं तब भी आपको कोशिश करनी चाहिये कि यह नशा टूटे, हमारा चश्मा उतरे हम गाफिल होकर बेहोशी में पड़े हैं वह नींद हमारी टूटे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अब मैं उस मुख्य शंका पर आता हूँ जिसमें कहा जाता है कि जब हमें उसी में से निकल कर उसी में ही विलीन हो जाना है। तब हम उस परमात्मा के द्वार के बाहर निकले ही क्यों थे ?

इस बारे में मैं जहाँ तक जानता हूँ, दो तरह की बातें हमारे सामने आज हैं इनमें पहला सिद्धान्त उन लोगों का है जिनकी मानसिकता भक्ति से ओत-प्रोत है। दूसरा सिद्धान्त हमारे समक्ष उन लोगों के द्वारा आया है जो स्वयं ही प्रयोग करके अनुभव प्राप्त करने में विश्वास रखते हैं।

प्रथम जिसमें श्रद्धा, भक्ति और प्रेम का समन्वय है आपके सामने रखता हूँ। श्रद्धा की भावना लिये बिना इसे समझना थोड़ा कठिन ही होगा क्योंकि प्रेम में आदमी शंका नहीं करता, प्रश्न नहीं उठाता, बस मानता है। इसलिये इसे समझते समय थोड़ा आप श्रद्धापूर्वक ही समझने की कोशिश करें।

इस मत के अनुसार जिसे सगुण या साकार का मार्ग कहते हैं इसमें हम यह मानकर चलते हैं कि शुरू में इस दुनियां की रचना करते समय परमात्मा ने हमको अपने अंश में से निकाल कर इस दुनियां में भेजा। हम इस दुनियां में कर्म करने को स्वतंत्र थे, हमने जो भी कर्म किये प्रथम जन्म के बाद उन्हीं कर्मों के बन्धन में पड़ कर आज तक हम इस संसार में भटक रहे हैं। जब तक वह चाहेगा हमें यहाँ इस सर्कस के पात्र के रूप में खेल खिलाता रहेगा अथवा वह खिलाड़ी है और हम उसके खिलौने हैं, वह परम पिता है, हम उसकी सन्तानें हैं, वह अंशी है, हम उसके अंश हैं, वह परमआत्मा है तो हम उसकी आत्माएँ हैं। हमारी बाग डोर उसके हाथ में है, जब तक वह चाहता है हम उसके हाथों कठपुतली की तरह नाचते रहते हैं, जब वह नहीं चाहता है अपने पास बुला लेता है। हाथ हमारे होते हैं कर्त्ता वह होता है, बुद्धि हमारी होती है लेकिन मन पर उसका प्रभाव रहता है, वह हमेशा हमारा ख्याल रखता है, वह हमारी परवरिश करता है।

हमारे द्वारा किये जा रहे कर्मों का वह हिसाब-किताब रखता है फिर वह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सजा सुनाता है, हमें नर्क में वही डालता है, हमें स्वर्ग में वही पहुँचाता है, किसी को अमीर बनाता है, किसी को गरीब बनाता है, किसी को राम का पार्ट करने को कहता है तो दूसरे को पुत्र के वियोग में दुखी दशरथ का तो किसी को केकयी का, किसी को सीता का। इस प्रकार सब उसी की ही माया है, उसी का ही खेल है, उसी की ही बिसात है; उसी की ही चालें हैं और उसी के ही हम मौहरे हैं और वह ही शतरंज खेल रहा है। इसलिये उसके भक्त फिर यही कहते हैं:—

जो कुछ किया सो तें किया मैं किया कछु नाय।

तो बिन मैंने कब किया, तू मोमें कब नाय॥

जब बिसात पुरानी हो जाती है या मौहरे खराब हो जाते हैं तब वह दूसरी नयी बिसात बिछाने से पहले पुरानी को प्रलय करके हटा देता है। इस प्रकार हम जो भी कर्म करते हैं वही करता है चाहे हम चोरी करें या साहूकारी, पंडित बन कर कथा बाँचें अथवा भक्त बनकर हम उसके नाम को भजें, दुष्कर्म करके हम भोग विलास में व्यस्त रहें अथवा ज्ञान ध्यान करके हम अपनी तपश्चर्या करके राज्य करें।

"जो तपेश्वरी वो राजेश्वरी"

कहने का तात्पर्य यह है, हमें कुछ नहीं करना अपनी तरफ से, जैसा वह ही जब हमसे करायेगा तो उसी के अनुरूप वैसी ही परिस्थितियाँ हमारे समक्ष खड़ी करके हमसे वैसा ही करा लेगा क्योंकि हमारे करने से होता भी तो नहीं है बार-बार हम करके थक ही तो गये हैं।

यह तो है एक मत जिसमें हम उसको एक मालिक की तरह मान कर चलते हैं और अपने आपको उसका गुलाम। जैसे भी आदेश प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमें मिलते हैं उन्हें उस मालिक का आदेश मानकर उनका पालन करना हमारा कर्त्तव्य है, हम बधें हैं उसकी डोर से जिस प्रकार प्रेम में दो और दो पाँच हो जाते हैं। ऐसा ही इस मत के अनुसार होता है लेकिन इसमें कर्म भी है, फल भी है,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और संस्कार भी है जिसकी वजह से प्रारब्ध भी है और इन सबके साथ पुरुषार्थ भी। कहने का तात्पर्य यह है—इस मत में भी वही पूरी की पूरी व्यवस्था है जो दूसरे में है लेकिन इस आधार भूत व्यवस्था पर **एक साकार परमात्मा का आवरण ढ़का हुआ है**। यह हमारे पूर्वजों ने अथवा हमारी संस्कृति के धुरंधर चिन्तकों ने इसमें जोड़ा हुआ सा लगता है, शायद इसका कारण उनकी दृष्टि में यह रहा होगा कि मनुष्य को किसी न किसी के डर से या संस्कृति के रीति-रिवाजों के अन्दर बाँधकर रखा जाय, नहीं तो मानव को यदि बिल्कुल खुला छोड़ दिया तो वह दुष्प्रवृत्तियों के प्रभाव में आकर अपना अनिष्ट तो करेगा ही दूसरे सभ्य मानवों को भी शांति से नहीं रहने देगा और मेरे देखते यह बात है भी बड़ी अच्छी लेकिन इस संसार में यहाँ के आदमियों को जितनी भी अच्छी-अच्छी बातें उसे हमारे सिद्धों ने दी, उसने उनके द्वारा बन्दर की तरह अपना सिर ही फोड़ा है। यही कारण है कि आज जितनी दुर्दशा इस मत की हुई है, अन्य किसी मत की नहीं हुई। इस मत के पतन के कुछ एक कारण और भी हैं जिनका उत्तर इसके अनुयायी नहीं दे पाते हैं :—

१. जब वह नर्क के द्वारा हमें हमारे किये की सजा दे चुका तो फिर यह दुनियाँ भी दुखों का सागर क्यों ?

२. कुछ लोग इतने बुरे होते हैं जो दूसरों को दुखी देखकर आनन्दित होते हैं। क्या इसी प्रकार परमात्मा इतना बुरा है जो हमें दुख देकर आप आनन्द में रहता है अथवा हमें सुख में देखकर हमारे सुख का चुपके-चुपके स्वयं वह आनन्द उठाता है ?

३. उसको क्या आवश्यकता आ पड़ी इस सृष्टि के निर्माण की ? अथवा वह कौन सा कार्य अप्रत्यक्ष रूप से हमारे द्वारा हमसे करा रहा है ? वह कार्य कभी पूरा भी होगा ? जब वह स्वयं इतना समर्थ है कि हमारे द्वारा कार्य करते हुये भी वह स्वयं ही कर रहा है तब उसे क्या जरूरत पड़ी हमें पैदा करने की ? वह स्वयं ही कर लेता उस तथा कथित कार्य को।

४. यदि हम यह मानें कि ज्ञान का मार्ग भी वह ही दिखा रहा है जिसमें साधक भी स्वयं परमात्मा ही हो जाता है तब क्या वह इस सृष्टि के द्वारा अपने प्रतिद्वन्दी पैदा कर रहा है ?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

५. जब वह हमारे प्रत्येक काम पर दृष्टि रखे हुये है जिन कर्मों के द्वारा हम विचलित हो जाते हैं तो क्या वह इस तमाम संसार के कर्मों को अपनी दृष्टि में रखकर संयम से रह पाता होगा ? यदि नहीं तो फिर वह कैसा सतचित्त आनन्द है ?

६. जब उसके आदेशानुसार या उसके बनाये प्रारब्ध के अनुसार ही हमारे कर्म बंधे हुये हैं तो फिर दोषी हम क्यों ?

७. इसी मत के अनुसार उस परमात्मा ने किसी को ब्राह्मण का कार्य सोंपा है किसी को शूद्र का तो क्या वह वहीं से बैठा-बैठा जातियां या वर्ग भेद पैदा कर रहा है ? तो फिर उसने शरीर के रंगों में अन्तर क्यों नहीं कर दिया ?

और भी न जाने कितने-कितने प्रश्न है जिनका जबाव या तो है नहीं या फिर बे सिर पैर का हैं जिसकी वजह से आज के वैज्ञानिक युग में हमारे इस धार्मिक मत की और भी ज्यादा छीछालेदर हो रही है। आज के मानव को आज की परिस्थितियों के अनुसार और आज की ही भाषा में जवाब चाहिये लेकिन इस उपरोक्त मत वालों ने आज तक इस विषय पर नहीं सोचा।

इसके अलावा जो दूसरे प्रकार के मत वाले हैं उसमें तस्वीर करीब-करीब बिल्कुल साफ है। वैसे सत्य क्या है ? परमात्मा ही जानता है लेकिन इनका वक्तव्य सत्य के ज्यादा नजदीक लगता है मुझे।

इनके वक्तव्य को समझने से पहले मैं चाहूँगा एक छोटी सी घटना को आपके मानस पटल पर रखना जिसकी वजह से इस सारी व्यवस्था को समझना जरा आसान होगा।

कई बार आपने देखा होगा, समुद्र के किनारे पानी की लहरों के साथ मछली भी आ जाती है। पानी तो लौट जाता है लेकिन मछली किनारे पर ही रह जाती है, तड़फड़ाती है, वहीं किनारे पर उछलती हैं, छटपटाती हैं पानी में पहुँचने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के लिये क्योंकि उसके प्राणों पर तो बिना पानी के संकट ही खड़ा हो गया है इसलिये वह मछली अब किनारे पर उछल कूद करके अपने प्राण-पण से समुद्र में पहुँचने के लिये कोशिश करती है। जब वह स्वयं की कोशिशों से फिर दोबारा समुद्र के पानी में अपनी संगी साथी माँ-बाप, भाई-बहन, मित्रों के बीच पहुँचती है तब वह कितनी आनन्दित होती है, उसके आनन्द की कोई सीमा नहीं होती। उसे उसी दिन पता चलता है कि इस सागर के पानी में कितना आनन्द है! किनारे पर जाने से पहले उसका समुद्र में जन्म हुआ था, वहीं वह बड़ी हुई थी लेकिन उसे समुद्र का पता नहीं चलता था लेकिन किनारे की छटपटाहट देखने के पश्चात पहली बार उसे अपने चारों तरफ ऊपर-नीचे समुद्र ही समुद्र दिखाई देने लगता है। अब जो भी बात वह करती है उसकी बातें उसी समुद्र से शुरू होती हैं अपने साथियों के बीच और किनारे पर से होकर लौटती हुई फिर समुद्र पर ही आकर रुकती हैं।

उसके चेहरे पर अब एक अलग ही आभा आ गई होती है किनारे के अनुभव से गुजर जाने के बाद, अब वह सभी से कहती फिरती है कि यह समुद्र कितना प्यारा है। इसमें कितना आनन्द है, दूसरी मछलियों को तो इसमें आनन्द नहीं आता और आयेगा भी कहाँ से अभी तो उन्हें समुद्र का ही पता नहीं चलता। दूसरी मछलियों के प्रश्नों के जवाब में अब वह कहती है। ठीक है अभी तुम्हें समुद्र का पता नहीं चलता। तुम जरा किनारे पर हो आओ, अपने आप इसका पता चल जावेगा। मैं तुम्हें कितना ही समझाऊँ? तुम मेरी बातों से रत्ती भर भी समझ न सकोगी, वह रास्ता बताने को भी तैयार हो जाती है, वह नाना प्रकार से उन्हें उत्साहित करती है कि जाओ अगर तुम्हें सागर का आनन्द लेना है तो पहले किनारे पर जाओ, इसके बिना कोई और रास्ता नहीं है, उस सागर को जानने का जो कि तुम्हारे हर तरफ हर समय मौजूद है।

तो ध्यान रखना, यहाँ तीन प्रकार की मछलियाँ हैं। एक तो वे जो अभी समुद्र में ही हैं अभी उन्होंने किनारा नहीं देखा है। दूसरे प्रकार की वे हैं जो किनारा देखकर वापिस लौट आयी हैं फिर से समुद्र में और तीसरी प्रकार की वे मछलियाँ हैं जो अभी किनारे पर हैं, दुखः उठा रही हैं, प्राणों के स्तर पर और समुद्र में पहुँचने के लिये कोशिश में लगी हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस घटना के चित्रण के बाद मैं दूसरे प्रकार के मत पर आता हूँ । जिसके मतानुसार परमात्मा को कोई साकार रूप नहीं दिया गया है। बल्कि उसको तो निराकार कहा गया है। लेकिन बिना किसी स्वरूप के उसे कैसे जाने ? इसके उत्तर में उसकी पहचान करने के लिए वे कहते हैं परमात्मा ऐसा नहीं है कि वह विशेष शक्ति या विशेष स्थिति वाली कोई विशेष आत्मा हो बल्कि जिसे हम परमात्मा कहते है वह तो **परम आत्माओं का समूह है** ऐसा समूह जिसमें असंख्य आत्मायें मौजूद हैं। यहाँ असंख्य का अर्थ भी समझ लें । असंख्य का अर्थ होता है असंख्य में से यदि असंख्य भी निकाल दें तो भी असंख्य ही बचता है यानि वह हमारी समझ और हमारे गणित के पार असीमित है ।

इस ब्रह्माण्ड में ठीक समुद्र की ही तरह से तीन प्रकार की आत्मायें हैं। जो आत्मायें अभी उन असीमित आत्माओं के समूह से बाहर आकर इस संसार में नहीं जन्मी हैं । उन्हें हम **"निगोद आत्माओं"** के नाम से जानते है । दूसरे प्रकार की वे आत्मायें हैं जो इस संसार को देखकर, जानकर अथवा संसार के अनुभवों से गुजर कर फिर वापिस उसी समूह में पहुँच गयी हैं। उस परम् सत्ता का आनन्द उठाने के लिये इस प्रकार दूसरे प्रकार की आत्माओं को हम **मुक्त आत्माओं** के नाम से जानते हैं । तीसरे प्रकार की आत्मायें वे आत्मायें हैं जो अभी इस संसार में है, विभिन्न रूपों में, विभिन्न स्थितियों में इस संसार रूपी किनारे का अनुभव कर रही हैं इस तीसरे प्रकार की आत्माओं को हम **सासांरिक आत्मायें** कहते हैं ।

अब जरा इस व्यवस्था के अन्तर्गत अपने प्रश्नों को गौर करें :—

हम क्यों निकले ? उस परम् सत्ता से बाहर । हमारे प्रथम जन्म के समय हमारा संस्कार कहाँ से हमें मिला और हमने क्या भोगा ? किसने हमें यहाँ भेजा और फिर कौन हमें फिर वहीं उसमें विलीन होने को बुला रहा है ।

हम स्वयं आये हैं इस संसार में हमें किसी ने नहीं भेजा बस जरा सा उत्साह हमें मुक्त आत्माओं ने हमारे भले के लिये दिलाया है, और संस्कारों ने नाम पर भी हमारे पास इस संसार में जन्म लेने की उत्कंठा रूपी इच्छा शक्ति ही थी। प्रथम जन्म हमारा बिल्कुल जड़ स्वरूप ही था जैसे पहाड़ । हजारों हजार साल तक न

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तो हमने ठंड भोगी और न ही गर्मी, न हमने पिता की मृत्यु का दुखः झेला और न ही अपने पुत्र जन्म का उत्सव, न तो हम किसी की इज्जत करनी पड़ी और न ही हमने बेइज्जती भोगी। आप कह सकते हैं, यह भी कोई जन्म हुआ, इसको कैसे मानें कि वहाँ भी कोई आत्मा होती है उस पहाड़ के अन्दर ? अथवा उस पहाड़ की मृत्यु भी होती होगी कभी। लेकिन मेरे देखते प्रत्येक पहाड़ का जन्म होता है। प्रत्येक की मृत्यु भी होती है, बस जरा आप मेरे नजरिये से देखने भर का कष्ट करें।

आप अपने घर बनाने के लिये पहाड़ से पत्थर लाकर उसे अपने घर की दीवाल में लगा देते हैं। वह पच्चीस वर्ष में ही बदरंग हो जाता है, पचास साल में कमजोर हो जाता है और सौ साल में राख। ठीक इसी प्रकार से पेड़ में जो लकड़ी सौ साल तक रह सकती थी लेकिन आपके घर आने के पश्चात् यदि रंग रोगन से रक्षा न की जावे तो वह दस साल में ही बेकार हो जाती है। जब तक वह पत्थर उस पहाड़ का अंग था वहाँ व्यवस्था थी उसे जिन्दा रखने की उस पहाड़ के द्वारा लेकिन वहाँ से निकलने के पश्चात् उसका क्रम पहाड़ की जीवन धारा से टूट गया, बस इसलिये उसकी मृत्यु तो उसी समय हो गयी थी लेकिन, हमें पता चला सौ साल बाद। आज तो यह भी पता चल गया है। पहाड़ बढ़ते भी हैं और घटते भी हैं। जब मैं पढ़ता था छोटी क्लासों में तब एवरेस्ट की ऊचाई 29002 फुट बताई जाती थी, अब वह 30-35 फीट बढ़ गयी। किसी पहाड़ की चट्टान मजबूत होती जाती है, जबकि किसी दूसरे पहाड़ का क्षरण भी होता जाता है। लेकिन काफी लम्बा समय लगने के कारण हमें इस प्रक्रिया का शीघ्र पता नहीं चलता और चूंकि वह बहुत लम्बे समय में परिवर्तित होता है, इसलिए उसे हम जड़ कहने की भूल कर लेते हैं क्योंकि हमारी उम्र उसके मुकाबले बहुत थोड़ी है, हमने जड़ और चैतन्य का पैमाना अपनी उम्र के हिसाब से बनाया है। मैंने तो सुना है हमारे पास ही की बारैठा की खदानों में काफी गहराई तक खुदाई करते समय मजदूरों को ऐसा पत्थर भी मिलता है जिसे पहाड़ में से निकालने के पश्चात् भी उसमें थोड़ी देर तक थिरकन होती है, मजदूर उसके नरम व हिलते रहने की वजह से उसे पहाड़ का दिल कहते हैं, बाद में वह आम पत्थरों जैसा ही हो जाता है। कहने का मतलब सिर्फ इतना ही है कि पहाड़ भी जीवधारी होते हैं लेकिन उनमें क्रियाशीलता की गति इतनी धीमी होती है कि हम उसे जीवित ही नहीं मानते।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस संसार में आकर जीव जड़ से अपनी यात्रा शुरू करता है और चैतन्य पर आकर उसकी यात्रा समाप्त हो जाती है। **शुरू में हमारे पास संस्कार के खाते में भी केवल जन्म लेने की लालसा ही थी,** जिसकी वजह से हम पहले पहाड़ बने। फिर इस संसार में आकर चैतन्य होने की या क्रियाशील होने की हम में कामना जगी, इसी कामना ने कर्म बनकर फिर आगे की शृंखला में कड़ी जोड़ी, पहले वह जरा ज्यादा जड़ था अब वह थोड़ा कम जड़ बना पेड़ बनकर। फिर उसके बाद उसने चैतन्य की ओर और प्रगति की वह ऐसा पेड़ बना जो साल में दो चार फुट इधर-उधर सरक कर यात्रा कर लेता है (इस प्रकार के पेड़ों की जानकारी अब आम है) उसके बाद वह मगरमच्छ के प्रकार का जन्तु बना होगा। जन्तुओं के बाद जानवर बना जो उसके मुकाबले ज्यादा चैतन्य था। जानवरों के बाद वह पक्षी बना और फिर तो उसके कर्मों की शृंखला बनती गयी पिछले कुछ मिटते गये, नये कुछ बनते गये। आत्मा के जन्म पर जन्म होते गये और वह बढ़ती गयी अपने पथ पर। हमारे यहाँ कहावत है, **मनुष्य का शरीर मिलता है चौरासी लाख यौनियों को भोगकर।** इतने गहरे में जाकर ही हम इस बात को समझ सकते हैं। इससे पहले आप किस तरह समझेंगे? बहुत से भिन्न-भिन्न अवस्थाओं व मानसिकताओं वाले मनुष्यों को देखकर इस कथन की पुष्टि भी होती है। प्रकृति में जितने भी तरह के पशु-पक्षी, जानवर, जीव, जन्तु शाकाहारी अथवा माँसाहारी पाये जाते हैं। उनके स्वभाव की खास-खास बातें इस मानव में भी पायी जाती हैं। थोड़े से बारीक अध्ययन के बाद हम इसे समझ भी सकते हैं। कुछ मोटी बातें आपके समक्ष रखने की कोशिश कर रहा हूँ लेकिन इनको समझते समय अगर आप प्रमाण माँगने लगेंगे तो मैं असफल ही रहूँगा। क्योंकि इस प्रकार की बातों को एक ही मानव में सिद्ध करना असम्भव ही होगा। किसी एक का कोई एक अनुभव अभी ताजा है और जबकि किसी दूसरे का कोई दूसरा। इसको समझते हुये यह भूल नहीं करनी है कि मानव शरीर धारण करने से पहले एक क्रमबद्ध गिनती है। जिसमें पहले हाथी बनेगा, उसके बाद बन्दर फिर आदमी। नहीं, अगर इसको इस तरह से हमने समझा तो समझो हमसे चूक हो गयी। एक जीव के मरते समय उसके पिछले तमाम जन्मों के अनुभवों के बाद उसकी जो आकांक्षा बन गयी थी तथा काल और परिस्थितियों के अनुसार उसने अपने अगले जन्म के लिये वही योनि अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा प्राप्त की इसलिये प्रत्येक स्त्री-पुरुष का एक जैसा स्वभाव नहीं हो सकता। बहुत से

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसे भी हैं जो बार-बार न जाने कितने ही जन्मों से लगातार मानव देह प्राप्त किये जा रहे हैं। उनके ताजा अनुभव आदमियों के से होंगे अथवा वह आम आदमियों से ज्यादा कुशाग्र बुद्धि वाला हमको लगेगा बहुत से इसके विपरीत भी हो सकते हैं इसमें कोई संशय नहीं है।

किन्ही पति-पत्नी में ऐसा अगाध प्रेम होता है कि एक की मृत्यु के पश्चात् दूसरा भी ज्यादा दिन नहीं जी पाता वह आदत या अगाध प्रेम उन्हें विरासत में कहाँ से मिला होगा ? शायद वहाँ से जब वे पिछले जन्मों की योनि में जिसमें वे सारस बने होंगे। मोर की वह मोहक अदा, जिसके द्वारा नाच-नाच कर वह मोरनी को रिझाता है। आजकल बहुत से लड़के लड़कियों को रिझाने के लिये एक्टर बने फिरते हैं। कुत्ते जैसी स्वामिभक्तिता, वफादारी, कबूतर की गुफ्तगू, बन्दर जैसा नटखट पन, रीछ जैसी कामुकता, साँप जैसा वशीकरण, गिरगिट जैसा रंग बदलना, बिल्ली जैसा खाना और गुर्राना, कौवे जैसी खामखाह की काँव-काँव, गधा जैसा लद्दूपन, कोयल जैसी कुहुकता, गैंडा जैसा मस्तानापन, चीते जैसी फुर्ती, बाज जैसा शिकारीपन, लोमड़ी जैसी चालाकी, पहाड़ जैसी चट्टानता-दृढ़ता, सियार जैसा डरपोकपन, खरगोश जैसी मुलायमी, हिरण जैसा भोलापन आदि-आदि। हमें अनन्य मानवों के चित्त में देखने को मिलता है।

इनसब उदाहरणों से ऐसा लगता है कि या तो ये तमाम जानवर अपने पिछले जन्मों में आदमी रहे हैं या ये तमाम जानवर अपने तमाम गुणों के साथ इस मानव देह में हैं। इन दोनों में दूसरी बात ज्यादा वजनदार दिखाई देती है, क्योंकि इन जानवरों की जो जो खासियतें इनके स्वभाव में पायी जाती हैं मानव की सन्तानों में देखने को मिलती है। जबकि मानव की खासियत, उसका जैसा चैतन्य मस्तिष्क अन्य किसी जानवर में दिखाई नहीं देता।

आज यदि हम तैरना सीख जाते हैं तो यह तो आप भी जानते ही हैं कि हम भले ही फिर 20 साल तक एक दिन के लिए भी नहीं तैरें लेकिन हम 20 साल तो क्या जिन्दगी भर में फिर कभी तैरना नहीं भूल पाते। इन सब बातों को लिखकर मैं केवल यह बताना चाहता हूँ कि हमारे अपने प्रथम जन्म के समय हमारे पास एक ही संस्कार था इस पृथ्वी पर जन्म लेने का वह संस्कार अपने अन्दर कोई स्वरूप नहीं लिये था और न कोई विशेष चैतन्यता की आकांक्षा ही उसके अन्दर थी। इसी वजह से वह जड़ स्वरूप इस पृथ्वी पर आया होगा। बाद में जैसी-जैसी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लालसा, आकांक्षा इस पृथ्वी पर रची-बची माया के अनुरूप उसकी बनी होगी, वैसे वैसे ही संस्कार उसके चित्त पर जमे होंगे तब वह जन्म दर जन्म लेता हुआ मानव बना होगा। इस तरह हम देखते हैं शुरू से ही न तो हम जबरदस्ती किसी के द्वारा यहां भेजे गये और यहां आकर भी अपनी आकांक्षा, अपनी लालसा को स्वयं ही भोग रहे हैं और इन सबको भोगने के पश्चात् हम स्वयं ही उस परम आत्माओं के सागर में विलीन होना चाहते हैं। कोई जबरन हमें यहां से नहीं भेज सकता। जब हम यहाँ की तमाम क्रियाओं फलों, सुखों एवं ऐश्वर्यों में उनकी व्यवस्था देख-देख लेते हैं। तब हम स्वयं ही यहाँ से जाना चाहते हैं और चले भी जाते हैं, उस परम समूह में विलीन होने के लिए।

दूसरा प्रश्न है जब नर्क एवं स्वर्ग के द्वारा हमें हमारे कर्मों का फल दिया जा चुका है तब फिर यहाँ इस दुनियाँ में भी इतना भेदभाव क्यों मिलता है हमें जन्म लेने के पश्चात् ? और फिर सारी जिन्दगी हम यहाँ आकर नर्क ही तो भोगते हैं।

यह प्रश्न ही वहाँ उठता है जहाँ कोई साकार भगवान हो जबकि इस मत के अनुसार तो हमारा शरीर जब मृत्यु को प्राप्त करता है उसी समय हम स्थूल शरीर को त्याग कर सूक्ष्म शरीर धारण करके इस दुनियाँ से बाहर हो जाते हैं। तब हम चित्त के स्तर पर इधर से उधर विचरण करते रहते हैं हमारे चित्त पर उस समय जिन-जिन संस्कारों का बोझ होता है, वे संस्कार ही हमें दोबारा जन्म लेने के लिए अपने स्तर के अनुसार बेचैन कर देते हैं क्योंकि बिना स्थूल शरीर धारण किये कोई भी संस्कार भुगत ही नहीं सकता। यदि बहुत गहरे में विचार करके हम देखें तो हम पायेंगे कि हमारी कर्मों में लिप्तता ही हमें मजबूर करती है कि हम यथा सम्भव अपने कर्मों के अनुसार बनी इच्छा शक्ति के द्वारा जल्दी से जल्दी किसी न किसी गर्भ में समा जावें।

जितनी हमारी मानसिक स्थिरता (इच्छा शक्ति) कमजोर होगी उतनी ही जल्दी हम स्वयं ही उतावलेपन के साथ किसी न किसी गर्भ में उतर जाते हैं। ध्यान रखना जिसका चित्त दूसरे अधिकारों के हनन, दूसरों को धोखा देने के प्रभाव या अन्य किसी प्रकार के निचले स्तर के विचारों से ग्रस्त है उसका चित्त

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुण्ठाग्रस्त होगा जिसकी वजह से उसकी आत्मिक चेतना क्षीण रूप से जाग्रत होगी। उसकी पलट उसकी इच्छा शक्ति पर पड़ती है इस प्रकार इस श्रँखलाबद्ध प्रक्रिया के द्वारा हम दुर्बल इच्छा शक्ति के कारण ही अपने कर्मानुसार पिछले कर्मों को भोगने के लिए नया जन्म पाते हैं। इसके ठीक विपरीत जिनकी इच्छा शक्ति प्रबल होती है वे आत्मायें वहाँ इन्तजार करती हैं उचित समय के आने तक का जिससे कि उनके जन्म के समय ऐसे नक्षत्र उपस्थित हों जिससे वे होने वाले जन्म को स्वर्ग की तरह से भोगें।

इसलिए ध्यान रहे यहाँ जितनी भी असमानता है इस दुनिया में हमारे अपने ही कर्मों के कारण है। यहाँ इस संसार के अलावा न तो कहीं स्वर्ग है और न ही कोई नर्क, न कोई हमें सजा सुनाता है और न ही कोई राजगद्दी देकर हमें यहाँ भेजता है। **हमारी अपनी ही कमजोरी हमारा अपना ही अन्धापन हमारे दुखों का कारण बनता है।** दूसरे शब्दों में जिन्दगी भर जो हम कार्य करते हैं वैसी ही हमारी मानसिकता आगे के भविष्य में हमें भुगतने के लिए पैदा हो जाती है। **"अन्तमता सो गता"।**

अन्य जितने भी प्रश्न हमारे समक्ष उठते हैं इन सबका तर्क संगत उत्तर इस दूसरे मत के अनुसार मिल जाता है क्योंकि इन्होंने परमात्मा को असीमित रखा है, साकार बनाकर सीमित दायरे में नहीं रखा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक ही प्रकार की चेतना हमारे सभी के भीतर है अगर फर्क है तो ऊपर पड़ी धूल का जिसने कि हमारी चेतना को ढाँप रखा है। किसी के कर्मों की धूल ज्यादा है तो किसी की कम। हमें हमारी चेतना का अनुभव ही पहली बार तब होता है जब हम इस धूल को हटाकर देखने में समर्थ होते हैं जब तक हमारी चेतना हमारे कुत्सित कर्मों के द्वारा दबी पड़ी है हमें कर्मों के थपेड़ों को सहन करते रहना ही होगा लेकिन जिस दिन जरा सी भी झलक हमें उसकी मिल जाती है, हमारा यह मानव जीवन सफल हो जाता है क्योंकि उसी दिन हमें पता चलता है चेतना के स्तर पर हमारे सभी के भीतर एक ही तत्व विराजमान है। कहीं कोई रत्ती भर फर्क नहीं है जो हमारे भीतर है वह तो हमारे पास है ही जो दूसरे के भीतर है वह भी हमारा ही है अथवा दूसरे शब्दों में हम और वह दूसरा बाहरी शाखाओं के स्तर पर तो दो दिखाई देते हैं लेकिन हम सभी में जो शक्ति निरन्तर बह रही है उसका स्त्रोत तो एक ही है। यदि हम अनजाने में दूसरे का नुकसान करते हैं तो वह गहरे में जाकर हमारा स्वयं का ही नुकसान है जो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लोग अपने भीतर के ब्रह्म को जान लेते हैं वह इस ब्रह्माण्ड की रूपरेखा भी ठीक उसी समय जान ही जाते हैं कि **यह संसार ही ब्रह्म स्वरूप है। इसमें मैं और तू कहीं नहीं है। बस वह ही मौजूद है जब मेरे अन्दर का वह मेरा है तो सबके अन्दर का वह भी तो मेरा ही है। इतना जानकर कि सबका सब अपना ही है, तब कहीं कोई अपनी ही चीज को चुराता है अथवा कहीं कोई अपने को ही दुख देना चाहेगा। ऐसी सार्वभौमिकता जब हमारे भीतर जागृत हो जाती है तब ही हम समझ पाते हैं "वसुधैव कुटुम्बकम्" का आधार।**

इतना समझ पाने के बाद हमारा जीवन सारा का सारा प्रार्थनामय ही हो जाता है और यही है हमारे द्वारा की जाने वाली प्रार्थना का मर्म। इस प्रार्थना को जानकर ही हमारे मन में उस परम सत्ता में विलीन होने की लालसा जगती है।

इस प्रकार की प्रार्थना के द्वारा ही हम मुक्ति को प्राप्त होते हैं, इसी प्रार्थना के द्वारा ही हम अपने बीज को मिटाने की क्षमता जागृत कर सकते हैं। पतंजलि भी जिस **"निबीजस्य"** स्थिति की बात कर रहे हैं। वह भी इस प्रार्थना के द्वारा ही प्राप्त होती है। इसी के द्वारा हम अपनी तमाम तामसी, राजसी एवं सात्विकी वृत्तियों पर विजय प्राप्त करते हैं। मायाजाल से हम अपना पीछा छुड़ा लेते हैं। और अपने बूँद स्वरूप ब्रह्म को उस सागर रूपी परमब्रह्म में एक मुक्त आत्मा के रूप में हम उसे उस परम-आत्माओं के समूह में विलीन करके परमात्मा ही तो हो जाते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधकों के हितार्थ कुछ खास बातें

1. साधक का ध्येय हमेशा अपनी आत्मा को सिद्धियाँ रूपी विजातीय धूल से बचाते हुये अपनी साधना में साधनारत रहना चाहिये, अन्यथा साधक के अपने सीधे सरल पथ पर से हटकर पथ भ्रष्ट हो जाने की संभावनायें ज्यादा हो जाती हैं।

जिस प्रकार कोई राहगीर राजपथ से भटक कर साथ के जंगलों की हरियाली एवं प्रकृति की छटाओं में खोकर उधर मुड़ जाता है जिसके कारण से वह अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच पाता है, ठीक इसी प्रकार साधक सिद्धियों के फेर में फँसकर अपने मार्ग से च्युत होकर आधा अधूरा ही रह जाता है।

भले ही वे सिद्धियाँ सात्विकी गुणों से ओत-प्रोत वृत्तियों वाली हों अथवा वे भले ही मानव मात्र के लिए मानव कल्याण वाली हों, क्योंकि उनके उपयोग के बाद उनके द्वारा फल प्राप्त हो जाने के कारण से साधक के मन में अहम् भाव पैदा हो ही जाता है जिसके कारण से साधक की साधना में व्यवधान आ जाता है।

2. साधक को जहाँ तक हो सके अपने जीवन यापन के लिये इस प्रकार का व्यवसाय चुनना चाहिये या अपना जीवन यापन इस प्रकार से करना चाहिये। जिसके द्वारा मन शान्त एवं निर्मल बना रहे, उसे अपने व्यक्तिगत खर्चों, अपनी लतों पर तथा अपने अहम् पर संयम रखना चाहिये जिससे बेफिजूल की बातों से साधक यथा सम्भव बचा रहे।

3. अपने व्यवहार में झूठ बोलने वाले साधक जब वे उस संक्रामक काल के नजदीक होते हैं जिसमें वे अपने प्राणों से खेलते हैं, उस समय उनके समक्ष मानसिक रूप से इतनी भारी परेशानियाँ आती हैं कि उसे अपने चित्त की उन विसंगतियों को सम्भालना बड़ा दुष्कर हो जाता है। जिसके कारण से कभी-कभी साधक के चित्र पर इतना बुरा प्रभाव पड़ता है जिसमें उसका यह लोक तो खराब हो ही जाता है आने वाले जन्मों में भी वह योग भ्रष्ट होकर पथ भ्रमित हो सकता है। इस अवस्था को भुक्त भोगी से ज्यादा कोई नहीं जान सकता है।

4. सुषमणा नाड़ी के अन्दर तीन नाड़ियाँ और भी होती हैं जब साधक के प्राण इड़ा-पिंघला से निकलकर सुषमणा में प्रविष्ट होने को होते हैं तब इन तीनों नाड़ियों की जानकारी होना आवश्यक है। ये तीन नाड़ियाँ जिनमें पहली वज्र नाड़ी के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम से दूसरी चित्रणी नाड़ी के नाम से तथा तीसरी ब्रह्म नाड़ी के नाम से जानी जाती है।

यदि कोई साधक तामसी वृत्तियों से प्रभावित है तो उसका प्रवेश वज्र नाड़ी के द्वारा होता है। जिसके कारण से उसे उस समय बड़े भयावह दृश्यों का सामना करना पड़ता है या दूसरे शब्दों में उस साधक का मार्ग आसुरी शक्तियों की तरफ मुड़ जाता है, जबकि राजसी वृत्ति के साधक के प्राण चित्रणी नाड़ी में से होकर ऊपर चढ़ते हैं तो उसे उस समय बड़े ऐश्वर्यपूर्ण राज प्रासाद, रास रंग, बड़े मोहक दृश्य, बड़ी मोहक सुगन्ध, बड़ी सुन्दर-सुन्दर अपसरायें या अन्य विभिन्न प्रकार के विमानों से उनकी यात्रायें होती रहती हैं ये लक्षण देवताओं की शक्ति की तपफ मुड़ने के हैं। इन दोनों के अलावा एक तीसरी अवस्था इन दोनों से ऊँची और है वह उन साधकों के लिए है जो सात्विकी वृत्ति वाले हैं उस समय उनके प्राण ब्रह्म नाड़ी में से होकर जाते हैं इस कारण से वह सुर या आसुरी शक्तियों के झेमेले में न पड़कर सीधा अपने स्वयं के ब्रह्म की ओर अग्रसर होकर अपनी स्वयं की चेतना की शक्ति का विकास करने लगता है जिसकी वजह से वह सदा उत्तरोत्तर उच्च अवस्था को प्राप्त करता रहता है और मुक्त हो जाता है।

जैसे राम के पास आध्यात्मिक शक्तियाँ थी वैसे ही रावण के पास भी अलौकिक आध्यात्मिक शक्तियाँ थीं। लेकिन राम और रावण में मौलिक भेद उनके सात्विकी और तामसी गुणों से प्रभावित वृत्तियों का ही है। इसलिये साधक को हमेशा ही अपने चित्त पर सत्व का संयम साधना चाहिये।

5. अपने मन में बिना किसी ऊँच नीच की परवाह किये आध्यात्मिक सत्संग का उसे जहाँ भी वह उपलब्ध हो बिना किसी तर्क कुतर्क के अपने विवेक से ग्रहण करें।

6. गृहस्थ साधकों को योग में कठिन तपस्याओं से जहाँ तक हो सके बचना चाहिये और हठ योग के बजाय सहज योग को ही अपनाना चाहिये। यदि फिर भी कुछ खास अनुभव प्राप्त करने के लिये ही यदि कोई साधक अपनी साधना के दौरान लम्बे उपवास रखे या अन्य कोई कष्ट प्रद रास्ता अपनाये तो उसे अपनी सेहत का ध्यान रखकर ही वह रास्ता अपनाना चाहिये। ऐसी अवस्था में वह अपने श्रम व्यय करने वाले कार्यों से हर सम्भव बचे तथा अपनी इच्छा शक्ति को अप्रत्याशित रूप से दृढ़ रखें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

7. साधक को अपना शरीर स्वस्थ रखना ही चाहिये क्योंकि स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ चित्त का निमंत्रण कर सकता है। भले ही उसे अपने आपको स्वस्थ बनाने के लिए इस संसार में व्याप्त किसी भी चिकित्सा पद्धति को ही क्यों न अपनाना पड़े, वह चाहे आयुर्वेद हो, यूनानी हो, होम्योपैथी हो, चीनी पद्धति एक्युपंक्चर हो, अँग्रेजी पद्धति ऐलोपैथी हो अथवा योगासनों के द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ रखने का तरीका हो कहने का तात्पर्य है साधक का शरीर सर्वथा रोग मुक्त होना चाहिये।

8. साधक को अपनी साधना किसी विशेष या शीघ्र फल की आकांक्षा से रहित होकर नियमित रूप से तथा निश्चित समय पर नित्य प्रति ही करनी चाहिये, इससे साधना अति शीघ्र ही अपनी पायदानों पर पहुँचती है।

9. असली एवं वास्तविक समाधि से पहले कई बार ऐसा लगता है जैसेकि उन्हें दूसरे-दूसरे लोकों के दर्शन हो रहे हैं या अद्भुत प्रकाश की किरणें दिखाई दे रही हैं या वह विभिन्न रंगीन दृश्यों में से होकर गुजर रहा है ये सभी स्थितियाँ साधारण साधक से तो उच्च हैं। लेकिन यह अवस्था उस चरम अवस्था से तो नीची ही है जिसमें साधक के सारे के सारे प्राण बड़ी तेजी के साथ खिंच कर तथा बड़े शोर के साथ उसके शरीर में से बाहर निकल जाते हैं। केवल उसी अवस्था में साधक को असली समाधि समझनी चाहिये, तथा बार-बार उस अवस्था की परख करके ही सन्तुष्ट होना चाहिये।

10. जिस समय प्राण इड़ा-पिंघला में से निकलकर सुषमणा में आते हैं उस समय साधक को अपनी मृत्यु होने का भय व्याप्त हो सकता है क्योंकि उस समय उसकेप्राण ही तो इस स्थूल से बाहर निकलते हैं लेकिन धैर्य के साथ तथा दृढ़ता के साथ अपनी साधना में साधक को अपने इष्ट का स्मरण करके लगा रहना चाहिये सफलता अवश्य ही मिलेगी। इसलिऐ साधक अपनी साधना में किसी भी प्रकार के भय से भयग्रस्त न होवें। ८ 30 जनवरी 1983

समाप्त

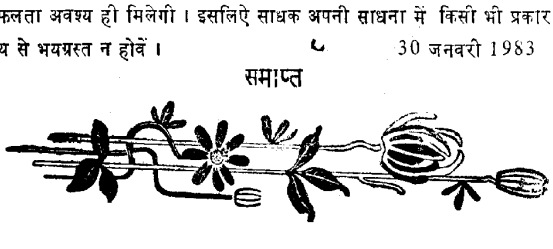

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

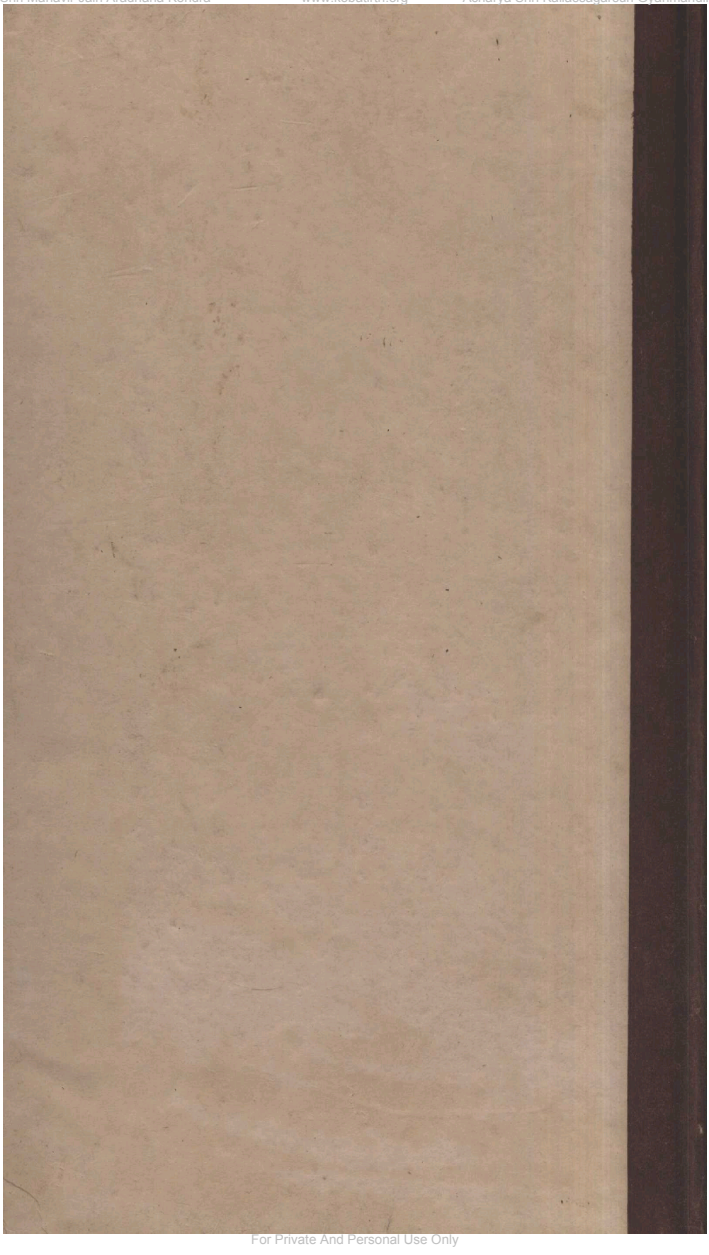

For Private And Personal Use Only